CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

3445
12.3
3445

अष्टात्मक बोध अधिकार

(सुत्र)

प्रणेता—
परमपूज्य आत्मार्थी सत्पुरुष
श्रीमद् ध्यानविजयजी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्ग संख्या................ प्राप्ति-संख्या....................

ग्रन्थ-कार्ड

श्री गणेश वर्णी दि० जैन (शोध) संस्थान

ग्रन्थागार

नरिया, वाराणसी-५

ग्रन्थ नाम अध्यात्मक बोध अधिकार

लेखक श्रीमद् ध्यान ...जी विजयजी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ॐ

अष्टात्मक बोध अधिकार

[सुत्र]

प्रणेता —
परमपूज्य आत्मार्थी सत्पुरुष
श्रीमद् ध्यानविजय जी

प्रतियाँ १०००

आश्विनपद, वीर नि० सं० २४८३

मूल्य ५) रु०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकाशक
श्री कुन्दकुन्द जैन स्वाध्याय मन्दिर,
मु० पो० उज्जैन (म० प्र०)

[सर्वाधिकार प्रकाशक के आधीन]

मूल्य ५) रु०

[ओक्टूबर, १९५७]

मुद्रक—
पं० परमेष्ठीदास जैन
जैनेन्द्र प्रेस, ललितपुर ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अष्टात्मक बोध अधिकार

[सुत्र]

श्रीमद् ध्यानविजय जी प्रणीत

卐

प्रभु-प्रार्थना

अहो प्रभु ! तुं पूर्ण स्वरुप ।
स्मरुं ते पद हुं सुख रुप ॥अहो०॥१॥

पुर्णात्मज्ञ पदे तुं स्थित ।
सर्वज्ञ पदथी तुं अलंकृत ॥२॥

तुज पदथी स्फुर्यो स्व ख्याल ।
छुं ज्ञाता स्व-परनो त्रीकाल ॥३॥

ते निज पदमां थईने एकतार ।
पुर्णात्मक थऊं, सर्व प्रकार ॥४॥

ए उर्मी पोषुं सुखकार ।
अप्रहित भावे विश्वाधार ॥५॥

अंतिम याचुं हे भगवंत !
सुधर्म रहो सदा जयवंत ॥६॥

कही एम तुजने- हे कृपाळ !
वंदुं तुज पद हुं त्रीकाळ ॥७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्यमय जीवन थवा ग्रंथकारनो अंतर

(उद्‌गार)

卐

सत्यना शोधक बनो, सत्यना पोषक बनो ।
सत्यना धारक बनो, सत्यना प्रेरक बनो ॥
सत्यना साधक बनो, सत्यना बोधक बनो ।
सत्यमय जीवन थवा, सत्यना सेवक बनो ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

❋ निवेदन ❋

आ पवित्र भारतक्षेत्रना विषे अनेक एवा आत्मज्ञ पुरुषो स्वहीतनी सिद्धी करी स्वरुपस्थ दशाने पाम्या छे। अने तेज हेतुथी एटले तेमना पवित्र चरणोथी स्पर्शायेली एवी आ भुमीने पण तिर्थ-सम क्षेत्र होवाना एवा गौरव भर्या नामथी संबोधवामां आवी छे। भगवान महावीरना निर्वाण बाद आवा स्थितिप्रज्ञ पुरुषोनी संख्या उत्तरोत्तर घटती ज रही छे। तो पण अल्पांशे पण तेनी अस्खलित विद्यमानता आवा दुषम काळना विषे पण टकेली होवानुं तेवा आत्मार्थी जीवने पोताना गुण विशेष परिणमनना बळे जोवामां आवे छे। अने ए पण सर्व कोई आत्मार्थी जीवो माटे परम हर्षनुं कारण छे।

हुं जे विभुतीने आत्मज्ञ पुरुष तरीके ओळखुं छुं, तेओश्रीनुं नाम श्रीमद् ध्यानविजय जी छे। तेओश्रीना प्रत्यक्ष सुयोगे मारा जीवनमां शुं शुं परिवर्तन थयुं ? अने तेओश्रीना कया गुणोना लीधे हुं तेओश्रीने सत्पुरुषना विरुदथी विरुदावुं छुं, ते सुज्ञ वांचकोने मारा आ निवेना लेखथी समजाशे।

प्रातःस्मरणीय परमपुज्य सद्गुरुदेव श्रीमद् ध्यानविजयजीनो प्रथम परिचय मने संवत २००८ ना श्रावणवद अमावसे थयो। महापुण्यना उदये ते धन्य दिवसे मने अपुर्व वाणीनो सुयोग संप्राप्त थयो। अमावसनी ते काळी रात्रीए ते ज्ञानरुपी दिव्य प्रकाशमय वाणीए अनादिना अज्ञान-तिमीरने दुर करवा अपुर्व मार्गदर्शन आप्यु। ते पहेलां मारुं जीवन वर्तमान दुषित शिक्षणप्रणालीथी आध्या-त्मिक तथा धार्मिक दृष्टीथी लगभग लक्ष्य-विहीन हतुं। जिनाशय सत् श्रुतनी उत्कृष्टतानुं अने तेना धारक पुरुषनुं कंइ भान ज न हतुं, अने ते तरफ खास रुची पण न हती। कुलगत संस्कृतिथी प्रेराई मात्र जिनदर्शन अने साधारण व्रत नियम करवा पुरतो ज,लक्ष हतो जगतकर्ता ईश्वर होवानी दृढ मान्यता हती। कोई एक महान शक्ति वीना आ विश्व-लीला केम चाली शके? ते प्रश्न आ जीवने दृढ मान्यता रुपे वर्तती हतो। वर्तमान विज्ञानीओनी सिद्धीओ जोई तेमना प्रत्ये सहज बहुमान थतुं। कोई इच्छीत वस्तुनी प्राप्ती माटे कुदेवादीनी सेवनामां पण जीवन प्रेराई अंध श्रद्धाना पोषक बनतुं।

सद्भाग्ये पुज्यश्रीनो सुयोग अने तेमना अपुर्व आत्मार्थ गुणप्रेरक वचनोनुं पान थतां उपरोक्त सर्व रुढीगत मान्यताओ पर दृढ प्रहार थयो। जीवन विकासना क्रमनुं कईक भान आव्युं। पुज्यश्रीनी सौम्य-मुखमुद्रा, निखालसता, निर्दोषता, उत्तम काव्यशक्ति, अति संक्षेपमां जिनाशय सत्श्रुतना सुक्ष्म

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रहस्यार्थ भावोनुं प्रतिपादन करवानी शैलीओ मने आश्चर्यचकित करी मुक्यो। अध्यात्मरसथी ओत-प्रोत स्वानुभवे रचेला आपश्रीना पदोनुं आपश्रीना मुखे श्रवण थतां मारा हृदयना तार झणझणी उठ्या। अने तथा प्रकारना प्रत्यक्ष योगथी दृष्टीगोचर थयेला एवा आ परम गुणोत्कृष्ट जीवननी मारा हृदय-पट पर उंडी अने अमीट छाप पडी।

पुज्यश्रीनी परम कृपाओ मने तेमना रचेला ग्रंथोनुं बालबोध अनुवाद करवानुं परम सौभाग्य संप्राप्त थयुं। ते परम पुनीत ग्रंथोनुं अनुवाद करतां पाने पाने अने शब्दे शब्दे शुद्ध चैतन्यघन स्व-भावनो महिमा ज्ञान सुधारसथी ओतप्रोत निरुपण, अने स्वानुभवरसथी छलोछल चैतन्यविलासना अपुर्व महात्म्यनो शंखनाद संभळायो अने ते साथे तेमना विर्यरुचीनुं वलण शुद्धात्म सन्मुख होवाना अप्रतिहत वेगनुं अने ते अनुसार साध्यनी सिद्धी करवाना परम एवा ते स्वरुप साधकना विर्य उल्लासनुं दिग्दर्शन तथारुप ग्रंथना अपुर्व गुंथनशैलीपुर्वक अवलोकतां तेमना प्रत्ये भक्तिनुं विशेष स्फुरवापणु थयुं।

परम एवी आ आध्यात्मीक मुर्तिना प्रत्यक्ष सुयोगे जेम जेम मने वस्तु-विज्ञानना बोधनुं परमार्थ सिंचन अंतर-दृष्टीपुर्वक थतुं गयुं तेम तेम हुं यथार्थ सतनो अनुयाइ बनतो गयो। अने सतना निमीत्तमां देव गुरु शास्त्र केवा प्रकारना होवा जोइये, तेनुं पण ते साथे यथार्थ भान आवतां हुं सहज आत्मभावे श्वेतांबर आम्नायनो व्यक्ति होवा छतां सहज तेनुं परिवर्तन करी दिगम्बर आम्नायनो साधक बन्यो। अने एज ते महाभाग्य बोध-दाताना अनहद उपकारनुं परम एवुं आ फल छे।

उज्जैन (म० प्र०)
अनन्त चतुर्दशी, सं० २०१३

— वेलजी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ग्रंथकार—

आत्मार्थी सत्पुरुष श्रीमद् ध्यानविजयजी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ग्रन्थकारनो संक्षिप्त जीवन परिचय

जन्मकाल संवत १९४६ मागसर वद अष्टमी राधनपुर
दिक्षाकाल " १९८५ कार्तक वद दसमी पाळनपुर
परिवर्तनकाल " २००६ कार्तिक सुद पुर्णीमा उज्जैन

परम पुज्य सद्गुरु देवनो शुभजन्म विक्रम संवत १९४६ ना मागसर वद अष्टमीए गुजरात प्रांतमां राधनपुर क्षेत्रे वैष्णव संप्रदायमां थयो हतो। माता पिताये तेमनुं नाम प्रभुलाल राख्युं हतुं 'पुत्रना लक्षण पारणामां' ए कहेवत अनुसार आपश्रीमां बाळ वयथीज भविष्यनी महानतानी झांखीनुं दिग्दर्शन थतुं हतुं, बालवयथी तेमनुं जीवन सहज वैराग्यमय होवाथी अन्य समवयी बाळको साथेनी रमतगमतनो तेमने खास लक्ष नहोतो. छ वर्षनी लघुवयना बाळ समये एकवखत माताये तेमने उतावलथी भोजन आपी समाजमां थयेला एक मृतक देह संस्कार अर्थे तेना गृहक्षेत्रे जवानुं सुचव्युं. मृत्यु एटले शुं ? ते संबंधीनो प्रश्न माताने पुछता तेमणे तेनो उत्तर 'जीवनुं सरिरमांथी नीकळी जवुं ते मृत्यु' एम संक्षेपमां जणावी तेमणे ते तरफ प्रयाण कर्युं. प्रश्ननो संक्षेप उत्तर तेमनी समाधानी अर्थे पुरतो न होवाथी ते संबंधीनी वधु विचारणा उत्तरोतर तेमना अंतरमां स्फुरवा मांडी, पण समाधानीनुं एक पण साधन त्यां विद्यमान न होवाथी ते उपस्थित गुंचवणनो खास कांइपण निकाल ते समये करी शकायो नहि, तो पण पुर्वकृत संस्कृतिना अनुसंधानरुपे आपण तेमनी एक ऊँच जीवनधारा होवानुं दिग्दर्शन करावे छे. आपश्रीनी करुणाप्रधान दृष्टी होवाथी आवी लघुवयमां पण मार्गमां दृष्टीगोचर थता नाना जंतुओना बचाव अर्थे सहज दयामय लागणीनुं स्फुरवुं थतुं, अने तथाप्रकारनुं जैनधर्मनुं दयामय तत्व जोइ तेमनुं ते तरफ सहज गुण विशेष परिणामे ढळवापणुं रहेतुं।

तेमनुं गृहस्थ जीवन मुंबई जेवी मोहमयी विलासप्रिय नगरीमां व्यतित थवा छतां तेमने चा, तंबाकु जेवुं एकपण व्यसन के नाटक सीनेमा अवलोकवानो खास लक्ष नहोतो। रस्तामां कोई पण बाई भाई पर आवेली अकस्मात आफतना बचाव अर्थे तेओश्री तेनो त्यां बनतो प्रयत्न करता। एक समय तेओ बालकेश्वरना निवास स्थानथी नजीक आवेली बाणगंगा पर आवश्यक पाणीनी पुरती अर्थे सुमारे रात्रीना नव वागे गया, त्यां दिवाल पाछना अंधकारमां वंगडी जेवा अवाजनुं श्रवण थतां कोई युवती आवा समये केम आवी हशे ? ते प्रश्ने पुज्यश्रीने शंकाशील कर्या, अने तेनी समाधानी अर्थे ते तरफ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शरिरनुं प्रेरावुं थयुं । त्यां उभेली युवतीने अवलोकतां उपस्थित शंकानुं समाधान हृदयगत थयुं । अने ते सबंधी बाइने पण पुछयुं. प्रत्युतर न मडवाथी तेनो हाथ पकडी नजीकनी लाइट सनमुख उभी करी आ समय अहिं आववानो हेतु पुछतां तेणे मुंगु रुदन शरु कर्युं. ते समय पाणीनी डोल साथे तेनो हाथ पकडी उपरना माळ पर पोताना निवास स्थाने तेने लइ गया, अने त्यां बाजुमां रहेती बाइओना समुदायमां तेने बेसाडी, पुज्यश्री पोताना कार्यनी निवृति थयाबाद ते बाइने शांतवन आपी तेनी सर्व माहीती मेळवी. ते उपरथी बाणगंगामां डुबीमरवा माटे त्यां आवी हती ते सिद्ध थयु रात्रिना ते बाइनुं निवासस्थान उपरोक्त समुदायीक बाइओना समीपांज रह्युं अने बीजे दिवसे सवारे तेना निवासस्थाननी जग्याये तेने साथे लइ जइ तेना श्वसुरपक्षी जीवोने योग्य भलामण करी ते बाइ तेना हवाले करवामां आवी ।

आ उपरथी निष्कर्स एज ग्रहण करवा योग्य छे के उपरोक्त युवान बाइनो मुलाकात रात्रीना नव वागे एकांत स्थानमां थवा छतां, बाइ सौन्दर्यवान अने सुवर्णादि शृंगारथी युक्त छतां अने पुज्यश्रीनी वीसथी बावीस वर्षनी युवावस्था होवा छतां तेमने प्रलोभनना एक पण कारणे असर उपजावी नहि अने एज तेमांथी परमार्थ बोध ग्रहण करवा योग्य छे ।

मुंबइमां प्रथम आपनी गवर्नमेन्ट सर्विस हती। सन १९१४ नी वॉर डोक्लेर थयाबाद तेमणे ते सर्विस छोडी फ्रीयर रोड पर दवाखानुं खोलवामां आव्युं, त्यां फुरसदना समये धर्मनी शोध अने भीन्न भीन्न दर्शनकारनी समालोचना पण करता। बहारनी शोधथी के क्रियाथी धर्मनी सिद्धी थाय के केम ? जो थाय तो तेनो पुरावो शुं ? अने न थाय तो पाणी वलोववाना जेम ते क्रियाथी लाभ शुं ? आ प्रश्नो अनेक प्रसंगे स्फुरायमान थता। अने तेना समाधान अर्थे सतत मंथन पण करता। आर्यसमाजनुं सत्यार्थ प्रकाश वांचवामां आव्युं । पण आपश्रीनी झंखनाने अनुरुप एवुं मार्गदर्शन तेमांथी मळी शक्युं नहि. आखीर मुंबइना कंटालेला जीवने त्यांथी हंमेशना माटे विदायगीरी लीधी अर्थात् । संवत १९८० नी आखरीअे तेमणे मुंबइनो परित्याग कर्यो अने थोडा बखत माटे अमदाबादना एक निवासस्थानमां कुटुंबनी शारिरीक असाताना अंगे विश्रांती लीधी । त्यां तेमना गृहपत्निनुं अवसान थयुं, त्यारबाद पाळनपुर जइ त्यां दवाखानुं खोलवामां आव्युं, अने निवास तरीके त्यांज रहेवुं तेमणे उचीत गण्युं. अहीं आव्या बाद संतानमां आशरे चौद वर्षनी जे एकज पुत्रि हती तेनुं पण अवसान थयुं । दरमीयान गमगीनीना आ चालु समयमां तत्वनी वास्तविक शोध माटे तेमने विशेष तालावेली उत्पन थइ। अहिंना वतनी भोगीलाल गोदडभाई नामना एक गृहस्थ के जे तेज विचारना साधक अने शोधक हता, अने तेथी तेमनो परिचय पुज्यश्रीने तत्व सन्मुखता माटे विशेष उपकाररुप थयो । ते भाइए

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रीमद्राजचन्द्र नामनो एक ग्रन्थ पूज्यश्रीने वांचवा विचारवा माटे आप्यो। जेनुं अति जागृतिपूर्वक अध्ययन थतां जीवन एकाएक परिवर्तनशीलपणाने पाम्युं। जैनधर्मनो स्वीकार अने तेनी साची सन्मुखता आत्मभावे थई। ते साथे आजीवन ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञानो पण अवधार तेज दिवसे एटले संवत् १९८३ ना महासुद अष्टमीए थयो। दवाखानानी पण सर्व प्रकारे निवृत्तिनो लक्ष प्रधान करी तेनी सर्व प्रकारनी नवीन योजनानो प्रतिबन्ध करवामां आव्यो। दरम्यान समयमां राधनपुर जई त्यां मकान विगेरे सर्व बाह्य परिग्रहरुप विद्यमान सामनोनुं वेचाण करी, तथारुप संबंधनुं सर्व प्रकारे निवृतिपणुं कर्युं। त्यार बाद त्यांथी पालनपुर आवी दवाखानानो सर्वथा निकाल अने ते साथे गृहस्थ जीवनने लगता लेबासनो पण सर्वथा परित्याग कर्यो अने ते जग्याए त्रण वस्त्रनो आदर एटले खादीनुं एक वदियान एक पंचियुं अने ओढवा माटे पछेडी एम त्रण वस्त्रना स्वीकार साथे, सिर मुंड अने खुल्ला पगे विचरवानुं सरू कर्युं। दरम्यान त्यांथी एटले संवत् १९८४ ना चैत्री पूर्णिमाए आबू पर जई देलवाडानी एक गुफामां भगवान महावीरनां फोटा सन्मुख रूपस्थ ध्याननी सरूवात करी। ते समय विजयकेशरसूरिजी महाराजश्रीनो त्यां सहज मेळाप थयो। तेमना सरल परिणामी जीवनने अवलोकतां अने ते साथे तेमनी तत्व जिज्ञासु वृत्तिनुं निरीक्षण थतां ते संबंधी पूज्यश्रीने घणोज हर्ष थयो। अने तेमना प्रत्ये प्रेम पण स्फुर्यो। त्यां अमुक मास तेमना संसर्गमां पसार थया बाद तेमने गुजरात तरफ आववानुं नक्की थतां तेओश्रीए ते तरफ विहार कर्यो। दरम्यान समय पूज्य-श्रीए पण पाळीताणा जई त्यां चातुर्मास माटे स्थिरता करी। अहीं तेमने चार मास मौन अने ते साथे एक वखत आयंबिलनो खोराक लई, समयनो लगभग उपयोग ध्यानस्थ दशामां व्यतीत कर्यो। त्यार बाद विजयकेशरसूरिजी महाराजश्री साथे पत्र समाचारीथी घड़ायला प्रोग्राम अनुसार कार्तिक वद २ तेमणे पालनपुर तरफ प्रयाण दीक्षा माटे कर्युं। अने त्यां जई भोगीलाल गोदडभाईने त्यां ते अर्थे स्थिरता करी। दरम्यान महाराजश्री विशनगरथी विहार करी समय पर तेओश्री पण पालणपुर पधार्या अने त्यां धारेला दिवसे एटले संवत् १९८५ना कार्तिक वद १०मी ए पूज्यश्रीए श्वेताम्बर जैन दीक्षा ग्रहण करी। दीक्षा थया अगाऊना समीप काळमां समय मेळवी पूज्यश्रीए विजयकेशरसूरिजी समक्ष एक पोतानो अन्तर उद्गार जाहेर कर्यो हतो। ते ए के मारूं ध्येय केवल आत्मार्थ सन्मुखता अने ते पूर्वकनी आत्मार्थ साधना छे। तेमां मने कोई पण बाह्य निमित्त आत्मार्थ विरुद्ध देखाशे तो हुं तेज वखते तेनो परित्याग करीश। आवा प्रकारना सूचननो महाराजश्री तरफथी स्वीकार थया बादज उपरोक्त दीक्षा अंगीकार करवामां आवी हती। पोतानां लक्षबिंदुनी के शुद्ध साध्यनी सिद्धि अर्थे तेओश्री केटला जागृत, निडर अने स्पष्ट वक्ता हता, ते उपरोक्त कथनथी सिद्ध

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थाय छे। अने एज तेमना प्रामाणिक जीवननो चितार मुज्ञ वांचकोए अन्तर्गत करवा योग्य छे। अस्तु।

पूज्यश्री दीक्षित थया बाद विजयकेशरसूरिजी महाराजश्री साथे तेमणे विहार करी ईडर प्रांतमां वडाली क्षेत्रे जई स्थिरता करी। अने पहेलुं चातुर्मास पण त्यांज थयुं। त्यार बाद महाराजश्री साथे विहार करी तेओश्री तारंगा हिल पधार्या। अने त्यांनी एक श्वेताम्बर धर्मशालामां मुकाम कर्यो। दरम्यान समय त्यां तपास करतां एक दिगम्बर गुफा होवानु विदित थयुं। अने स्वरूप ध्यान माटे ते अनुकूल होवाथी ते अर्थे त्यां अमुक कलाको रहेवानो प्रबंध पण कर्यो। दरम्यान एक समय महाराजश्री साथे सांजना प्रतिक्रमण समय धर्मशाला तरफ पाछा फरतां, वचमां आवेली दिगम्बर धर्मशालाना नाके बहार सरीआम रस्ता पर एक निग्रन्थ मुनि अने ते साथे एक आर्यिका परस्पर वातो करता उभेला पूज्यश्रीए अने तेमनी साथे महाराजश्रीए जोया। महाराजश्रीने आ घटना विपरीत देखावाथी रस्तामां जरा आगळ जई बोल्या; के नग्न साधुनो आर्यिका साथे सरीआम रस्ता बच्चे वार्तालाप ए केटली शरम भरेली वात छे। पूज्यश्रीनुं रस्तामां नियमा मौन रहेतुं होवाथी तेमणे तेनो कांई पण प्रत्युत्तर ते समय आप्यो नहीं। निवासस्थाने जई, प्रतिक्रमणना समये पूज्यश्रीए महाराजश्रीना ते विचारनो प्रतिरोध करतां जणाव्युं के आपनो ते विचार विमुख भावे उपस्थित थयेलो होवाथी यथार्थ रूप नथी। तो पछी सन्मुखभावे तेनु यथार्थपणुं कई रीते घटी सके, एम महाराजश्रीए पूज्यश्रीने नम्रभावे पूछयुं। उत्तरमां तेमणे जणाव्युं के सन्मुखभावे उपस्थित थयेला विचारमां एकज अंतर उद्‌गार स्फुरवा योग्य छे के निग्रंथ नग्न दिगम्बर साधुनो सरीआम रस्ता पर आर्यिका साथे वार्तालाप थवा छतां शरीरनुं कोई पण चिह्न के तेनी मुखमुद्रा विकारग्रस्त दृष्टिगोचर थती नथी। एज तेना जीवननी महत्ता प्रशंसवा योग्य छे। सन्मुखभावे आ एकज विचारने आत्मार्थी जीवे अवधारवा योग्य छे। अने ते करतां विशेष शुद्ध स्वभावना लक्षे ते ज्ञेयरूप घटनाने मात्र ज्ञाताभावे जाणवा योग्य छे।

उपरोक्त स्थाननी क्षेत्र स्पर्शणा पूर्ण थया बाद त्यांथी पूज्यश्रीए महाराजश्री साथे विहार करी देहगांव क्षेत्रे आवी चातुर्मास माटे स्थिरता करी। त्यार बाद पूज्यश्रीनी महाराजश्री साथे अहमदाबाद क्षेत्रे स्थिरता थई। अहीं महाराजश्रीनी शारीरिक प्रकृति अस्वस्थ रहेवाथी तेमने तेमनी सारवार माटे वधुं वखत रहेवानी फरज पडी। त्यारबाद महाराजश्रीनी अनुमति थतां तेओश्रीए एकाकी विहार करी। वडाली क्षेत्रे आवी चातुर्मास माटे स्थिरता करी। अहिं आव्या बाद महाराजश्रीनी मांदगी एकाएक वधवाथी तेमनुं आखिर अहमदाबाद मुकामेज संवत् १९८७ ना श्रावण मासमां अवसान थयुं। त्यारबाद पूज्यश्रीनुं रहेवुं अने विचरवुं सर्वथा एकाकीपणे थयुं। अस्तु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपरोक्त चातुर्मास पूर्ण थया बाद पूज्यश्रीनुं अनेक ग्रामानुग्राम क्षेत्रे सर्वथा एकाकीपणे विचरवुं थयुं। तेना आज सुधीनां अनुक्रममां वडाली, देहगांव, पाटण, मांडल, पालनपुर, खेटब्रह्मा, ओयणी, व्यारा, ओलपाड़, सरार, बोरसद, मोरवी, एदलाबाद, वणी मूर्तिजापुर, करजगांव, उज्जैन, खण्डवा, खांमगांव अने ललितपुर विगेरे क्षेत्रनो समावेश थई जाय छे। तेमां खास अपायेला उपदेशनुं के कोई उपस्थित घटनानुं अहीं क्षेत्र प्रधान दृष्टिए निरुपण करवामां आवे छे।

पाटण क्षेत्रे खास अपायेला उपदेशनुं निरूपण।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समय एटले संवत् १९९० मां पाटणक्षेत्रे पधार्या। अने त्यां थोडा वखत माटे स्थिरता अने उपदेश प्रवृत्ति चालू प्रवाहरूपे रही। संघ अने सोसायटीना परस्परना उपस्थित क्लेशनुं शांत्वन केम थाय अने जीवो धर्मना सत्यार्थ मार्गने शी रीते पामे? ए विषयनी पूर्ति अर्थे अहिं पूज्यश्रीनो खास उपदेश हतो। त्रण मासनी अंत्रेनी स्थिरता पूर्ण थये विहारना आखिर समये पूज्यश्रीए सर्व जैन भाइयोंने नीचे प्रमाणे करुणात्मक सूचन कर्युं।

"बन्धुओ! अने बहेनो! रामसूरि अने वल्लभसूरि ए बन्नेना पक्षथी रहित हुं एक आत्मार्थी जीव छुं में आज पर्यंत जे जे उपदेश कर्यो छे अने करूं छुं ते ते परस्परना पक्षनी के कोई एक पक्षनी पुष्टि अर्थे नथी। पण ते उपस्थित थवाना मूल कारणरूप भूलनी निवृति अर्थे छे। ते मूल बीजभूत भूलमां मात्र एक मिथ्यात्वनो के ते पूर्वक थता रागादि वा क्रोधादि कषायनो समावेश थाय छे। साधु साध्वी श्रावक अने श्राविका आजे ते भूलथी ग्रस्त होवाथी सौ कोई पोतपोतानो मार्ग भूल्या छे, अने तेज कारणथी परस्पर क्लेशमय वातावरण प्रसर्युं छे। अने प्रसरतुं जायं छे। तेनुं संघ अने सोसायटी बन्ने पक्षो कंइक शांत चित्ते विचार करशे तो ते वात सहज सौ कोईने समजाशे। अने ते द्वारा परस्पर थता दोषारोपणनी निवृत्ति पण आत्मभावे थशे। अने तेम थवा माटें सर्व कोई बन्धुओ अने बहेनोने मारुं आत्म भावे करुणात्मक एवुं आ नम्र सुचन छे। अस्तु।

खेडब्रह्मा क्षेत्रे उपस्थित घटनानुं चित्रपट।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समय एटले संवत् १९९२ मां खेड ब्रह्मा क्षेत्रे पधार्या। अने त्यां चातुर्मास माटे स्थिरता करी। आ क्षेत्रमां जैन करतां पण जैनेतर लोको अने तेमां पण मुख्यपणे ब्राह्मण बाइओनुं उपदेश माटे विशेष आवागमन रहेतुं हतुं। तेथी पूज्यश्रीनी उपदेश-प्रवृत्ति चार मास पर्यंत चालू प्रवाह रूपे रही। ब्राह्मण बाईओनुं विशेष आवागमन जोई अहींना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ब्राह्मण वर्गमां एटले मुख्यत्वे करी पुरुषोमां मोटो खळभळाट शरु थयो। अने तेना प्रतिबंध माटे अहींनो ब्राह्मण समाज एकत्र थई तेना कानूनरूपे—कोई पण स्त्री वा पुरुष महाराजश्रीना स्थाने जशे तेनो पांच रुपया दण्ड लेवामां आवशे। आवा प्रकारनो कानून पसार थवाथी बाइओ पूज्यश्रीना व्याख्यानमां जती जोके अटकी। पण तेना बदले तेओए महाराजश्री गोचरी समय बाहर निकले त्यारे सरीआम रस्ता पर तेमने वन्दन करवानुं शरु कर्युं। मतलब के आखिर ते कानून तेनो टकी शक्यो नहीं। अने ते पण ते बाइओनी जैनधर्म प्रत्ये अने तेना बोधक पूज्यश्री प्रत्ये दृढ श्रद्धान होवानुं सुचन करे छे। अस्तु।

मांडल क्षेत्रे उपस्थित घटनानुं चित्रपट।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समय एटले संवत् १९९३ मां मांडल क्षेत्रे पधार्यां। अने त्यां थोडा वखत माटे स्थिरता अने उपदेश प्रवृत्ति चालू प्रवाहरूपे रही। दरम्यान एक समय व्याख्यान बाद एक बाईए थोडी अगत्यनी वात माटे समयनी याचना करी। ते समय अनुकूल होवाथी, पूज्यश्रीए तेने पोतानी वात जाहेर करवानुं फरमाव्युं। बाईए ते समय पोतानी वात नीचे प्रमाणे शरू करी :—

"हुं अहींनी वतनी छुं। मारुं नाम धेलीबाई छे। मने लगभग ५ वर्षथी द्वादश अनुप्रेक्षाना चिंतवनथी संसार प्रत्ये वैराग्यनुं स्फुरवुं थयुं छे। लग्नथी बन्धन ग्रस्त न थवानो सद्विवेक पण मने तेज समयथी स्फुर्यो हतो। अने ते वात मैं प्रथमथी ज मातापिताने जाहेर पण करी हती छतां तेओए लगभग त्रण वर्ष पर मारी विरुद्ध थईने मारू लग्न अहमदावाद क्षेत्रे कर्युं। ते लग्न अहीं मांडल थया बाद मने ते प्रसंगे अहमदावाद जवुं पडयुं। तेज रात्रिए लग्न ग्रस्त पुरुषना शयनगृहमां मारो प्रवेश थया बाद तेणे मारी साथे विकारवृत्तिनी इच्छा दर्शावी में ब्रह्मचर्यना लक्षे तेनो सदंतर इन्कार कर्यो। आम थवाथी तेने मारा पर अति इतराजी थई। अने ते साथे आ शरीर पर तेणे मार-पीटरूपे प्रहार पण कर्यो। रात्रि जेम तेम पूरी थया बाद सवारमां ते उपस्थित तकरारना फलरूपे अत्रेना गृहक्षेत्रेमां सर्व वातावरण बदलाई जवाथी हुं तेमने सूचन करी अहीं मांडल आवी। अहीं पण मातापिताने मारा पर विशेष अणगमो आव्यो। अने तेओए पण मारा पर मारपीटनो विशेष प्रहार कर्यो। अने ते साथे तेमणे मने पुनः अहमदावाद जवानुं कह्युं। ते बदल मारो सर्वथा इन्कार थवाथी तेओए श्वसुर पक्षने आ वात जाहेर करी। त्यार बाद तेमणे पण मने अहमदावाद लई जवा अहीं आवी अनेक उपायो योज्या। अने ते साथे मारा वलणने ते तरफ वाळवा अनेक गुप्त प्रयासो पण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कर्या । अने लांबो वखत तेमणे मारी राह पण जोई । छेवटे ते सौ निष्फल थवाथी थाकीने तेओए मारो कबजो लेवा माटे दीवानी कोर्टमां केस दाखल कर्यो । जे हाल चाले छे । हवे हुं आपनी पासे मारा हित संबंधी उपायनी याचना करुं छुं । तेनो मने योग्य उत्तर आपशो ।"

पूज्यश्रीए उत्तर आपतां कह्युं के—तारा माटे ठीक उपाय जैन आर्यिका थवुं ते छे । के जेथी बन्ने पक्षनो छुटकारो सहज थई शकशे । बाइए उत्तर आपतां कह्युं के मारो पण हवे तेज विचार छे । ते माटे मारे कोर्टमां शुं कहेवुं उचित छे ते मने कृपा करी जणावशो । पूज्यश्रीए उत्तर आपतां कह्युं के कोर्टमां तारे शुं कहेवुं तेनुं संक्षेप सुचन नीचे प्रमाणे छे ।

"लग्न थया त्यारथी ते आज पर्यंत लग्न थवा छतां मारो तेनी साथे कोई पण प्रकारनो संसारी संबंध नथी । संसार प्रत्येना वैराग्यथी हुं प्रथमथीज लग्नना बन्धनने इच्छती न होती । ते वात में मातापिताने जाहेर पण करी हती । तेम छतां तेमणे जबरजस्तीथी मारुं लग्न कर्युं छे । हवे हुं ते संबंधनो छुटकारो करी वैराग्य मार्गे विचरवा एटले जैन आर्यिका बनवाना दृढ निश्चय पर आवी छुं । अने ते माटे कोर्ट मारा मार्गने पूरतुं उत्तेजन आपशे । ए मारु नम्र निवेदन छे ।

ऊपर प्रमाणे सर्व समाधान थया बाद बाई पोताना गृहस्थान तरफ विदाय थई । त्यां माताए गृहक्षेत्रे आवतां थयेला विलंबनुं कारण पुछ्युं । बाइए अत्रेनी सर्व वात स्पष्ट जाहेर करी । माता तरफथी ते वात पिताने जाहेर थतां तेने ते विपरीत देखावाथी तेणे पुत्रीने पूज्यश्री पासे जवानो प्रतिबंध कर्यो । तेम छतां पुत्री शौर्य वापरीने पूज्यश्रीना दर्शनार्थे आवी । पिताने आ तेनुं विरुद्ध आचरण देखावाथी, ते तुरतज तेनी पाछळ आवी, तेने बलात्कारथी घेर लई जवा आग्रह कर्यो । ते समय पुत्री मौन रहेवाथी ते वधारे आवेशमां आवी तेना शरीर पर पूज्यश्री समक्ष मारपीट रूपे प्रहार कर्यो । पूज्यश्रीए ते समय बाईने घेर जवा सुचव्यु । बाई ते अनुसार तेना पिता साथे घर तरफ विदाय थई ।

आवी घटना पूज्यश्री समक्ष बनवाथी, तेमने ते बाई पर अत्यंत करुणा भावनुं स्फुरवुं थयुं । अने ते अनुसार तेमणे ते बाई ज्यां सुधी बन्ने पक्षथी मुक्त न थाय के आर्यिका न बने त्यां सुधी अनाजनो परित्याग करी केवळ दूध पर रहेवानो अभिग्रह तेज दिवसे एटले संवत् १९९२ना वैशाख शुक्ल चतुदर्शीए कर्यो ।

उपरोक्त वात मांडल क्षेत्रमां जाहेर थतां क्रमे ते बाईना श्वसुर पक्षमां पण विदित थई । अने तेथी ते बाईना ससराए पोताना एक मुनीमने तेनी तपासणी माटे मांडल मोकल्यो । अहीं मुनीमने पूज्यश्रीना अभिग्रह संबंधी सर्व वात स्पष्ट समजातां तेणे अमदावाद जाई, ते बाईना ससराने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अत्रेनी सर्व वात स्पष्ट जाहेर करी। तेने आ वात अति दुखरूप देखावाथी ते भाई समय मेलवी लगभग जेष्ठ वदमां अहीं मांडल आव्या। अने पूज्यश्रीनी तेणे खानगी मुलाकात लीधी। पूज्यश्रीए ते भाईने अत्रेनी सर्व बिना स्पष्ट विदित करी। अने ते साथे ते बाईनी मक्कमता पण दर्शावी। ते ऊपरथी ते भाइए पूज्यश्रीने नम्र भावे कह्युं के आ संबंधमां आप जेम कहो तेम करवा हवे हुं तैयार छुं। पूज्यश्रीए ते भाईने बाईने दीक्षा अपाववानुं सूचन कर्युं। ते वात तेने कबूल थतां पूज्यश्रीए तेने ते कार्य माटे हाल तुरतमां ते बाईने साथे लई—देहगांव आर्यिका पासे जवानुं कह्युं। अने ते साथे आर्यिका ऊपर पत्र लखीने पण पूज्यश्रीए तेने आप्यो। अने ते साथे ते बाईने पण ससरा साथे देहगांव जवानुं सूचव्युं। ते अनुसार तेज सांजे तेओ बन्ने देहगांव तरफ रवाना थया। अने त्यां आर्यिकाने अत्रेनो पत्र आपतां बीजे दीवसे ते बाईने दीक्षा पण अपाई। अस्तु।

भोयणी क्षेत्रे उपस्थित घटनानुं चित्रपट।

पूज्यश्री अत्रेथी विहार करी असाड सुदी पंचमीए भोयणी क्षेत्रे पधार्या अने त्यां चातुर्मास माटे स्थिरता करी। अने अन्न अहारना प्रतिबंधरूप अभिग्रहनी निवृत्ति पण त्यां तेज दिवसे थई। अहीं एक मास तो निर्विघ्ने पसार थयो। त्यार बाद भोयणी तीर्थनी कमीटीना एक जैन भाइए अहमदावादथी अहीं आवी पूज्यश्रीनी मुलाकात लीधी। अने पूछ्युं के आप एकला केम छो। अने नियमित मन्दिर जाओछो के केम? पूज्यश्रीए तेनुं योग्य समाधान कर्युं पण ते अबोध भाईने ते वात न समजावाथी तेणे बीजे दिवसे अहमदावाद जई अहींनी कमीटीने अत्रेनी बीना पोतानी समज प्रमाणे जाहेर करी। कमीटी ते वातनो योग्य विचार न करी शकवाथी तेओए तुरतज एकल-विहारी साधूने चातुर्मास माटे कमीटी मंजूरी आपती नथी। एवो एक पत्र भोयणी तीर्थना मुनीमने लखी ते जग्या खाली कराववानुं सूचन कर्युं। मुनीमने पत्र मळतां ते सत्यनो साधक होवाथी तेने अत्यन्त खेद उपस्थित थयो। आखिर नोकरीनी पराधीनताने वश थई अति खेद पूर्वक पूज्यश्री पासे आवी पोताने कमेटी तरफथी मळेला पत्रनी बीना रजु करी। पूज्यश्रीए मुनीमने शान्त्वना आपी कह्युं के श्रावण पूर्णिमाए आ जग्या खाली थई जशे। एम तमे कमीटीने जाहेर करो। ते अनुसार मुनीमे ते वात कमीटीने जाहेर करी।

उपरोक्त वातना चालु विषयमां अहींना स्टेशन मास्टरनी हाजरी होवाथी भक्तिवश तेने पण आ वाते अति खेद उपस्थित कर्यो। अने ते साथे तेना संबंधी वेदान्तियोने अहीं एक मकान शोधवा सूचव्युं। ते अनुसार तेनो योग्य बंदोबस्त थतां श्रावण पूर्णिमाना सवारे तेमणे पूज्यश्रीने त्यां पधारवा विनंती करी अने ते अनुसार पूज्यश्रीनी त्यां पधरामणी पण थई। अस्तु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एदलाबाद क्षेत्रे उपस्थित घटनानुं चित्रपट।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समय एटले सम्वत् २००१ मां एदलाबाद (पूर्व-खानदेश) क्षेत्रे पधार्या। अने त्यां चातुर्मास माटे स्थिरता करी। अहीं जिज्ञासुओ वधु प्रमाणमां होवाथी। उपदेश प्रवृति चार मास पर्यंत चालु प्रवाहरुपे रही। दरम्यान एक समय एटले आसो मासनी शरुवातमां एक जैन भाईए आवी—अत्रे दर आसो सुद नोमना दिवसे हेलो (पाड़ो) मारवानी प्रथा छे, अने ते कार्य हलकी जातना लोको स्वयं करे छे, एम पूज्यश्रीने कह्युं। पूज्यश्रीने आ वातनुं श्रवण थतां अति खेदनुं स्फुरवुं थयुं। अने ते समये आ क्षेत्रे न रहेवानुं पण चिंतव्युं। अने जाहेर पण कर्युं। जैनोमां आ वात फेलातां तेओ घभराईनो पूज्यश्री पासे आव्या। अने कोई रीते अत्रेज तेना प्रतिबंधनो उपाय योजाय तो जैन संघने परम हर्सनुं कारण थाय। एम नम्रभावे विनवी पूज्यश्रीना उत्तरनी राह जोता बेठा। ते समय पूज्यश्रीने एक विचार उपस्थित थतां पूछ्युं के अहीं मेजीस्ट्रेट कोण छे? उत्तरमां "एक हिन्दू दक्षणी ब्राह्मण छे।" एम ते जैन भाईए कह्युं। जाओ तेमने कहो के महाराजश्री हाल आपने याद करे छे। एम पूज्यश्रीनुं फरमान थतां ते भाई तुरत तेमना गृहस्थाने जई तेमने ते प्रकारे सूचन कर्युं। समाचार मळतां तुरत ते भाई (मेजीस्ट्रेट) पूज्यश्री पासे आव्या। अने पोताने बोलाववानुं कारण पूज्यश्रीने पूछ्युं। उपरोक्त सर्व बीना पूज्यश्रीए तेमने अति खेद साथे जणावी। उत्तरमां तेमणे नम्र भावे कह्युं के ते लोकोनी आ संबंधीनी अर्जी हुं मंजूर नहीं करूं। एटलु हुं बराबर करी शकीश। आप हवे ते माटे नचींत रहेशो। एम कही ते भाई पूज्यश्रीनी रजा लई स्वस्थानके विदाय थया। क्रमानुसार समय व्यतीत थतां आसो सुद अष्टमीनुं प्रभात थयुं। हिंसक पार्टिए हेलो पण हाजर कर्यो। रजाना दिवस होवाथी मेजीस्ट्रेटनी पण त्यां हाजरी न होती। दरम्यान समये पूज्यश्रीए विचार करीने जैन संघने नीचे प्रमाणे सूचन कर्युं—नोम दसम बे दिवस सर्व जैन भाइयोनी दूकानो सर्वथा बंध रहे। सौ भाई बहेनो बे दिवस उपवास के आयंबिल करे। एम पूज्यश्रीए पण पोताना अंगत जीवनमां तेम वर्तवानो दृढ निश्चय करीने कह्युं। तेमना सूचन प्रमाणे सर्व जैन भाइयोए तेम कर्युं। दरम्यान समयमां हिंसक पार्टिए जे अर्जी पोलिसमां रजु करी हती तेनी मेजिस्ट्रेटनी सूचन प्रमाणे मंजूरी न मळवाथी। ते पार्टिए ते बदल जलगांव हेड पोलीस कमिश्नरने एक तार कर्यो उत्तरमां ते बदल "एदलाबादना मेजीस्ट्रेटने मळो" आवुं त्यानुं स्पष्टार्थ लखाण मळवाथी अने ते साथे पोतानो मुकरर समय पसार थई जवाथी। ते पार्टीने फरजियात ते हेलो सहीसलामत घेर लई जवो पडयो। मतलब के ते दिवसथी आ अधम प्रथानो हमेशना माटे छुटकारो थयो। अस्तु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उज्जैन क्षेत्रे उपस्थित घटनानुं चित्रपट ।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समय एटले संवत् २००५ मां उज्जैन क्षेत्रे पधार्या अने त्यां अवंती पार्श्वनाथनी धर्मशालामां चातुर्मास माटे स्थिरता करी । अहीं जिज्ञासुओ वधु प्रमाण मां होवाथी उपदेश प्रवृत्ति चार मास पर्यंत चालू प्रवाह रूपे रही । दरम्यान समयमां आवनार श्रोताओ मुख्यपणे श्वेताम्बर होवाथी त्यां श्रवण थयेला बोधनुं परिणमन पण तेमने ते रूपे कहेतां तथा प्रकारना मतार्थ भावेज थतुं । अने ते परिणमनमां पोतानी भूलो तत्वशोधक दृष्टिना अभावे लक्ष्यगत न थती होवाथी तेओ विशेष मतार्थ भावने दृढ करी पूज्यश्री प्रत्ये उपेक्षित भावे वर्तवा उद्यमवंत थता । अने क्रमे तथा प्रकारना विमुख वर्तनना फल रूपे, पूज्यश्रीने ते जग्या खाली कराववाना मुख्य विचारने अवलंबित थई अने ते अनुसार त्यां आवी तेमने असाढ सुद तेरसना रोज जग्या खाली करवानुं सूचन पण कर्युं । पूज्यश्रीए उदयनी जबरजस्ती आ कार्यमां मूल हेतुरूप होवानुं विचारी तेनो सहर्ष स्वीकार कर्यो ।

उपरोक्त वातना चालू विषयमां श्वेताम्बर छतां परमार्थ बोधना साधक एवा जे जीवो अहीं हाजर हता तेओने भक्तिवश आ वातनुं श्रवण अति खेदरूप थयुं । अने तुरत ज तेओ चातुर्मास माटे अनुकूल जग्या शोधवाना प्रयत्नमां योजाया । बे दिवसना परिश्रमे ते कार्य सफल थतां पूर्णिमाना सवारे तेमणे पूज्यश्रीने त्यां पधारवा विनंती करी । अने ते अनुसार पूज्यश्रीनी त्यां पधरामणी पण थई । अस्तु ।

पूज्यश्रीनी अंतिम समालोचना

पूज्यश्री दीक्षित थया त्यारथी ने आज पर्यंत तेमनो मार्ग तत्वशोधक दृष्टिनो अने ते अंगे विशेष अन्तर्मुख विचारणानो हतो । शोधक दृष्टिमां तेमणे श्वेताम्बर अने दिगम्बर आ बे विभाग मां तत्वदृष्टिए शुं शुं तफावत छे, अने न्यायदृष्टिए ते उभयना तोलनमां तेमानो कयो विभाग सत्यार्थ रूप होवानुं सिद्ध करे छे, तेनुं तेमणे विशेष बारीकाईथी खूबज शोधन कर्युं । अने ते ऊपरथी दिगम्बर तत्वनुं सत्यार्थपणुं सिद्ध थतां त्यां एक महत्वनो प्रश्न हाल जे विभाग मां पूज्यश्रीनुं विचरवुं थई रह्युं छे, ते दृष्टिए उपस्थित थयो । अने ते ए के दिगम्बर तत्वनो अवधार श्रद्धारूप अने देवादि त्रयना आचरणरूप एम बन्ने प्रकारे परमार्थ लक्षे थया विना श्रीजिने निश्चय सम्यग्दर्शननुं जे निरुपण कर्युं छे तेनी सिद्धि थाय के केम ? जो थाय तो बाह्यांतर दिगम्बर मार्गना स्वीकारनो कांई पण हेतु रहेतो नथी । अने न थाय तो तेना स्वीकार विना स्वसिद्धिनो अन्य एक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पण उपाय नथी। मतलब के दिगम्बर तत्वनो अवधार एज गृहीतागृहीत मिथ्यात्वना अभावनो हेतु छे। अने त्यांज सम्यग्दर्शननी सिद्धि उभय ग्रन्थी भेदपूर्वक उभय प्रकारे (निश्चय अने व्यवहार रुप) थती होवानुं श्रीजिने फरमाव्युं छे। अने तेथी बाह्यांतर दिगम्बर मार्गना स्वीकार विना एटले श्रद्धारूप अने देवादि त्रयना आचरणरूप एम बन्ने प्रकारे तेनुं परमार्थ आराधन थया विना स्व-सिद्धिनो अन्य एके उपाय नथी। आवा प्रकारनी पूज्यश्रीनी अंतर समालोचना थतां ते द्वारा तथा-प्रकारना तत्वशोधनथी तेना फलरूपे थयेलुं एवुं जे अंतर-स्फुर्ण ते ए के असत्यार्थ निमित्तना लक्षे उपादान जे भूलरूपे परिणम्युं छे तेनुं सत्यार्थ निमित्तना लक्षे भान थतां ते भूलना अभाव पूर्वक तेना बाह्य एवा असत्यार्थ निमित्तोनुं पण श्रद्धा अने आचरणमां अभावपणुं थवुं एज तत्वशोधक दृष्टिना धारक एवा आत्मार्थी जीवना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनुं परम एवुं आ फल छे। आवा प्रकारनी अन्तर-समालोचना पूज्यश्रीनी थया बाद तेनो निशंकभावे अभिप्रायमां स्वीकार श्वेताम्बर आम्नायनुं बाह्यलिंग तेमनुं होवा के देखावा छतां पण घणा ज लांबा वखतथी थई चुक्यो हतो, तेम छतां आज पर्यंतनां व्यतीत थयेला काळमां तेओ श्वेताम्बर-लिंगे असंगपणे रही पोतानी अंतरंग तैयारीने पुष्ट बनाववाना प्रयत्नमां ज योजायेला हता। जेनी आज उज्जैन क्षेत्रना विषे पूरती तैयारी थतां सं० २००६ ना कार्तिकी पूर्णिमाए शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावना अंतर्मुख लक्षे पोते पोतानी भूलरूप अवस्थानुं परिवर्तन कर्युं अर्थात् दिगम्बर मार्गना परमार्थ आराधनमां उपयोगनी अंतर्मुख स्थिरता करी। अस्तु।

मूर्तिजापुर क्षेत्रे उपस्थित घटनानुं चित्रपट

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समये एटले संवत् २०१२ मां मूर्तिजापुर क्षेत्रे पधार्या। अने त्यां चातुर्मास माटे स्थिरता करी अहीं जिज्ञासुओ वधु प्रमाणमां होवाथी उपदेश-प्रवृत्ति चार मास पर्यंत चालू प्रवाहरुपे रही। दरम्यान एक समये व्याख्यान बाद एक बाइए थोड़ी अगत्यनी बात माटे समयनी याचना करी। ते समय अनुकूल होवाथी पूज्यश्रीए तेने पोतानी बात जाहेर करवानुं फरमाव्युं। बाइए ते समये पोतानी बात नीचे प्रमाणे शरू करी:—

" हुं कच्छनी वतनी छुं। माता-पिता अहीं रहेता होवाथी हुं पण केटलाक वखतथी अहीं तेमनी साथे छुं। मारुं नाम चम्पा छे। मने थोड़ा वखतथी संसार—परिस्थितिनो विचार करतां वैराग्यनुं स्फुरवुं थयुं छे। अने तेना तात्कालिक समयमां आपनुं अहीं पधारवुं थवाथी अने ते साथे सतत आपना बोध-श्रवणनो लाभ मळवाथी मारा वैराग्यग्रस्त जीवनने विशेष पुष्टी मळी छे। अने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेथी हवे हुं लग्नना विकारात्मक जीवनने इच्छती नथी। पण निर्विकार एवा आत्मकल्याणना मार्गने इच्छुं छुं। आ संबंधमां कोई वखत मने श्वेताम्बर आर्यिकानो मार्ग योग्य देखावाथी तेनी पसंदगी आपी हती। पण आपना बोधे मने दिगम्बर-मार्गनुं सत्यार्थपणुं जणावाथी हवे मारे दिगम्बर-मार्गनो अने तेना बोधक एवा आप सत्पुरुषनो आश्रय लेवो एज मने इष्टरूप जणायु छे। आवा प्रकारना मारा विचारथी अजाण माता-पिताए हाल तुरतमां अमुक जग्याए मारा लग्न संबंधी पत्र लखी ते भाईने अहीं बोलावेल छे। आ वात मने विदित थतां हुं तेना तात्कालिक छुटकारा माटे आपनी पासे आवी, ते संबंधी सलाहनी याचना करुं छुं। तेनो मने योग्य उत्तर आपशो ?"

उत्तरमां पुज्यश्रीए ते बाईने कह्युं के लग्न न करवानी एटले कायम ब्रह्मचारी रहेवानी ते तारी मक्कमता दृढ़ करी होय, तो तेना तात्कालिक छुटकारा माटे "हुं लग्नग्रस्त थवा कबूल नथी" ते वात माता-पिताने स्पष्ट जाहेर करवी ते योग्य छे। अने ते साथे हाल तुरतमां ब्रह्मचर्य-प्रतिज्ञा लई लेवी ते पण अति आवश्यकरूप छे। के जेथी गृहक्षेत्रमां आ वात पुनः उपस्थित थवानुं कारण रहेतुं नथी। एटले हवे तने आम करवुं ते योग्य छे। आवा प्रकारनी पूज्यश्री द्वारा ते बाईने सर्व समाधानी थतां तेणे तेनो सहर्ष स्वीकार कर्यो। अने लग्न न करवा संबंधीनो पोतानो स्पष्ट निर्णय माता-पिताने जाहेर करी तुरतज तेणे अमुक कच्छी भाई बहनोनी हाजरीमां ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञानो नियम प्रथम सामान्य प्रकारे पुज्यश्री पासे लीधो। अने त्यार बाद पोताने पोताना जिवननी सर्व तैयारीनुं निश्चयात्मकपणुं आवतां अने पूज्यश्रीने पण तेनी सर्व प्रकारे खात्री थतां तेमनी अनुमति अनुसार ते बाईए देशव्रत तरीके अहिंसादि पांच प्रकारनी प्रतिज्ञाओ, केश बंगडी आदि शरीर-शृंगारना परित्यागपूर्वक लीधी। अने ते अनुसार पोते पोतानी आत्मार्थ सन्मुखता कहेतां जिनाशय तत्वार्थ-बोधना अभ्यासमां उपयोगनी अंतर सन्मुखता करी। ए तेनी आत्मिक जीवन-सुधारणा माटे ते जीव विशेष प्रशंसवा योग्य छे। अस्तु।

●

पूज्यश्रीनी तत्वशोधक दृष्टीना फलरूपे आज पर्यंत उपस्थित थयेला ग्रंथोनुं दिग्दर्शन

पूज्यश्रीनी तत्वशोधक दृष्टिना फलरुपे आज पर्यंत तेमनी तरफथी जे जे ग्रंथो उपस्थित थया छे ते ते अपूर्व आत्मार्थ गुण प्रेरक, शान्तरसोत्पादक अने अत्यंत वैराग्यभावना पोषकरूप होवाथी सर्व कोई आत्मजिज्ञासु जीवोने पोतानी प्राथमिक भूमिकानी शरुवातमां अने क्रमे ते द्वारा सम्यक्त्वादि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुण विशेष परिणमनमां अने अन्तिम संपूर्ण वीतरागत्व भावनी स्थिरतामां अति उपयोगी छे। तथारुप ग्रंथनो अनुक्रम नीचे प्रमाणे छे :—

१—अष्टात्मक बोध अधिकार सूत्र,
२—चैतन्यात्मक षडअधिकार सूत्र,
३—चैतन्यात्मक पंच अधिकार सूत्र,
४—बोधी अधिकार सूत्र,
५—वस्तुविज्ञान अधिकार सूत्र।

एम क्रमानुसार लखायेला आ पांच ग्रन्थो पैकी अष्टात्मक बोध अधिकार सूत्र ए नामना ग्रंथनुं आ पहेलुं प्रकाशन छे। जैनो आत्मजिज्ञासु जीवो पूरो लाभ लेवा उद्यमवंत थाय एज अहीं प्रकाशकनो अंतिम उद्देश्य छे।

ज्ञानपञ्चमी
सं० २०१४

विनीत—
वेलजी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

❀ उपोद्‌घात ❀

卐

अमुक वर्षो उपर कोई एक पुर्वाचार्यकृत एवी आठ दृष्टीनी सज्झाय ए नामनुं एक नानकडु पुस्तक संप्राप्त थयुं । ते पुस्तकनुं आंतरिक दृष्टीए अवलोकन थतां, तथारुप बोधनुं मात्र एक सामान्यपणुं जणायुं, अने ते उपरथी तथारुप लक्षे कोई एक आत्मार्थ प्रेरक एवा नवीन ग्रन्थनुं उपस्थितपणुं थाय तो ठीक, एम विकल्पनुं स्फुरवुं थयुं, अने क्रमे तेनी तथाप्रकारनी योजना मोटा फेरफार साथे एटले उपरोक्त ग्रन्थ करतां कोई एक विशीष्ट एवा परमार्थ लक्षबिंदुने अनुसरीने यथार्थ एवी जैनत्व-दृष्टीए करवामां आवी । तथारुप जैनत्व-दृष्टीए थयेली एवी आ ग्रन्थनी योजना ते तथारुप दृष्टीप्रधान शैलीने अनुसरीने होवाथी तेमां खास संप्रदायीक वाद-विवादनी के मत-भेदनी अपेक्षा रहेती नथी, पण मात्र एक जिनेश्वर देवना सत्यार्थ बोधनी ज अपेक्षा रहे छे, अने ते सत्यार्थ बोधनी आंतरिक सिद्धी पण परस्परना संप्रदायीक शास्त्रोनुं संप्रदाय–बुद्धीथी संशोधन करवाथी नहिं, पण अपक्षपात दृष्टीए न्यायनुं तोलन एटले पोताना ज्ञानथी तेनो (आ ग्रंथमां प्रतिपादन थयेला बोधनो) वास्तविक निर्णय करवाथी ज थई शकवा योग्य छे, अने एज स्वसिद्धीनो सम्यक् उपाय होवाथी सर्व कोई आत्मार्थी जीवे तथारुप लक्षे पोताना वीर्य बळने स्फुरवुं एटले तेनो वास्तविक निर्णय करवामां उजमाळ थवुं एज पोताने योग्य अने परम कल्याणकारी छे ।

—ग्रन्थकार ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धर्मनुं निश्चयात्मक क्षेत्र

卐

धर्म धर्म सौ कोई कहे, धर्म न जाणे कोय।
धर्म शुद्ध स्वभावमां, समजे सिद्धी होय॥

— ग्रन्थकार।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रस्तावना

चैतन्यात्मक वस्तुना मुळ स्वभाव तरफ दृष्टी प्रेरी विचारीए तो मोक्ष ए जीवनो स्वभाव छे, अने स्वभाव होवाथी तेनी सिद्धी पण पोताना शुद्ध स्वभावने अवलंबवाथीज थाय छे । आम वस्तु-स्थिति होवा छतां, आजे जैन नामथी ओलखाता जीवो तथारुप बोधना अंतर्मुख सिंचनना अभावे तथारुप मार्गना वास्तविक मर्मने भुली, एकांत पर—लक्षे वस्तु-स्वभावनी मुढता अने विमुखतापुर्वक चरणानुयोगनी शुभोपयोगरुप एवी योगाश्रीत बाह्य सेवनाने गुणधर्मना अस्तित्वरुप के मोक्षमार्गरुप कल्पी, तेने उपादेय बुद्धीपुर्वक सेवी रह्या छे, अने ते द्वारा मिथ्यात्वादि भावोने विशेष दृढ करी पराधिनतानी जंजीरने भावसंसारनी वर्द्धमानतापुर्वक पोषी रह्या छे, तेवा जीवोने पोतानी मुळ बीज-भुत भुलनुं सम्यक भान थवा अर्थे, अने ते द्वारा एटले तथारुप भुलना अभावपुर्वक पोताना वस्तु-स्वभावने अवलंबीत थई सम्यक्त्वादि गुणविशेष परिणमननी अंतर स्थिरतापुर्वक, यथार्थ एवा भाव-मोक्ष-मार्गने, अने तेनी पुर्णतारुप सिद्धीने पामवा अर्थे आ ग्रन्थना विषे चैतन्यात्मक बोधनी पृथक पृथक एवी आठ अवस्थाओ उपस्थित करी तेनुं गाथारुपे गुंथन करवामां आव्युं छे, अने ते द्वारा बाह्यांतर सर्व साधनात्मक क्रियानुं भेदाभेद दृष्टीए भान करावी सम्यकज्ञान दर्शनादिरुप एवा भाव-मोक्षमार्गनुं वास्तविक स्वरुप समजाव्युं छे, एटले सर्व कोई स्वरुपसाधक जीवने पोतानी आत्मीक साधनमां आदिथी अंत पर्यंत आ ग्रंथ एक सरखो उपयोगी थई पडे ए सहज अने स्वभावीक छे, अने एज लेखकनो मुळ हेतु छे ।

— ग्रन्थकार ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

❀ विषय-सूची ❀

पहेली बोध अवस्था

गाथा	विषय	पृष्ठ
भूमिका	ग्रंथारंभमां परमेष्ठीपदने नमस्कार अने अष्टात्मक बोध अवस्थाना उपदेश संबंधी श्रोताओने सन्मुखवर्ती श्रवणनुं सुचन।	१
१	अष्टात्मक बोध अवस्थाना उपदेश संबंधी सद्गुरु प्रत्ये शीष्यनी याचना, अने ते बोधनुं अंतर स्वरुप, अने ते अर्थे मुख्य एवुं तेनुं साधन शुं ? एवो त्यां शीष्यनो प्रश्न, ते संबंधी निरुपण।	२
२	तथारुप उपदेशनी शीष्य प्रत्ये गुरुजीनी शरुआत।	३
३	अष्टात्मक बोध अवस्था ज्ञानस्वरुप होवाथी त्यां ज्ञानस्वरुपी जीवनुं मुख्य एवुं अंतरसाधन पण तेज होय छे, ते संबंधी निरुपण।	३
४-५	पहेली अवस्थाना विषे तृणना अग्नि समान बोधनुं स्फुरवुं अने ओघ प्रतिति रुपे क्रमे तेनुं वर्द्धमानपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण।	४-५
६-७	गृहीतागृहीत मिथ्यात्वना अने सुदेवादिना वास्तविक बोध संबंधीनी गुरुजी प्रत्ये शीष्यनी याचना, अने तेनुं उपदेश द्वारा समाधान।	६-९
८-११	सम्यक्त्व विना थयेला मुनीलींगना स्वीकारमां बोध अवस्था अने गुणस्थान क्युं होय, ते संबंधीनो गुरुजी प्रत्ये शीष्यनो प्रश्न अने तेनुं सर्वांग समाधान।	१०-१३
१२-१३	सत्संग योगे थयेली सुविचार अंतरश्रेणीना बळे अनुक्रमे आ अवस्थाना विषे सम्यग्दर्शनना छ कारणोनुं शीष्यने प्रगटपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण।	१३-१५
१४-१६	प्रथम चतुष्टयना वास्तविक लक्षण संबंधी शीष्यनो गुरुजी प्रत्ये प्रश्न, अने तेनुं उपदेश द्वारा समाधान।	१५-१९
१७-२०	आ अवस्थाना विषे प्रगटेली एवी जे निर्मल गुण अवस्था, ते संबंधीना बोधनुं अनुक्रमे निरुपण।	२०-२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बीजी बोध अवस्था

गाथा	विषय	पृष्ठ
१	—बीजी अवस्थाना विषे गोबरना अग्नि समान बोधनुं स्फुरवुं, अने ते द्वारा जीवादि तत्व ना अंतर विचारमां उपयोगनुं विशेष प्रकारे प्रेरावुं, ते संबंधी निरुपण ।	२७–२९
२	—जीवादि तत्वनी अंतर बोध विचारणाथी लक्षण द्वारा लक्ष्यनो विशेष प्रकारे निरधार थवो, ते संबंधी निरुपण ।	२९–३०
३–६	—तत्वबोधनी विशेष जिज्ञासापुर्वक सद्गुरुना प्रत्यक्ष योगनी उपासना तेमनी विशेष प्रतितीपुर्वक, अने आश्रय भक्तिमां रहेवानी विशेष दृढ़तापुर्वक थवी, ते संबंधी निरुपण ।	३१–३४
७	—विशेष सुविजार श्रेणीना बळे आ अवस्थाना विषे तत्वमिमांसाए नामनुं सम्यग्दर्शननुं सप्तम कारण प्रगटरुप थवुं, अने ते द्वारा संशयादि–त्रय दोषनुं अने त्रण प्रकारना विपर्यय भावोनुं विशेष प्रकारे परिक्षीण पामवुं, ते संबंधी निरुपण ।	३४–३५
८	—विशेष त्याग बैराग्य अने संयम भावपुर्वक अहिं पंचात्मक नियमोनुं प्रगटपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण ।	३५–३७
९	—पिंडस्थादि चार प्रकारना ध्यानमां अहिं साधकनुं विशेषप्रकारे सन्मुखवर्तीपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण ।	३७–३८
१०	—पंचाचार विशुद्धीनो सर्व आधार दर्शनाचार विशुद्धी पर, अने तेनो आधार तत्वमिमांसा पर, ते संबंधी निरुपण ।	३८–३९

त्रीजी बोध अवस्था

१	—त्रीजी अवस्थाना विषे काष्टना अग्नि समान बोधनुं स्फुरवुं, अने ते द्वारा स्व-पर चतुष्टयना भेदत्वमां उपयोगनुं विशेषप्रकारे प्रेरावुं, ते संबंधी निरुपण ।	४०–४१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२-६—अहिं शीष्यने जीव पुद्‌गलना स्वाश्रीत परिणाम होवा संबंधोनी आशंका उत्पन्न थवी, अने गुरुजी द्वारा ते आशंकानो सर्व प्रकारे परिहार थवो, ते संबंधी निरुपण। ४२-४८

७—विशेष तत्वमिमांसाना बळे आ अवस्थाना विषे स्वरुपचिंतवन ए नामनुं सम्यग्दर्शननुं अष्टम कारण प्रगटरुप थवुं, अने ते साथे पंचात्मक भावोना चिंतवनमां पण उपयोगनुं विशेष प्रकारे प्रेरावुं ते संबंधी निरुपण। ४८-५१

८—परम विशुद्धीना बळे अन्य चमत्कारादि जोवा छता पण त्यां मनना विषे कांई पण आश्चर्यनुं उपस्थितपणुं न थवुं, ते संबंधी निरुपण। ५१-५२

९-१०—त्याग वैरागादि भावोनी विशेष वर्द्धमानतापुर्वक अहिं ते साधक जीवने बोधी भावनानुं उपस्थितपणुं थवुं, अने ते अनुसार परमार्थ लक्षने मुख्य करी वर्तवुं, ते संबंधी निरुपण। ५२-५३

चोथी बोध अवस्था

१—चोथी अवस्थाना विषे दिपकनी ज्योत समान बोधनुं स्फुरवुं, अने ते द्वारा वांचनादिबोधनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा थवी, ते संबंधी निरुपण। ५४-५५

२—तथारुप बोधनी विशेष अनुप्रेक्षा थतां ज्ञानादि उपयोगमां रहेलुं जाणवादिपणुं ते द्रव्यसामान्यथी स्फुरायमान थतो प्रकाश छे, एम तथारुप क्रियानुं स्वाश्रीतपणुं विचारवुं ते संबंधी निरुपण। ५५-५६

३-१०—जोवा जाणवानी क्रियामां पांच ईंद्रियो प्रधानरुप होवानुं प्रत्यक्ष देखाय छे, छतां ते क्रियानुं स्वाश्रीतपणुं कहेवानो शुं हेतु छे ? ते संबंधी प्रथक युक्तिपुर्वक पुछायेला शीष्यना प्रश्नोनुं सद्‌गुरु द्वारा सर्वांग समाधान। ५६-६३

११—वस्तुबोधनी सर्वांग समाधानीना बळे अहिं ते साधकनुं ध्यानादि उपयोगमां विशेष प्रकारे प्रेरीत थवुं, ते संबंधी निरुपण। ६३-६४

१२—ते साथे नय विभागना बोधविशेषथी दुराग्रहादि दोषोनुं निग्रहपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण। ६४-६५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१३—विशेष स्वरुप चिंतवनरुप सन्मुखताना बळे आ अवस्थाना विषे भेदविज्ञान एे नामशुं सम्यग्दर्शननुं नववुं कारण प्रगटरुप थवुं, ते संबंधी निरुपण । ६५–६६

१४–१५—स्वपर भेदविज्ञानरुपी प्रगटेला सद्‌विवेकने सम्यकदर्शन कही शकाय के केम ? ते संबंधीना शीष्यना प्रश्ननुं सर्वांग समाधान । ६६–६८

१६—जो कोई साधक जीव सम्यग्दर्शनना स्वरुपथी बेभान रही मात्र ते भेद-विज्ञानमां पर्याय तरफना प्रधान लक्षे अटके तो ते लक्षे ग्रंथीभेद थई त्यां अभेद एवी ते वस्तुने ते न पामे, ते संबंधी निरुपण । ६८–७०

१७–१८—ग्रन्थीभेद विना वेद संवेद पदना अभावरुप एवा अवेद पदनुं उदय-पणुं होवाथी त्यां भेदविज्ञान थवा छतां पण सुक्ष्म विपरितपणुं टळतुं नथी, ते संबंधी निरुपण । ७०–७२

१९—स्वरुप-एकत्व थतां त्यां ग्रन्थीभेदपुर्वक अवेद पदनुं अभावपणुं थई ज्ञान स्वाश्रीत एवा वेद संवेद पदरुपे वर्ते छे, ते संबंधी निरुपण । ७२–७३

२०—अहिं सुधीनी चार बोध अवस्थामां मात्र अवेद पदनो समावेश थाय छे, एम गुरुजी शीष्यने सुचन करे छे, ते संबंधी निरुपण । ७३–७३

पंचम बोध अवस्था

१—पंचम अवस्थाना विषे रत्ननी प्रभा समान बोधनुं स्फुरवुं, अने ते द्वारा सुक्ष्म एवा स्वरुप बोधना विचारमां अहिं ते साधकनुं प्रेरीत थवुं, ते संबंधी निरुपण । ७४–७४

२—त्रीकाली द्रव्य गुण अने ते अनुसार तेनी निर्पेक्ष पर्यायशुद्ध अने पुर्ण-रुपे होवाना निर्णय पुर्वक ते लक्षे सापेक्ष पर्यायनी समय पुरती अशुद्धता टाळवा संबंधीनी साधकनी सन्मुखवर्ती विचारणा संबंधी निरुपण । ७५–७७

३—तथारुप लक्षे पुरुषार्थनुं दृढत्वपणुं थई तेनुं स्व-सन्मुख प्रेरावुं, अने क्रमे करी त्यां भेद तरफना लक्षनुं निवृत्त थवुं, ते संबंधी निरुपण । ७७–७८

४—अती उत्कृष्ट भाव विर्यथी अहिं ग्रन्थीभेदपुर्वक ते साधकनुं स्वभाव स्थिरताने पामवुं, ते संबंधी निरुपण । ७८–७९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

५—सम्यग्दर्शन थतां ज्ञान चारित्रनुं मिथ्यापणुं निवृत थई सर्वनुं सम्यक् रुपे बनी जवुं, ते संबंधी निरुपण । ७९–८२

६—सुक्ष्म ग्रन्थीभेद आदि सम्यग्दर्शननां दश कारणोमां कारणत्वनी उपचाररुप सिद्धी सम्यग्दर्नरुपी स्वकार्यनी सिद्धी थयेज थाय छे, ते संबंधी निरुपण । ८२–८४

७—सम-संवेगादि एवा जे सम्यग्दर्शननां चार लक्षणो तेनुं अहिं प्रगटपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण । ८४–८७

८—ते साथे निःशंकतादि एवां जे सम्यग्दर्शननां आठ अंग तेनुं पण अहिं प्रगटपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण । ८७–८९

९–११—ते साथे अहिं ते सम्यक्दृष्टी जीवना अंतर-परिणामना विषे करुणा कोमलतादि एवा अनेक गुणोनुं प्रगटपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण । ८९–९२

छट्ठी बोध अवस्था

१—छट्ठी अवस्थाना विषे तारानी प्रभा समान बोधनुं स्फुरवुं, अने ते द्वारा स्वभाव एकत्वरुप अंतरस्थिरतामां ज्ञानोपयोगनुं प्रेरावुं, ते संबंधी निरुपण । ९३–९५

२—पंचात्मक ज्ञान संबंधीना बोधनी अहिं गुरुजी प्रत्ये शीष्यनी याचना । ९५

३—मती श्रुतादि मुख्य एवी ज्ञाननी पांच अवस्थाना पृथक भेदनुं स्वरुप । ९५–९६

४—मती श्रुतरुप एवी बे ज्ञानगुण अवस्थानी अंतरसाधनानो शुं अनुक्रम छे, ते संबंधी गुरुजी प्रत्ये शीष्यनो प्रश्न । ९८

५—प्रथम मतीज्ञानना अवग्रहादि चार भेदने अने पछी श्रुतज्ञानने एम क्रमथी अवलंबीत थवुं, ते संबंधी निरुपण । ९८–१०१

६—सम्यकत्रयरुप स्वभावनुं दृढत्वपणुं अहिं ते साधकने वृद्धीगत थतां ते अनुसार अंतर संबंधी स्थिरता थवा तरफ विर्यनुं उल्लसवापणुं, अने ते साथे देशसंयमनुं प्रगटवापणुं, ते संबंधी निरुपण । १०१–१०६

७—बाह्यांतर साधनामां हेतुभुत एवा निश्चय व्यवहार नयना बोध संबंधी अहिं शीष्यनी गुरुजी प्रत्ये याचना । १०६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

८-१०—निश्चय अने व्यवहार ए उभय नयना बोधनुं अने ते साथे एकांत अने- १०६-११३
कांतना न्यायनुं शीष्य प्रत्ये गुरुजीनुं निरुपण ।

११-१२—अहिं ते साधकनी बाह्यांतर निर्ग्रंथ दशानी भावना, अने क्रमे तेना स्वीकार ११३-११८
पुर्वक ते अनुसार तेनी अंतर्मुख-साधना, ते संबंधी निरुपण ।

★

सप्तम बोध अवस्था

१—सप्तम अवस्थाना विषे सुर्यनी प्रभा समान बोधनुं स्फुरवुं, अने त्यां मुख्य ११९-१२४
पणे उपयोगनुं स्वरुप ध्यानमां प्रेरावुं, ते संबंधी निरुपण ।

२—परम आह्लादरुप एवा स्वरुप ध्यानना सुख आगळ त्रण लोकनुं सुख १२४-१२५
त्रण समान छे ते संबंधी निरुपण ।

३—जेम जेम स्वरुप ध्याननुं वर्द्धमानपणुं तेम तेम अप्रमत्त उपयोगे स्थिरता- १२५-१२६
पणुं, ते संबंधी निरुपण ।

४—अहिं क्वचित कषायादि भावोनुं उदयपणुं थवा छतां पण ते साधक १२६-१२८
अस्तिरुप स्वभावने अवलंबीत होवाथी ते नास्तिरुप भावोनुं सहज
निवृत्तिपणुं थवुं, ते संबंधी निरुपण ।

५—अस्तिरुप स्वभावने जाण्या विना एक पण नास्तिरुप भावनी निवृत्ति थई १२८-१२९
शकती नथी, ते संबंधी निरुपण ।

★

अष्टम बोध अवस्था

१—आठमी अवस्थाना विषे चंद्रनी प्रभा समान बोधनुं स्फुरवुं, अने त्यां १३०-१३३
शुद्ध पारिणामीक भावने अवलंबी विशेष प्रकारे स्वरुप ध्यानमां प्रेरावुं,
ते संबंधी निरुपण ।

२—अक्रमरुप स्वभाव स्थिरताना बले क्रम बद्ध पर्याय विशुद्धीरुप थई अहिं १३३-१३४
साधकनुं स्वरुप पुर्णताने पामवुं, ते संबंधी निरुपण ।

३—अहिं घाती कर्मोनुं सर्वथा अभावपणुं थई जवुं, अने ते क्षपक-श्रेणीना १३४-१३६
प्रभावनुं प्रशंशवापणुं, ते संबंधी निरुपण ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४--पुर्ण आत्मज्ञ अने सर्वज्ञ पदथी अलंकीत एवा ते भगवंतने अहिं सर्व पदार्थोनुं ज्ञान त्रीकालवर्तीपणे होवुं, ते संबंधी निरुपण । १३६-१३८

५--अहिं अनंत चतुष्टयथी अरिहंत पदे स्थित थई ते प्रभुनुं दिव्यध्वनि द्वारा वस्तुधर्मना बोधनुं प्ररुपवापणुं, ते संबंधी निरुपण । १३८-१४४

❁

(उपसंहार)

१—अहिं हवे गुरुजी जिज्ञासु शीष्यने बे साधक श्रमणना नाम तेनी लक्षण भेदे पृथकता करी कहे छे, ते संबंधी निरुपण । १४५-१४६

२-३—द्रव्यलींगी अने भावलिंगी एवा श्रवणना बे प्रकार होवा संबंधीना बोधनुं विशेष प्रकारे निरुपण । १४६-१५०

४-५—ते उभयना भेदत्वने जे कोई आत्मार्थी जीव जाणे ते सम्यकद्दष्टी श्रमणने सद्गुरु तरीके स्वीकारे ते अने ते साथे तेवा गुरुना यथार्थ लक्षण शुं ? ते संबंधीना शीष्यना प्रश्ननुं समाधान । १५०-१५२

६—तेवा सद्गुरुनी सेवना जे कोई आत्मार्थी जीव करे ते सम्यक बोधीने पामे, ते संबंधी निरुपण । १५२-१५३

७--सद्गुरु अने असद्गुरु ए बंने रहेला ज्ञान अज्ञानरुप अंतरने जे समजे तेज सद्गुरुनो उपासक बने, ते संबंधी निरुपण । १५३-१५८

८-१०--उत्तम, मध्यम, कनीष्ट एवा त्रण प्रकारना श्रोताओनुं लक्षणभेदे निरुपण । १५८-१६३

१२-१३—उत्तम श्रोताना मुख्य एवा बे प्रकार, अने तेमां एकनुं स्वलक्षे सम्यक जाणपणुं अने बीजानुं पर लक्षे शुष्क अध्यात्मपणुं, ते संबंधी निरुपण । १६३-१६७

१४—ते बंने प्रकारना उत्तम श्रोतामां पण विशेष उत्तम एवा पहेला प्रकारनो श्रोता में तने जोईने आ उपदेश कर्यो छे, ते संबंधी निरुपण । १६७

१५--ते स्वलक्षे विचारतां तने वस्तुविवेक स्फुरी स्वनुं द्दढत्व विशेष प्रकारे आवशे, तेथी तेनो तुं नित्य स्वाध्याय करजे, ते संबंधी गुरुजीनुं अंतिम निरुपण । १६७-१६८

१६-१८--आ अत्यन्त उपकारना बदलामां शीष्यने स्फुरेली एवी गुरुजी प्रत्ये अनन्य भक्ति अने ते रुपे व्यक्त थयेला अंतर-उद्गार । १६८-१७१

अंतिम उद्देश्य अने ग्रन्थनी समाप्ति । १७२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समर्पण

शुद्धात्म पद की सेवना, सदा सु निर्ग्रंथ मार्ग में।
वह सु पंथी सत्पुरुषको, आज यह अर्पुं ग्रंथ मैं॥

卐

परमपूज्य आत्मार्थी सत्पुरुष श्री कानजी स्वामिनी सेवामां-

आप प्रभु ! शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मना, के तेना सामान्य विशेषात्मक बोधना
अत्यंत गुढ अने सुक्ष्म रहस्यार्थ भावनुं पुर्वापर अविरोध दृष्टीए स्व-लक्षनी
अती उज्जवळ जागृतिपुर्वक श्रोताजनोने अमृतसिंचन करी, अने ते
द्वारा अनेकांतना वास्तविक स्वरुपनुं भान करावी, जीवना निज
उपयोगनी विर्यात्मक रुचीनुं वलण मात्र एक सम्यक् एकांत
एवा स्वभाव प्रत्ये ढळे, ए मुळ उद्देशनी विजयताना
सम्यक् लक्षपुर्वक वीतराग विज्ञान भावरुप एवा
शुद्ध आत्मधर्मनी प्रभावना करी रह्या छो, ते
आपनी परम गुणातीशयरुप एवी निर्ग्रंथ
मार्गदर्शक शैलीने अने स्वभावसन्मुखता-
रुप लक्षने सहज अंतर्मुख लक्षे
विर्योल्लासपुर्वक विचारी आ लघु
पुस्तक अत्यंत भक्तिभावथी
आपना कर-कमळमां
अर्पण करुं छुं।

सेवक—
ध्यानविजय।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वस्तु-विज्ञान अंतर्मुख

(श्रेणी)

वस्तु स्वभाव धर्मनो, वास्तविक निर्णय जे करे ।
सर्वज्ञ सत्तानो त्यां निर्णय, होय अविरोध अंतरे ॥ १ ॥
स्वतंत्ररुप स्वभावने, अवलंबी वस्तु मात्रनी ।
क्रमबद्ध अवस्था जे थती, होय ज्ञानमां ते पात्रनी ॥ २ ॥
ते दृष्टीए जैनधर्मनुं, महत्व जाणी अंतरे ।
भक्ति अनन्य भावथी, ते बोधने अनुसरे ॥ ३ ॥
अनेकांतनुं स्वरुप ते, जाणी स्व-पर विज्ञानथी ।
शुद्धने अवलंबी ते सदा, वर्ते स्वरुप भानथी ॥ ४ ॥
परस्पर संबंध विशेषरुप, आ बोध पंच प्रकारथी ।
वर्ती रह्यो सु ज्ञानीने, सत श्रुतना अनुसारथी ॥ ५ ॥
निग्रंथ दशानी सेवना, क्रमे बाह्यांतर ते करे ।
योग ने उपयोगथी, सदा अप्रमत विचरे ॥ ६ ॥
शुद्ध पारिणामीक भावने, अवलंबी ते अहिं अंतरे ।
अखंड ध्रुव स्वभावनुं, स्वरुप ध्यान ते करे ॥ ७ ॥
पर्याय लक्षथी क्रमे, औदासीन थई ते अंतरे ।
ज्ञानादि शुद्ध स्वभावमां, अप्रतिहत भावे ते ठरे ॥ ८ ॥
क्रमबद्ध विशुद्धी अंतरे, प्रगटी त्यां शुद्ध स्वभावथी ।
पामे केवल्य स्वरुपने, थई पुर्णरुप पर्यायथी ॥ ९ ॥
सम्यकत्वादि जे जे दशा, विचारीए विशेषथी ।
उपलब्धरुप ते क्रमे, थाय स्वरुप प्रवेशथी ॥ १० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जे जे दशा विशेषनो, होय निर्णय सम्यकज्ञानथी।
उपलब्ध थाय ते क्रमे, स्वरुपना सु ध्यानथी ॥११॥
ते ध्यान दशा विशेषने, अवलंबे जे जे अंतरे।
ते ते स्वरुप पुर्णता, स्व पदमां ठरी करे ॥१२॥
ज्ञानादि शुद्ध स्वभावमां, अखंड ज्यां स्थिरतापणुं।
पुर्ण त्यां आत्मज्ञपणुं, ने होय त्यां सर्वज्ञपणुं ॥१३॥
क्रमबद्ध थती जीवाजीवनी, अनादि अनंत पर्यायनुं।
प्रत्यक्ष ज्ञान ज्यां रहुं, त्यां कहीए सर्वज्ञपणुं ॥१४॥
ते प्रभु अरिहंत पदे, आयु पर्यंत रही भव्य जीवने।
ऊँकार ध्वनि उपदेशथी, वस्तुधर्मना प्ररुपक बने ॥१५॥
अंतिम अयोगी पदने, स्पर्शी सिद्धालयना विषे।
उर्ध्व गमन करी प्रभु, त्यां सिद्ध पदे सदा वसे ॥१६॥
ते पुर्ण स्व पद प्राप्तीनुं, कर्युं सु ध्यान अंतरे।
अप्रतिहत भावे भावना, करी ते न हवे फरे ॥१७॥
कारण परमात्मानी करे, सन्मुखता जे अंतरे।
कार्य परमात्म पदनी, स्व सिद्धी ते नियमा करे ॥१८॥
पुर्णतानी भावना, पुर्णमां ठरी करे।
पुर्णता पामे खरे, एम ध्यानी उच्चरे ॥१९॥
ते पुर्ण स्व पद पामीने, सिद्ध पदे स्थिरता करी।
ते सर्व सिद्ध स्वरुपने, करुं वंदना फरी फरी ॥२०॥

卐

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अष्टात्मक बोध अधिकार

[सुत्र]

प्रथम बोध अवस्था अधिकार

परमेष्ठी पदने नमी, सम्यक भावे आज ।
ग्रंथ तणी करुं योजना, आत्मार्थी जन काज ॥१॥
चैतन्यात्मक बोधनी, बोध अवस्था आठ ।
उपस्थित करी अंतरे, समजावा परमार्थ ॥२॥
कहुँ क्रमानुसार ते, विचारी ते मन ।
गुरु शीष्य संवाद रुप, सम्यक बोध कथन ॥३॥
विचारतां ते अंतरे, समजाशे परमार्थ ।
ते अनुसारे सेवतां, साध्य थशे आत्मार्थ ॥४॥
तेथी अंतर लक्ष थी, स्थिर करीने मन ।
सुणीए सम्यक बोध आ, भावे श्रोता जन ॥५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री सद्‌गुरु ने वंदना, करी अर्ज करुं हुं आज ।
अष्ट अवस्था बोधनी, मने समजावो गुरुराज ।।
ते बोधनुं अंतरस्वरुप शुं, शुं साधन मुख्य त्यां पुछुं हुं ।
अनुक्रमे बोधो ते नाथ, अष्ट अवस्था नो परमार्थ ।।
अहिं कृपा करी भगवंत – १

अन्वयार्थ—अहिं प्रारंभमां शीष्य श्री सद्गुरु प्रत्ये योग्य वंदनादि करी प्रार्थना करे छे के हे गुरुराज मने चैतन्यात्मक बोधनी अष्टात्मक एवी जे अवस्था ते कृपा करी समजावो, अने ते बोधनुं अंतर स्वरुप शुं ? कहेतां केवा प्रकारनुं होय छे, अने त्यां शुं साधन मुख्यपणे वर्ततुं होय छे ते पण हुं आपने पुछुं छुं, ते अनुक्रमे अष्टात्मक एवी आ बोध अवस्था नो परमार्थ हे भगवंत मने उपदेश आपी अहिं ते कृपा करी समजावो ।

विशेषार्थ—जेना आत्म भावना विषे आत्मार्थ संबंधी जिज्ञासा अंशे पण सत्यार्थरुप उत्पन्न थई छे, अने ते सत्यार्थरुप जिज्ञासा ने अनुयायी थयेलुं एवुं विर्यात्मक रुचीनुं वलण जेनुं अंशे पण सत्यार्थरुप बोधनी सन्मुखताने पाम्युं छे, ते तथारुप लक्षे निज उपादान शक्तिनी अंतरंग सन्मुखतापुर्वक वस्तुना परमार्थ बोधने समजवा योग्य एवी पोतानी परमार्थ योग्यता उत्पन्न करी तथारुप बोध परमार्थने समजाववा योग्य एवा तेना अनुकूल निमितनी आश्रय भक्तिमां तेनो वास्तविक प्रतितीपुर्वक योजाय छे, अने त्यां विनयादि भावोनी प्रधानतापुर्वक क्रमे क्रमे तथारुप बोध विशेषनुं पोताना विषे सन्मुखवर्ती परिणमन थवारुप एवी परमार्थ योग्यतानुं वर्द्धमानपणुं करी ते द्वारा ते तथारुप बोधना सन्मुखवर्ती परिणमनने पामे छे ।

आ उपरथी एम समजवा योग्य छे के ज्यां अंशे पण सत्यार्थरुप एवी आत्म जिज्ञासा होय छे, त्यां वस्तुना परमार्थ बोधने समजवा योग्य एवी परमार्थ योग्यता पण तथारुप जिज्ञासा ना बळे अवश्य उत्पन्न थाय छे, एटले प्रथम जीवे आत्मार्थ संबंधी सत्यार्थरुप जिज्ञासा उत्पन्न करवी एज जीवनी स्व सिद्धीना हेतुरुप एवी पोतानी प्राथमीक भुमीका छे, अने स्व सिद्धीनो सर्व आधार पण तेने ज अवलंबीने रहेलो छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुरुजी कहे शीष्य ने, सुण स्थिर मने तु भ्रात।
समजावुं तुजने अहिं, ते सम्यक बोधनी बात ॥
अंतर लक्षे सुणजे तुं, करुणा भावे कहुं छुं हुं।
विचारतां तेनो परमार्थ, समजाशे उत्तम आत्मार्थ॥

तुं सांभळ जिन प्रवचन—२

अन्वयार्थ—अहिं गुरुजी शीष्यने उत्तर आपतां कहे छे के हे शीष्य ते सम्यक बोधनी वात हुं तने अहिं मात्र करुणा भावे कही समजावुं छुं, ते तुं अंतर लक्षपुर्वक स्थिर मने करी आ श्री जिन प्रवचनने श्रवण कर, के जेनो परमार्थ विचारतां तने उत्तम एवो आत्मार्थ एटले आत्मानुं परम हित समजाशे, अर्थात ध्यानमां आवशे।

विशेषार्थ—जेनी द्रष्टी आत्मार्थ जिज्ञासापुर्वक आत्मार्थ बोध सन्मुख थई छे, एटले तत्व बोध समजवा योग्य एवी जेना विषे योग्य सद्पात्रता प्रगटी छे, तेने श्री सद्गुरु करुणात्मक भावे उपदेश आपी समजावे छे, अने ते समजणने अंतर्मुख लक्षे एवो ते आत्मार्थी जीव अवधारी पोतानुं आत्महित साधे छे, अने एज निमित उपादानना अनुकूल संधीना सिद्धांतिक नियम ने सर्व कोई आत्मार्थी जीवे पुनः पुनः विचारवा योग्य छे। हवे अहिं उपरोक्त गाथा सुत्रना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

अष्ट अवस्था बोधनी, तेने ज्ञान स्वरुप तुं जाण।
ते ज्ञान स्वरुपी जीवनुं, स्व साधन होय प्रधान ॥
ते ज्ञान के बोधनुं स्वरुप आंय, बोधुं अवस्था भेदे कांय।
अनुक्रमे विचारतां ते, स्थिर थशे बोध अंतर ए ॥३॥

अन्वयार्थ—चैतन्यात्मक बोधनी अष्टात्मक एवी जे अवस्था तेने तुं ज्ञान स्वरुप जाण, अने ते ज्ञान स्वरुपी जीवनुं स्व साधन होवाथी साधक दशामां ते प्रधानरुप होय छे। ते ज्ञान के बोधनुं स्वरुप अहिं तने कांईक अवस्था भेदे बोधुं छुं, ते अनुक्रमे विचारतां तथारुप बोध तारा अंतर परिणाम ना विषे स्थिर थशे, ते लक्षे हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषार्थ—बोध अने ज्ञान ए एकार्थी वचन होवाथी ते उभयनुं एकज स्वरुप छे, अने तेम होवाथी चैतन्यात्मक बोधनी जे जे अवस्थाविशेषने आ जीव अवलंबीत थाय छे, एटले सत्यार्थ बोधने आत्म परिणामी करे छे, ते ते बोध स्वरुप अवस्थाने ज्ञान स्वरुप अवस्थाना नामथी संबोधवामां आवे छे। तथा प्रकारनी बोध विशेष अवस्थाना आ सुत्रना विषे एकंदर आठ प्रकार उपस्थित करवामां आव्या छे, तेमां आदिना चार गृहीत मिथ्यात्वना अभावरुप छे, अने अंतना चार सर्वथा सम्यक्रुप छे। ते आठे प्रकारनी बोध विशेष अवस्थानी उपलब्धीनो सर्व आधार मात्र एक जीवना ज्ञान मुख्य एवा पोताना अंतर साधन पर ज रहेलो छे, अने ते जीवना निज परिणामरुप होवाथी आदिथी अंत पर्यंतनी एवी सर्व साधनात्मक अवस्थाना विषे ते निजात्म रुपे टकीने पण रहे छे, अने तेथी उपरोक्त सुत्रना विषे तेनुं प्रधानपणुं दर्शाववामां आव्युं छे।

आ उपरथी समजाशे के जीवना ज्ञान मुख्य एवा ते पोताना अंतर साधन ना बळे आत्मार्थ हेतुभुत पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे प्रगटेली के प्रगट थती, एवी जे चैतन्यात्मक बोध विशेष अवस्था तेने ज ज्ञान विशेष अवस्थाना नामथी संबोधवामां आवे छे, अने तेथी बोध अने ज्ञान एकार्थी वचनरुप होवाथी उपरोक्त सुत्रमां तेनुं ते अनुसार प्रतिपादन करवामां आव्युं छे, अने ते साथे तथा-रुप ज्ञानने, ज्ञानस्वरुपी एवा जीवनुं प्रधानरुप एवुं पोतानुं अंतर साधन होवानुं दर्शावी, आत्मार्थी जीवने तथा प्रकारनो सन्मुख लक्ष कराव्यो छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

पहेली अवस्थाना विषे, बोध तृणना अग्नि समान।
त्यां प्रगटी अंश विवेकनो, स्फुरे देवादि त्रयनुं सुभान॥
सत्संग योगे तेने आंय, विचारतां ते अंतर मांय।
तेथी ते योगे स्व हित, चिंतवे टाली सर्व ग्रहीत॥४॥

अन्वयार्थ—पहेली अवस्थाना विषे बोध तृणना अग्नि समान एटले जेम तृणरुप बारीक घासनी अग्नि अल्प काळ टकी शके तेवी कमजोर होय छे, तेम ते बोधनी मंदता के अल्पता होय छे, तों पण तथारुप बोधनुं परिणमन कोई सत्संग एटले प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगे विचारनो अंतर सन्मुखता-पुर्वक यथार्थरुप थयेलुं होवाथी ते वडे जीवने अल्पांशे पण संदविवेकनुं प्रगटपणुं थई ते द्वारा पोताने देवादि त्रयात्मक तत्वोनुं साचुं भान स्फुरे छे, अने तेथी ते सर्व प्रकारना गृहीत मिथ्यात्व ने टाळी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रत्यक्ष एवा ते सद्‌गुरु ना योगे पोतानुं आत्महित चिंतवे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जीवना अंतर परिणामना विषे आत्मार्थ हेतुभुत बोधनुं अल्पांशे पण सत्यार्थरूप परिणमन थवुं तेने बोधनी पहेली अवस्थाना नामथी संबोधवामां आवे छे। तथा प्रकारनी बोध परिणमनरूप पहेली अवस्था जे कोई आत्म जिज्ञासु जीवने कोई सत्संगना समीपवर्ती योगे प्रगटे छे, ते तृणना अग्नि समान एटले जेम तृणरुप बारीक घासनी अग्नि अल्प काळ टकी शके तेवी कमजोर होय छे, तेम ते बोधनी मंदता के अल्पता होय छे, तो पण ते विचारनी अंतर सन्मुखतापुर्वक अंतर्गत थयेलो होवाथी ते अल्पांशे पण कार्य साधक थई ते द्वारा पोताने अल्पांशे पण वास्तविक एवो तत्व संबंधी सद्‌विवेक प्रगटावे छे, के जे सद्‌विवेकना बळे पोताने सुदेवादि त्रयात्मक तत्वोनुं सत्यार्थरुप भान स्फुरायमान थई ते द्वारा पोताना अंतर परिणामना विषे सर्व प्रकारना गृहीतमिथ्यात्व जन्य एवा त्रयात्मक मुढतारुप दोषोनुं सर्व प्रकारे विलयपणुं थई जाय छे, अने तथा प्रकारनी अल्पांशे पण निर्मल अवस्था उपलब्धरुप थतां, प्रत्यक्ष एवा ते सद्‌गुरुना योगे एटले तेमनी आश्रय भक्तिमां रहीने ते पोतानुं आत्महित चिंतवे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

सुदेवादिनी प्रतितीने, अहिं कहीए ओघ प्रतीत ।
ग्रंथी भेद विना अहिं, होय अंतर एम खचीत ॥
तेथी प्रथम गुणस्थाने स्थित, थई स्व परने विचारे नित्य ।
गर्भीत शुद्धता तेथी आंय, थाय वृद्धीगत अंतर मांय ॥५॥

अन्वयार्थ—अहिं ते साधक जीवने थयेली एवी ते सुदेवादि प्रतितीने ओघ कहेतां सामान्यरुप प्रतिती कहेवामां आवे छे, अने ग्रंथी भेद विना एम अहिं खचीत करीने होय छे। तेथी ते साधक प्रथम गुणस्थानके स्थित थई त्यां नित्य स्व–पर स्वरुपने विचारे छे, अने तेथी अहिं अंतरना विषे गर्भीत शुद्धतानुं क्रमे करी वर्द्धमानपणुं थतुं जाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जे कोई साधक जीवने निश्चय सम्यग्दर्शन थवाना पुर्वे तथारुप स्व कार्यनी सिद्धीमां कारणत्वनो उपचार थई शकवा योग्य एवा सुदेवादिनी सामान्य रुप एवी स्वरुप प्रतिती

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थाय छे, तेने ओघ प्रतिती कहेवामां आवे छे । तथा प्रकारनी प्रतिती थतां, त्यां गृहीत मिथ्यात्वनुं अभावपणुं थई जाय छे, पण सुक्ष्म ग्रंथीभेदना अभावे त्यां अगृहीत मिथ्यात्वनी विद्यमानता अवश्य टकेली होय छे । तेथी अहिं ते साधक जीव तथा प्रकारनी दोष निवृत्ति अर्थे तथारुप एवा ते प्रथम गुणस्थानकना विषे स्थित थई त्यां स्व–पर स्वरुपनी भेद विचारणामां नित्य उपयोगने प्रेरे छे, जेम के चैतन्यपणुं ए आत्मानुं मुख्य लक्षण छे, अने तेना अभावरुप लक्षण ते जडनुं छे, एम बुद्धीपुर्वक आगम अनुमानादि प्रमाणने अनुसरी स्व–पर द्रव्यनो विचार करे छे, अने तेथी अहिं अंतरना विषे गर्भीत शुद्धतानुं, क्रमे करी वर्द्धमानपणुं पण थतुं जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये मिथ्यात्वना उभय भेद संबंधी अने सुदेवादिना स्वरुप संबंधी बोधनी याचना करे छे ।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पुछे हे नाथ ।
गृहीतागृहीत मिथ्यात्वनो, मने समजावो परमार्थ ॥
ते साथे देवादि त्रयनुं शुं, वास्तविक स्वरुप पुछुं हुं ।
गुरुजी कहे समजावुं ते, सुण तुं सन्मुख भावे ए ॥६॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये तेमने वंदन करी पुछे छे, के हे नाथ ! गृहीतागृहीत मिथ्यात्व कोने कहे छे, ते मने लक्षण भेदे कृपा करी समजावो, अने ते साथे सुदेवादि नु वास्तविक स्वरुप शुं छे, ते पण हे भगवंत हुं आपने पुछुं छुं । अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के ते हुं तने समजावुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने सन्मुख भावे श्रवण कर ।

विशेषार्थ—प्राथमीक एवी आ बोध अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवनुं बोधविशेष परिणमन अती अल्परुप होवा छतां तेनी आत्मार्थ जिज्ञासा अति उग्ररुप छे, एम तेनी सद् गुरु प्रत्ये थयेली निज उपादान शक्तिनी सन्मुखता परथी समजाय छे, अने ते उपरथी एम विचारवा योग्य छे के सतमां सतरुप एवा प्रत्यक्ष सद्गुरुना योग विना, जेम चैतन्यात्मक बोधनुं वास्तविक एवुं सन्मुखवर्ती परिणमन थतुं नथी, तेम ते संप्राप्त योगमां निज उपादान शक्ति तेमना सन्मुख प्रेर्या विना, पण तथारुप बोधनुं सन्मुखवर्ती परिणमन थतुं नथी । मतलब के निमित उपादाननी अनुकूल संधीनुं योग्य मीलन थयेज जीव स्वसिद्धीनी विजयताने पामे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोधविशेषथी समजवा योग्य छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गृहीतागृहीत मिथ्यात्वमां, गृहीत मिथ्यात्व नुतन जाण ।
अगृहीत अनादि नुं, जीव साथे रह्युं एक स्थान ॥
गृहीतमां त्रण मुढता जाण, अगृहीतमां अतत्व श्रद्धान ।
तेनो समजावुं विशेषार्थ, देवादि त्रयनुं पण ते साथ ॥७॥

अन्वयार्थ—गृहीतागृहीत एवा ते उभय मिथ्यात्वमां गृहीत मिथ्यात्व ए जीवनी विपर्यय भावरूप एवी नुतन भुलथी नवीन उत्पन्न थाय छे, अने तेमां मुख्यत्वे करी त्रयात्मक मुढतानो समावेश थाय छे, अने अगृहीत मिथ्यात्व ए जीवनी साथे अनादि काळथी एक क्षेत्रावगाहरुप संबंध विशेषपणे वर्ती रह्युं छे, अने तेमां मुख्यत्वे करी अतत्व श्रद्धाननो समावेश थाय छे, एम तुं जाण। ते बंने प्रकारना मिथ्यात्वनो विशेष बोध अने ते साथे देवादि त्रयनुं स्वरुप पण अहिं तने समजावुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—गृहीत अने अगृहीत एवा मिथ्यात्वना मुख्यत्वे करी बे प्रकार छे, ते उभयनुं लक्षण भेदे स्वरुप निचे प्रमाणे छे।

गृहीत मिथ्यात्व

जन्मथी वारसामां मळेली अने संसर्गथी, उपदेशथी, के शास्त्राभ्यासना शीक्षणथी अती दृढ थई गाढ संस्कार रुपे ठसेली एवी मताग्रह के लोकाग्रह भावरुप अनेक प्रकारनी मिथ्यात्वजन्य धर्म संबंधी मान्यताओने हठाग्रह भावे वळगी रहेवुं ते।

अगृहीत मिथ्यात्व

कोई पण प्रकारना उपदेश के शास्त्राभ्यासना शीक्षण विना, जीवनुं अनादि काळथी पर द्रव्य अने पर निमित्त जन्य भावोमां एकत्वबुद्धीपणुं अने परनी क्रिया हुं करी शकुं एवी मिथ्या मान्यतापणुं दृढ संस्कार रुपे वर्ती रह्युं छे ते ।

आ प्रमाणे बंने प्रकारना मिथ्यात्वनुं स्वरुप छे। ते उपरथी तेनी समालोचना करतां समजाशे के ज्यां ज्यां आ जीव नवीन संसर्गमां जन्माश्रीत संबंध विशेषने लईने योजाय छे, त्यां त्यां ते तथा प्रकारनी संस्कृतिने पोतापणानी बुद्धीथी अवलंबी ते द्वारा कुदेवादि सेवनारुप के सुदेवादिनी अन्यथा प्रतितीरुप एवी अनेक प्रकारनी त्रयात्मक मुढताना पोषकरुप विपर्यात्मक मान्यताओने ग्रहण करी एक नुतन भुलने बद्ध परिणामी करे छे, तेने गृहीत मिथ्यात्वना नामथी, अने अनादि काळ थी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अबोध एवा आ जीवनी विपर्यात्मक मुढताथी तत्वमां अतत्व श्रद्धानरुप अने अतत्वमां तत्व श्रद्धानरुप अने ते अनुसार पर द्रव्यथी पोताने अने पोताथी पर द्रव्यने हानी लाभनुं, सुख दुःखनुं, के राग द्वेषनुं कारण मानवारुप एवुं विपर्यात्मकपणु पोताना विषे एक क्षेत्रावगाहरुप संबंध विशेषपणे वर्ती रह्युं छे, तेने अगृहीतना नामथी, एम बंने प्रकारना मिथ्यात्वने भिन्न स्वरुपे ओळखवामां आवे छे।

उपरोक्त बंने प्रकारना मिथ्यात्वमां प्रथमना गृहीत मिथ्यात्वनुं मुख्यपणुं छे, कारण के ज्यां गृहीत मिथ्यात्व होय, त्यां अगृहीत मिथ्यात्व अवश्य होय, अने ज्यां अगृहीत मिथ्यात्व होय त्यां गृहीत मिथ्यात्वनी भजना एटले होय के न पण होय, अने तेथी प्रथम भेदरुप एवुं जे गृहीत मिथ्यात्व तेनुं ज्यां सुधी अभावपणुं न थाय एटले सत्यासत्य देव गुर्वादिक स्वरुपना वास्तविक निर्णयपुर्वक त्रयात्मक मुढताना पोषकरुप एवी ते विपर्यय भावरुप मान्यताओनो जीव परित्याग न करे त्यां सुधी बीजा भेदरुप एवा अग्रहीत मिथ्यात्वनुं अभावपणुं कोई पण प्रकारे थई शकवा योग्य नथी, एटले प्रथम जीवे गृहीत मिथ्यात्वनी निवृत्ति अर्थे तेना वास्तविक बोध परमार्थना परिचयमां योजावुं, ते योग्य छे, के जेथी क्रमे करी ते उभय भेदरुप मिथ्यात्वना अभावनो के एक साथे बंनेनी निवृतिनो जीवने सुअवसर संप्राप्त थाय। हवे अहिं तथारुप लक्षे सुदेवादि त्रयना वास्तविक स्वरुपनुं अने ते साथे धर्मना परमार्थनुं निश्चय व्यवहारनी संधीपुर्वक वास्तविक एवी जैनत्व दृष्टीए निरुपण करवामां आवे छे।

सत् देव

निश्चयथी शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावनुं पुर्ण आत्मज्ञरुप अखंड एवुं ज्ञायकपणु वर्ती रह्युं होय ते, अने व्यवहारथी तथारुप पुर्ण आत्मज्ञपुर्वक पुर्ण एवुं सर्वज्ञपणुं स्व–पर प्रकाशकरुप एवी संपुर्ण ज्ञानस्वभावनी एक समयनी पर्यायमां होवा साथे घाती कर्मावर्णोथी अने अष्टादश दोषोथी जे सर्व प्रकारे रहीत एवा अनंत चतुष्टयमय दर्शन ज्ञान उपयोगना युगपत धारक अने ते साथे चोत्रीस अतिशयोथी जे सर्व प्रकारे अलंकृत होय ते।

सत् गुरु

निश्चयथी शुद्धात्म स्वरुपना अस्खलित भान सहीत शुद्धोपयोगरुप एवी बाह्यांतर निर्ग्रंथ दशा पुर्वकनी साधनामां उपयोगनुं सन्मुखवर्तीपणुं होय ते, अने व्यवहारथी शुभोपयोगरुप एवा पंच महाव्रतादि अठ्ठावीस मुळ गुणना निरतिचार पालनमां योग उपयोगथी अप्रमत्तपणे रही जैन दिगम्बर मुनीपणे विचरता होय ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत् शास्त्र

निश्चयथी प्रत्येक प्रत्येक आत्मानी पृथक्तापुर्वक स्वाधिनतानुं अने त्रीकाली द्रव्य गुण पर्यायनी शुद्धतापुर्वक पुर्णतानुं जे शास्त्र ना विषे वास्तविक निरुपण वर्ततुं होय ते, अने व्यवहारथी जीवादि तत्वना पृथक पृथक बोधनुं अने चारे अनुयोगनी कथन शैलीनुं पुर्वापर अविरोध निरुपण जे शास्त्रना विषे होय ते ।

सत् धर्म

निश्चयथी शुद्धात्म स्वरुपना अस्खलित भान सहीत ज्ञायकरुप शुद्ध स्वभावे स्थिरता पर द्रव्य अने पर निमित जन्य भावोना भेदविज्ञानपुर्वक करवी ते, अने व्यवहारथी तथारुप अनेकांत दृष्टीना प्रधान लक्षे पर द्रव्य अने पर निमित जन्य भावोनुं सम्यक प्रकारे ज्ञान करवुं ते ।

आ प्रमाणे निश्चय व्यवहारनी संधीपुर्वक सुदेवादि त्रयात्मक तत्वोनुं अने सत धर्मनुं स्वरुप छे। तेनी बोध प्रतिती साथे स्थुल ग्रंथी भेदनो अविनाभाव होवाथी त्यां गृहीत मिथ्यात्वनुं अभावपणुं थई गर्भीत शुद्धता मिथ्यादर्शनना मंदोदय पुर्वक प्रगटे छे, अने तथारुप तत्वोनी सम्यक प्रतिती साथे सुक्ष्म ग्रंथी भेदनो अविनाभाव होवाथी त्यां अगृहीत मिथ्यात्वनुं अभावपणुं थई प्रगट शुद्धता मिथ्यादर्शननी उदय निवृतिपुर्वक प्रगटे छे, ए स्वभावीक नियम छे ।

उपरोक्त स्थुल अने सुक्ष्म एवी ए बंने ग्रंथी भेद सम्बन्धी विचारीए तो स्थुल ग्रंथी भेद थया बाद ते सुक्ष्म ग्रंथी भेदनुं कारण तथा प्रकारना आत्मार्थ हेतुभुत बोधनी सन्मुखवर्ती सेवनाथी तेम थई शकवा योग्य छे, वा तथा प्रकारनी देशना लब्धीथी विशुधीत जीवने तीव्र एवी आत्म जिज्ञासा ना बळे तथा प्रकारनी तत्व सन्मुख विचारणाथी तेम बनवा योग्य छे, ते विना तेम बनवुं के परंपरा नियमरुप कारण थवुं ते प्राए असंभवीत छे ।

उपरोक्त स्थुल अने सुक्ष्म एवी ए बंने ग्रंथी भेद साथे अविनाभावी संबंध रुपे रहेली अनुक्रमे ओघ अने सम्यक एवी ए बंने प्रतिती संबंधी विचारीए तो पर्याय जन्य भेद अवस्थानी गौणतापुर्वक सिद्ध सम शुद्ध अने पुर्ण एवुं स्वरुप संवेदन ज्यां सुधी पोताने भास्यमान न थाय, अने ते द्वारा शुद्धोपलब्धीरुप एवी उपयोगात्मक अनुभूती पोताने न प्रगटे त्यां सुधी तेने ओघ प्रतिती कहेवा योग्य छे। तेनी विद्यमानता उपदान अपेक्षाए स्व तरफनी विमुखताने लईने ज छे, अने निमितनी अपेक्षाए मिथ्यात्व जन्य उदयिक भाव होवानुं छे, ते स्व तरफना लक्षे निवृत थतां, ओघ सम्यकरुप थई जाय छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ प्रमाणे जे साधक जीव वस्तुना परमार्थने विचारी आत्मार्थ हेतुभुत बोध दाताना सन्मुखवर्ती योगने अवलंबीत थशे, ते क्रमे करी उपरोक्त बंने प्रकार ना मिथ्यात्वनुं अभावपणुं करी शुद्ध सम्यग्दर्शनने पामशे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये सम्यक्त्व विना थयेलो मुनी–लींगनो स्वीकार त्यां बोध परिणमनरुप अवस्था, अने गुणस्थान कयुं होय, ते संबंधी प्रश्न करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, पुछे प्रश्न करी बहु मान।
सम्यक्त्व वण मुनी लींग ज्यां, त्यां कहिये कयुं गुणस्थान ॥
ते साथे बोध अवस्था कई, ते पुछुं जिनागम दृष्टीथी अहिं।
गुरु जी कहे सुण तुं ए, ते दृष्टीथी समजावुं ते ॥८॥

अन्वयार्थ— अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये तेमनुं बहुमान लावी प्रश्न करे छे, के हे भगवंत! ज्यां सम्यग्दर्शन विना बाह्य मुनी लींग वर्ततुं होय त्यां कयुं गुणस्थान कहेवा योग्य छे? अनेते साथे त्यां बोध अवस्था कई होय छे? ते हुं आपने अहिं जिनागम दृष्टीथी पुछुं छुं। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने तथारुप दृष्टीथी समजावुं छुं, ते तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— आजे सौ कोई जैनावलंबी जीवोनी दृष्टी पोत पोताना मतार्थ भावने अवलंबीत होवाथी तेओ पोत पोताना समुदायना विषे बाह्य त्यागना चिन्ह रुपे दृष्टीगोचर थता मुख्य एवा ते वेषने महत्वनुं स्थान आपी एटले तथा प्रकारना वेष परिवर्तन साथे गुणस्थाननुं परिवर्तनशीलपणुं थतुं होवानुं पोतानी मान्यतामां स्वीकारी, तेना धारक एवा ते वेषधारी दिक्षीतोने मुनो एवा नामथी संबोधे छे, अने मात्र एक दृष्टी–रागनी प्रबळताना लीधे तेने ज धर्मगुरु तरीके स्वीकारी ते योगे पोताना जीवननी समाप्ती करे छे, ते एक मात्र जीवना अज्ञान भावनी हयातिनुं ज सुचन करे छे। अहिं तथारुप विषयने अनुकूल प्रश्न उपरोक्त एवो ते साधक जीव उपस्थित करे छे, ते तेनी तत्वशोधक दृष्टीनुं विशीष्ट भान करावे छे, अने ते साथे आत्मार्थ जिज्ञासानुं प्रबळपणुं होवानुं पण सुचन करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

सम्यक्त्व वण मुनी लींग ज्यां, त्यां कहीए प्रथम गुणस्थान।
ते साथे अवस्था बोधनी, चार आदि पैकी एक जाण ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सन्मुख साधकनी आ वात, कही जिनागम द्रष्टीए भ्रात।
हवे विमुखता सेवे जे, समजावुं तुजने अहिं ते ॥९॥

अन्वयार्थ—ज्यां सम्यग्दर्शन विना बाह्य मुनी लींग कहेतां निग्रंथ दशानो स्वीकार करवामां आव्यो होय, त्यां ग्रन्थी भेदना अभावे नियमा प्रथम गुणस्थान ज होय, अने ते साथे आदिनी चार बोध अवस्था पैकी कोई पण एक बोध अवस्था अहिं तेने वर्तती होय एम तुं जाण। आ वात तने हे भ्रात जिनागम द्रष्टीथी सन्मुखवर्ती साधकनी कही। हवे अहिं तथारुप बाह्य लींगने कहेतां दिगम्बर निग्रंथ दशाने ग्रही जे विमुख भावे वर्ती रह्या छे, ते वात तने समजावुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जिनागम द्रष्टीए विचारीए तो सम्यग्दर्शननी उपलब्धी विना कोई पण साधक जीव मुनीपणानी भावनानो के मुनी दिक्षानो अधिकारी थई शकतो नथी, अने तेना अभावे अप्रमत स्वभाव स्थिरतारुप एवा मुनीपणाना भाव लींगने पण ते स्पर्शी शकतो नथी। मतलब के सम्यग्दर्शननी उपलब्धीपुर्वक चतुर्थ के पंचम गुणस्थाने मुनीपणाना विकल्पनुं उपस्थितपणुं थवुं तेनुं नाम स्वभाव स्थिरता अवतारुप एवी अंतरंग स्फुरायमान थयेल सद्भावना छे, अने ते अनुसार षष्टमगुणस्थाननो एटले सर्व संग परित्यागरुप एवी बाह्यांतर मुनी लींगनी कहेतां दिगम्बर निग्रंथ दशानी प्राप्ती करी अप्रमत स्वभाव स्थिरतारुप एवा सप्तम गुणस्थाने शुद्धोपयोगनी अंतर्मुख सिद्धी करवी तेनुं नाम मुनीपणानी (भावलींगनी) प्राप्ती थवी ते छे।

आ उपरथी समजाशे के मोक्ष मार्गनी बाह्यांतर साधनामां सम्यग्दर्शननुं ज मुख्यपणुं छे, एटले तथारुप मार्गनी शरुआत पण सम्यग्दर्शनथी ज थाय छे। ते विना मुनीपणानी भावनां के मुनी दिक्षाना विकल्पनुं उपस्थितपणुं थवुं ते अंधाए आरसीनो बोजो उपाडवा जेवुं छे। मतलब के तेवा प्रकारनी दिक्षा कोई पण प्रकारे आत्मार्थ हेतुभुत थती नथी, अने तेथी तेवा साधकनुं अस्तित्व सम्यग्दर्शन ना अभावे प्रथम गुणस्थाने ज होय ए सहज अने स्वभावीक छे, अने ते जिनागम द्रष्टीथी सम्मत करवा योग्य छे।

आम वस्तुस्थिति होवा छतां अहिं तेवो कोई आत्मार्थ साधक जीव पोते पोतानी आत्मार्थ जिज्ञासाने अवलंबी ते अर्थे ज्ञानादि सम्यक त्रयरूप एवा भाव मोक्ष मार्गनी प्राप्ती के तेनी अंतर्मुख सिद्धी अर्थे पोते तथा प्रकारना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमां उजमाळ थयो होय, अने ते अर्थे स्वछंद निरोध-पणे एटले कोई प्रत्यक्ष सद्गुरुनी आज्ञानुसार सर्व संग परित्यागी थई तेमनी आश्रय भक्तिमां एटले

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तथारुप सत्संगनी सन्मुखवर्ती सेवनामां नित्य आत्मार्थ अनुकूलपणे वर्ततो होय, तो तेवा प्रकारना सन्मुखवर्ती साधकने प्रथमनी चार अवस्था पैकी कोई पण एक बोध अवस्था तेने अंतरंगना विषे वर्तती होय, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरूपण करवामां आवे छे।

बाह्य लींग ग्रही दुराग्रहमां, जे वर्ते थई मोहावेश।
ते गुणस्थानक पहेले रही, पोषे विमुख भाव विशेष ॥
तेथी स्व प्रत्ये बेभान, सर्वथा साधक होय जाण।
तेथी बोध अवस्था नौय, आदिनी चार पैकी कोय ॥१०॥

अन्वयार्थ—जे जीव बाह्य मुनी लींगनो स्वीकार करी अनेक प्रकारनी मतार्थ दृष्टीरुप एवा दुराग्रह भावमां मोहावेशपणे वर्ततो होय ते जीव तथारुप विमुखताना लीधें पहेला गुणस्थानना विषे मिथ्यात्वादि भावोने विशेष प्रकारे पोषनारो पण स्वभावीक ज होय छे, अने तेथी ते साधकनुं स्व प्रत्ये सर्वथा बेभानपणु होवाथी प्रथमनी चार बोध अवस्था पैकी एक पण बोध अवस्था अहिं तेने न वर्तती होय, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे जीव बाह्य मुनी लींगनो कहेतां दिगम्बर निग्रंथ दशानो स्वीकार करी अनेक प्रकारना मतार्थ भावने पोषवारुप, के बाह्य क्रियात्मक भावोना मिथ्याभिनीवेशने दृढ़ करवा रुप, के त्याग वैरागादि एवा ते बाह्य शुभ साधनोने मोक्षमार्ग, के तेमां धर्मनुं अस्तित्व मानवारुप एवा अनेक प्रकारना दुराग्रह भावमां एकांत मोहावेशपणे वर्ततो होय, ते जीव तथारुप विमुखताना लीधे पहेला गुणस्थान ना विषे मिथ्यात्वादि भावोनो विशेष प्रकारे पोषक बने, ए स्वभावीक छे, अने तेथी ते साधकनुं स्वभाव सन्मुखताना मार्ग प्रत्ये के ते अर्थे जिवादि तत्वना परमार्थ बोधनी अंतरंग सन्मुखताना बाह्य निमित कारणरुप एवा सत्संगादि साधन प्रत्ये सर्वथा बेभानपणुं पण स्वभावीक ज वर्ती रहेलुं होय छे, अने तेम होवाथी प्रथमनी चार बोध अवस्था पैकी एक पण बोध अवस्था एवा ते विमुखवर्ती साधकने वर्तती न होय ए सहज अने स्वभावीक छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

दुराग्रह भावे रही, कदी सेवे ते व्यवहार।
तो ते जीन आशातना, करी भमे आ संसार ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ते करतां उत्तम कहीए ते, बोध अवस्था पहेलीमां जे ।
होय कदी तेनो गृहवास, तो पण आत्मार्थी ते खास ॥११॥

अन्वयार्थ—जो कदी ते साधक जीव तथा प्रकारना दुराग्रह भावे रही बाह्य व्यवहार सेवनारुप प्रवृतिने आदरे तो ते श्री जिननी आशातना करी आ संसारना विषे भव भ्रमणने पामे, ते करतां उत्तम तेने ज कहीए के जे पहेली एवी आ बोध अवस्थाना विषे वर्ततो होय, कदाच तेने पुर्व प्रारब्ध योगे गृहवास होय, तो पण ते अवश्य आत्मार्थी छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जे जीव बाह्य मुनी लींग कहेतां दिगम्बर निग्रंथ दशानो स्वीकार करी एकांत पर लक्षे दुराग्रह भावोमां वर्ते छे, के ते दुराग्रह भावपुर्वक उपदेशादि बाह्य व्यवहार प्रवृतिने सेवे छे, ते स्वात्म विराधनानी अंतर प्रधानतापुर्वक श्री जिननी पण महा आशातना करे छे। आवा प्रकारना विपर्यय भावे उत्पन्न थयेल एवी आ भुलना फल रुपे ते उत्कृष्ट एवा संसार पर्यटनने पामे छे । आवा प्रकारनुं स्व प्रत्येनुं सर्व प्रकारे विमुखवर्तीपणुं होवाना लीधे ते साधक जीवने प्रथमनी चार बोध अवस्था पैकी एक पण बोध अवस्था होती नथी, अने तेथी तेवा द्रव्य लींग धारी साधु जीवन करतां गृहवासमां स्थित एवो जे आ पहेली बोध अवस्थाना विषे वर्ततो जीव तेनुं मुख्य एवुं आत्मार्थपणुं होवाथी तेने उत्तम कहेवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं पहेली एवी आ बोध अवस्थाना विषे उत्पन्न थता एवां जे सम्यग्दर्शननां षट कारणो ते संबंधी निरुपण करवामां आवे छे ।

सम्यकत्वनी उपलब्धीमां, दश कारण मुख्यत्वे धार ।
ते पैकी षट कारण अहिं, प्रगटे तेने कहुं ते विचार ॥
पहेलुं सत्संग वर्ते मुख्य, बीजुं सु विचार अंतर्मुख ।
त्रीजुं प्रथम चतुष्टय आंय, सु विचारे उपशमे अंतर कांय ॥१२॥

अन्वयार्थ—सम्यग्दर्शनने उपलब्धीमां मुख्यत्वे करीने दश कारणो आवश्यक रुप छे, ते पैकी अहिं तेने षट कारणो प्रगटे छे, ते अनुक्रमे तने विचारवा अर्थे कहुं छुं । पहेलुं सत्संग—अपुर्व आत्मार्थप्रेरक एवा कोई प्रत्यक्ष सद्गुरुनो सुयोग संप्राप्त थवो ते । बीजुं सुविचार अंतर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रेणी–तथारुप सत्संग ना योगे थयेला अपुर्व आत्मार्थ प्रेरक बोध श्रवणथी अंतर सुविचार श्रेणीनुं प्रगटपणुं थवुं ते। त्रीजुं प्रथम चतुष्टयनो कंईक उपशम–तथारुप सुविचार श्रेणीना निमितथी प्रथम चतुष्टयरुप एवी पुदगल कर्मरुप शक्ति विशेषनुं तेना पोताना कारणे कंईक दबाई जवुं ते, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मार्थ साधनामां के आत्मार्थ सन्मुख थवामां तेनुं मुख्यमां मुख्य साधन बाह्य निमितनी अपेक्षाए मात्र एक सत्संग ज छे, अने तेथी कोई पण कल्याण साधक एवा आत्म-जिज्ञासु जीवनी प्राथमिक भुमीका त्यांथी ज एटले सत्संगथी ज शरु थाय छे। आवा प्रकारनो सत्संग संबंधीनो परम सद्विवेक जे जीवने प्रगटे छे, एटले आत्मार्थ सन्मुख थवामां सत्संगरुपी साधननुं अती आवश्यकपणुं होवानुं तेना भानमां आवे छे। ते जीव आत्मकल्याणना वास्तविक ध्येयनी दृढतापुर्वक अने तथारुप सत्संगना योगनी अत्यंत तालावेलीपुर्वक तेनी सम्यक योगे शोध करे छे, अने ते योग संप्राप्त थतां, ते तेनी सन्मुखवर्ती उपासनाने सम्यक योगे अवलंबे छे. अने ते योगे क्रमे करी त्यां अपुर्व एवी अंतर सुविचार श्रेणीनुं उपलब्धपणुं थई प्रथम चतुष्टयरुप (अनंतानुबंधी कषायनुं) एवी पुदगल कर्मरुप शक्ति विशेषनुं तेना पोताना कारणे कंईक उपशमपणुं कहेतां मंद रसोदय रुपे दबाई जवुं पण थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

चोथुं गर्भीत शुद्धता, स्फुरे तेने विशेष प्रकार।
तेथी प्रगटे पांचमुं, सत्यासत्यनो विवेक सार॥
छट्ठुं कारण तेथी आंय, प्रगटे तेने अंतर मांय।
स्थुल ग्रंथी भेद तेनुं नाम, पामे मतार्थ दृष्टी विराम॥१३॥

अन्वयार्थ—चोथुं गर्भीत शुद्धता–सुविचार श्रेणीना निमितथी प्रथम चतुष्टयनुं कंईक उपशमपणुं थतां जीव अवस्थाना विषे गर्भीत शुद्धतानुं स्फुरायमानपणुं जीवना पोताना कारणे थवुं ते। पांचमुं सत्यासत्यनो विवेक–तथारुप गर्भीत शुद्धताना बळे अंतरंगना विषे सत्यासत्यनो परम सद्विवेक देशना लब्धीपुर्वक प्रगट थवो ते। छट्ठुं स्थुल ग्रंथी भेद–तथारुप सद्विवेक ना बळे स्थुल ग्रन्थी भेद एटले त्रयात्मक मुढताना हेतुरुप एवा सर्व गृहीत मिथ्यात्व जन्य रागादि भावनुं सर्व प्रकारे विरामपणुं थवुं ते। एम अनुक्रमे छ कारणो प्राथमीक एवी आ बोध अवस्थाना विषे प्रगटे छे, ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषार्थ— आत्मार्थ हेतुभुत एवी सुविचार श्रेणीनुं के तथा प्रकारना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनुं ज्यां सुधी जीवने अभावपणुं वर्ते छे, त्यां सुधी आत्मार्थ हेतुभुत शुद्धताना निमितभुत आवरणरुप एवा प्रथम चतुष्टयनुं अर्थात अनंतानुबंधी कषायनुं उदय रुपे होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे। ज्यारे कोई पात्र जीवने सत्संग योगे थयेली बोध सन्मुखताना बळे अंतर सुविचार श्रेणीनुं उपलब्धपणुं थाय छे, त्यारे निमितभुत आवरणरुप एवी ते कषायोदय जन्य मलीनतानुं अमुक प्रमाण मां तेना पोताना कारणे उपशमपणुं थई जाय छे, अने तेम थवाथी नैमितिक एवा जीव भावना विषे गर्भीत शुद्धतानुं स्फुरवुं सहज तेना पोताना कारणे थाय छे, तेम थवाथी त्यां सत्यासत्यनो परम सद्विवेक देशना लब्धीना अंतर अवधारपुर्वक एवा ते सुविवेकी जीवने प्रगटे छे, अने तेम थतां त्यां सुदेवादि त्रयात्मक मुढताना हेतुरुप, के मतार्थ भावनी मलीन वासनाना पोषकरुप एवा गृहीत मिथ्यात्व जन्य रागादि भावनुं सर्व प्रकारे विरामपणुं थई जाय छे, जेने स्थुल ग्रंथी भेदना नामथी संबोधवामां आवे छे।

आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननी उपलब्धीना निमितभुत एवा षट कारणो उपरोक्त एवा ते साधक जीवने प्रथमनी एवी आ बोध अवस्थाना विषे प्रगटे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध परमार्थथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं शीष्य गुरु जी प्रत्ये अनंतानुबंधी कषायना लक्षणादि बोध विशेषनी याचना करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पूछे एम।
शुं लक्षण अनंतानुबंधीनुं, ने थाय अनंत बंध त्यां केम ॥
त्यां कयुं कारण होय विशेष, ते कहो कृपालु दई उपदेश।
गुरु जी कहे ते कहुं आंय, शुण थई सन्मुख अंतर मांय ॥१४॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरु जी प्रत्ये वंदन करी एम पुछे छे के हे भगवंत ! अनंतानुबंधी एवा ते कषायनुं शुं लक्षण छे ? अने तेनो अनंत बंध केवी रीते थाय छे, अर्थात् तेम थवाना हेतुरुप एवुं त्यां कयुं कारण विशेष रुपे एटले मुख्यपणे वर्ततुं होय छे ? ते हे कृपाळु मने उपदेश दईने समजावो। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने समजावुं छुं, ते तुं अंतरना विषे सन्मुख थई आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—अनंतानुबंधी कषायनो समावेश मुख्यत्वे करी मोहनीयकर्मना बीजा विभागरुप एवा चारित्र मोहीनीय कर्ममां थाय छे। तथारुप कषायनुं वास्तविक लक्षण शुं ? अने तेना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंधनुं विशेषरुप कारण शुं ? ए प्रश्न बोध सन्मुखताने पामेल एवा कोई आत्मार्थी जीवने पोतानी प्राथमीक भुमीकामां अती आवश्यकरुप छे, अने ते ज हेतु लक्षने अवलंबी अहिं एवो ते तत्व जिज्ञासु आत्मार्थी शीष्य गुरुजी ने ते संबंधीनो प्रश्न करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

ज्यां वर्ते सुगुरु प्रत्ये, अप्रतिती ने मन द्वेष ।
ते अनंत बंध थवा तणुं, कहीए कारण मुल विशेष ।।
तेम थवामां गच्छ मत मोह, ने तेथी थाय सुगुरुनो द्रोह ।
अनंत बंध करावे ते, लक्षण अनंतानुबंधीनुं ए ।।१५।।

अन्वयार्थ—ज्यां सद्‌गुरु प्रत्ये अप्रतिती अने मनना विषे द्वेष भाव वर्ततो होय त्यां अनंत बंध थवारुप एवुं ते मुळ विशेषरुप कारण कहेवा योग्य छे, अने तेम थवामां त्यां गच्छाग्रह के मताग्रह भावरुप एवुं पोतानुं मोहावेशपणुं होवानुं छे, अने तेथी परमार्थपोषक एवा ते आत्मज्ञ पुरुषनो द्रोह कहेतां ते जीव भयंकर आशातना करे छे, अने ते ज अनंतानुबंधीनुं मुख्यत्वे करी लक्षण छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—सामान्य प्रकारे ज्यां ज्यां क्रोधादि कषायनुं तीव्रोदयपणुं मुख्य पणे वर्ततुं होय वा तेवा प्रकारनी हिंसात्मक प्रवृति बाह्य दृष्टीगोचर थती होय, त्यां त्यां तेने अनंतानुबंधीनुं स्वरुप के लक्षण कहेवामां आवे छे, ए एक तेनो सामान्य प्रकार छे, कारण के पूर्वे तेवी अनेक युद्धादि प्रपंचरुप एवी हिंसात्मक प्रवृति स्थुल दृष्टीए तथारुप कषाय विशेष परिणामे थती होवानुं सामान्य प्रकारे देखावा छतां तेमांना केटलाक जीवो ते ज भवे पण मोक्ष पदने पाम्या छे, अने तेवा घणा दाखलाओ आपणने जिनागमथी मळी पण आवे छे, एटले तेने ज जो आपणे अनंता-नुधीनुं स्वरुप के लक्षण एकांत कल्पी लईए तो ते कषायथी तेने अनंत संसारनी वृद्धी थवारुप एवो अनंत बंध थवो जोईए, पण तेम तो त्यां थयुं नथी, तो पछी अनंतानुबंधीनुं वास्तविक लक्षण शुं ? ए प्रश्न सहज उपस्थित थाय छे, तेनुं समाधान एज के ज्यां परमार्थना विषे अपरमार्थ बुद्धि होवी अने अपरमार्थना विषे परमार्थ बुद्धि थवी, अने तथारुप बुद्धीना विपरिताभिनीवेशपुर्वक एकान्त मताग्रह दृष्टीने अवलंबी उपयोगनी विषम प्रवृति करवी एटले परमार्थ पोषक एवा कोई आत्मज्ञ पुरुष प्रत्ये क्रोधादिरुप एवा द्वेष परिणामे वर्तवुं के तेमने उपसर्गादि करवारुप अकार्यमां प्रेरावुं, त्यां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तथारुप कषायनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने तेने ज अनंतानुबंधीनुं वास्तविक लक्षण कहेवा योग्य छे, अने अनंत संसारनी वृद्धीरुप एवा अनंत बंधनो हेतु पण तेज छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

तथारुप कषायनुं, अवलंबन मिथ्यात्व धार ।
तेथी त्रय मुढता तणुं, मुल कारण तेह विकार ॥
अनंत दोष ने दुःखनुं जे, कारण पण जाण अंतर ए ।
सुविवेके ते दोष जो जाय, तो अभाव ते कषायनो थाय ॥१६॥

अन्वयार्थ— तथारुप कषाय भावनुं अस्तित्व मात्र एक मिथ्यात्व रुपी विपर्यय भावने अवलंबीने ज टकी रहेलुं छे, अने तेथी सद्गुर्वादिक त्रयात्मक मुढतानुं मुळ कारण पण ते ज कहेतां मिथ्यात्व रुपी एवा ते विकार भावनुं ज छे, एम तुं धार, वळी अनंत दोष अने दुःख उत्पन्न थवानुं जे कारण छे, ते पण ते ज छे, एम तुं अंतरना विषे जाण, ते मिथ्यात्व रुपी मुल बीजभुत दोषनो सुविवेके करी जो निवृत्ति थाय, तो तथारुप एवा ते अनंतानुबंधी कषायनुं पण त्यां अभावपणुं थई जाय, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—मोहीनीय कर्मना मुख्यत्वे करी बे विभाग छे, एक दर्शन मोहीनीय, अने बीजो चारित्र मोहनीय, तेमां प्रथमनो दर्शन मोहनीय विभाग ते जीवनी अतत्व श्रद्धानरुप एवा मिथ्यादर्शनने अवलंबीने टकेलो छे, अने बीजो चारित्र मोहनीय विभाग ते जीवना रागादि वा क्रोधादिरुप एवा शंकलेष परिणामने अवलंबीने टकेलो छे। तथारुप एवा ते बंने विभागमां प्रथमनो एवो जे दर्शन मोहनीय विभाग तेनी साथे कहेतां तथारुप एवा ते मिथ्यात्व साथे बीजा विभागरुप एवा चारित्र मोहीनीयना मुख्यमां मुख्य एवा प्रथम चतुष्टयरुप अनंतानुबंधी कषायनुं अविनाभावपणुं होवाथी मिथ्यात्वनी हयाति पर्यंत तेनी हयाति नियमा होय छे, अने तथारुप अनंतानुबंधीनी हयाति पर्यंत बुद्धीना विपर्यय भावपुर्वक रागादि वा क्रोधादि भावनुं अती शंकलेषपणुं अने चारित्रमोहीनीयना शेष सर्व कषायनुं अबाधितपणे टकवापणुं पण तेने अवलंबीने एक सरखुं रहे छे, अने तेथी ज्यां ज्यां बुद्धीना विपर्यय भावपुर्वक रागादि वा क्रोधादि भावरुप एवी शंकलेषात्मक प्रवृति होय छे, त्यां त्यां ते नियमा मिथ्यात्वपुर्वक होवाथी तथारुप शंकलेष परिणाम विशेषमां मुख्यपणे अनंतानुबंधी कषायनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते त्यां अवश्य होय छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—तथारुप चतुष्टयना क्रोध, मान, माया, लोभनुं वास्तविक स्वरुप शुं छे ? अने मुख्य-पणे कये कये स्थाने तेने ते नामथी ओळखवामां आवे छे ?

उत्तर—तथारुप चतुष्टयना क्रोध मान माया लोभनुं स्वरुप अने तेने तथारुप नामथी ओळ-खवाना मुख्य स्थानो निचे प्रमाणे छे।

अनंतानुवंधी क्रोध

पोतानी विर्यात्मक रुचीना वलणने एकांत विभाव भावोमां दृढ करी शुद्ध चैतन्यात्मक एवा पोताना स्वभाव सन्मुख मार्ग प्रत्ये अरुची प्रदर्शीत करवी ते।

अनंतानुबंधी मान

देहादि समस्त पर जन्य क्रियाने हुं करी शकुं एवा पोताना मिथ्या अहंमां विर्यात्मक रुचीना विमुखवर्ती वलणने प्रेरी तेने विशेष प्रकारे दृढ करवुं ते ।

अनंतानुबंधी माया

सत सुख, अने सत धर्म, ए पोताना स्वाधिन वस्तु स्वभावमां होवा छतां, अने तेना बोध पर-मार्थने समजवा योग्य एवी ज्ञान उघाड शक्तिनी उपलब्धी छतां, ते शक्तिने पोते मायिक सुखनी लुब्धताना लीधे छुपावी पोते पोताना आत्माने ठगवो ते ।

अनंतानुबंधी लोभ

पुण्यादि भावोमां आत्मीक सुख अने धर्म होवानी मिथ्या मान्यताने वश थई तेनी वर्द्धमानताना पुरुषार्थमां एकांत विर्यात्मक रुचीना वलणने प्रेरीत करवुं ते ।

आ प्रमाणे अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभनुं वास्तविक स्वरुप छे। हवे अहिं तेने तथारुप नामथी ओळखवा योग्य एवा मुख्य स्थानोनुं निरुपण करवामां आवे छे ।

१—जे कषाय मिथ्यात्व रुपी एवा मुळ बीजभुत महा कषायने अवलंबीने नियमा एक सरखी हयाति धरावतो होय तेने अनंतानुबंधीना नामथी ओळखवामां आवे छे ।

२—जे कषाय मिथ्यात्वना बंधपुर्वक नियमा बंध विशेष रुपे परिणमतो होय, तेने अनंतानुबंधीना नामथी ओळखवामां आवे छे ।

३—जे कषाय बुद्धीना विपर्यय भावपुर्वक थता एवा रागादि वा क्रोधादि भावरुप शंक्लेष परिणाम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषमां नियमा पोतानी हयाति एक सरखी टकावी राखनारो होय तेने अनंतानुबंधीना नामथी ओळखवामां आवे छे ।

४—जे कषाय सत्यासत्य देव गुर्वादिक स्वरुपना विरोध निर्णयपुर्वक विनयादि सेवनाने अवलंबीत थई प्रवर्ततो होय, तेने अनंतानुबंधीना नामथी ओळखवामां आवे छे ।

५—जे कषाय जीवना स्वरुपाचरण चारित्रनो नियमा घात करनारो होय, के तेनी उपलब्धीने रोकनारो होय, तेने अनंतानुबंधीना नामथी ओळखवामां आवे छे ।

आ प्रमाणे अनंतानुबंधीनुं स्वरुप विचारतां तत्व शोधक जीवने स्पष्ट समजाशे के जे जीवने मताग्रह दृष्टीरुप अभिनीवेशनुं मुख्यपणुं वर्ते छे, ते जीव तथारुप कषाय भावनी मुढताने एकांत अवलंबीत होवाथी तेनामां सत्यासत्यनी तुलनात्मक शक्तिनो सद्विवेक अंश मात्र पण होतो नथी, अने तेथी ते एकांत मताग्रह भावपुर्वक तथारुप कषाय भावने अवलंबी प्रत्यक्ष एवा कोई सत्पुरुषनी के जे सत्पुरुषनी उपासना करवाथी, के तेमना गुणातीशयना चिंतवनमां उपयोगने प्रेरवाथी, के तेमनी आश्रय भक्तिमां योजावाथी, के तेमनी आज्ञाए वर्तवाथी, आत्मा सहज सुलभ बोधी थई आत्मार्थ सन्मुखताने पामे, अने ते द्वारा अनंत संसारनो क्षय करी सर्व दुःखथी मुक्त थाय, ते सत्पुरुषनी ते वणी वखते भयंकरमां भयंकर आशातना करे छे, अने तेने ज श्री जिने भयंकरमां भयंकर पाप कह्युं छे, कारण के ज्ञानीने अज्ञानी कहेवामां, अने अज्ञानीने ज्ञानी कहेवामां, अने तथा प्रकारनी विपर्यात्मिक मुढताने अवलंबी तेमनी आशातना करवामां महामोहनीय कर्म तीव्र रसे बंधाय छे, अने ते तेने उत्कृष्ट संसार पर्यटननुं कारण थाय छे। तेथी सर्व जीवोए आ मुख्यमां मुख्य बात प्रथम विचारीने पोताना विषे वर्ती रहेली एवी जे आ मताग्रह भावरुप विषम दृष्टी तेने स्वात्म हितार्थे वमी तेवा आत्मज्ञ-पुरुषनी आशातना करतां बचवुं । कदाच वर्तमान विचरता तेवा कोई ज्ञानी पुरुषनां लक्षणो पोताने पोतानी मती मुढताथी लक्षगत न थई शके तो तेवा प्रसंगे त्यां मध्यस्थ रहेवुं ते स्वात्म श्रेयना इच्छक जीवोने नुतन दोषनी उत्पत्तिना अहेतुपणाथी कल्याणरुप छे ।

उपरोक्त बोधने जे जीव निज आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक विचारशे, तेने अनंतानुबंधीनुं स्वरुप के वेनुं वास्तविक लक्षण अवश्य भानमां आवशे, अने ते साथे तथारुप कषायना निवास स्थानो पण समजाशे, अने ते समजपुर्वक पोताना विषे वर्तमान उदय रुपे वर्तता एवा ते दोषोनुं सम्यक योगे अभावपणुं पण थशे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेष अवस्था गुणरुप, अहिं स्फुरे ते मन विचार ।
मैत्री आदि चार भावना, होय मुख्यपणे अहिं धार ।।
द्वादश अनुप्रेक्षा पण चित्त, वर्ते वैराग भावे नित्य ।
हेयोपादेयनी तेथी आंय, पृथकता होय अंतर मांय ।।१७।।

अन्वयार्थ—पहेली अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवने अहिं प्रगटरुप थती विशेष एवी जे गुणरुप अवस्था ते तुं मनना विषे विचार । अहिं तेने मैत्री आदि चार भावना मुख्यपणे होय छे, ते साथे द्वादश अनुप्रेक्षा पण तेने वैराग भावनो अंतर स्थिरतापुर्वक नित्य चित्तना विषे वर्तती होय छे, एम तुं धार, अने तेथी हेयोपादेयनी पृथकता पण तेने अहिं अंतरंगना विषे होय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—अहिं पहेली अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवनी वैराग उपशम भावरुप एवी गुण विशेष अवस्था केवा प्रकारनी होय छे, ते संबंधी विचारीए तो सत्संगना योगे जेम जेम ते साधकने आत्मार्थ बोधनी अंतर सन्मुखता थती जाय छे, तेम तेम त्रयात्मक सद्विवेकनी प्रधानतापुर्वक त्यां वैराग्य उपशम भावनुं अंतर स्थिरतापणुं आवतुं जाय छे, अने तेथी त्यां मैत्री आदि चार भावनामां के द्वादश अनुप्रेक्षाना बोध विचारमां उपयोगनी अंतरंग सन्मुखता अने ते साथे हेयोपादेयनी पृथकतापुर्वक मुख्यपणे अप्रशस्त एवा अशुभ रागादि भावो प्रत्ये औदासीनता तेना अंतर परिणामना विषे सहज उपलब्धरुप थाय छे, ते मैत्री आदि चार भावना अने द्वादश अनुप्रेक्षानुं स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

मैत्री

सर्व जीवो सम सत्तात्मक होवानुं स्वभाव लक्षे विचारी तथारुप लक्षे सर्वत्र विशुद्ध एवी प्रेम दृष्टी स्थिर करवी ते ।

प्रमोद

शुद्ध आत्मार्थ प्रेरक एवा सुदेवादि त्रयात्मक तत्वो प्रत्ये के तथारुप मार्गना सन्मुखवर्ती उपासक प्रत्ये अत्यंत गुण विशेष दृष्टीनी अंतर सन्मुखतापुर्वक उल्लासीत थवुं ते ।

करुणा

स्वात्म प्रत्ये करुणात्मक बुद्धी स्थिर करी सर्व प्रकारना विभाव जन्य भावोथी तेनुं मुक्तपणुं चिंतववुं ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मध्यस्थता

जगतना सर्व पदार्थो प्रत्ये निस्पृह बुद्धी, स्थिर करी सर्वत्र वृत्तिनुं औदासीनपणुं करवुं ते ।

आ प्रमाणे मैत्री आदि चार भावनानुं स्वरुप छे । हवे अहिं द्वादश अनुप्रेक्षानुं स्वरुप प्रतिपादन करवामां आवे छे ।

अनित्य अनुप्रेक्षा

कर्मोदय जन्य निमितथी संप्राप्त थयेल एवा सर्व संयोग रुप बाह्य ज्ञेय जन्य पदार्थोनी क्षणीक अवस्थाने अत्यंत सद्विवेक पुर्वक विचारी ते प्रत्येना मोह जन्य विकारनुं अभावपणुं वस्तु स्वभावना लक्षे करवुं ते ।

अशरण अनुप्रेक्षा

अशरणरुप एवा आ संसारना विषे, शरणरुप एवा पोताना मुळ वस्तु स्वभावने विचारी तेनो सम्यक त्रय रुप एवी अंतर्मुख सेवनाने सम्यक योगे अवलंबीत थवुं ते ।

संसार अनुप्रेक्षा

मिथ्यात्वादि अशुद्ध भावोनी बेडीओथी बंधन ग्रस्त थई चतुर्गती रुप संसारना विषे पर्यटन करनार एवा आ जीवनी तथारुप मुळ भुलने विचारी तेनी भुल रहीत स्वभावना लक्षे निवृति करवी ते ।

एकत्व अनुप्रेक्षा

जीव द्रव्य त्रीकाळ एक रुप अने परथी सर्वथा असंग रुप एवुं स्वाधिन तत्व होवाथी तेना परिणमनमां परनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी, एम स्व लक्षे विचारी पोते पोताने अवलंबीत थवुं ते ।

अन्यत्व अनुप्रेक्षा

शुद्ध चैतन्य घन एवा निज अस्ति रुप स्वभावमां पर द्रव्य अने पर निमित जन्य एवा सर्व नास्ति रुप भावोनुं अभाव पणुं होवानुं विचारी तेनुं अन्यत्वपणुं विशेष दृढ करवुं ते ।

अशुचीत्व अनुप्रेक्षा

पुण्य पाप रुप एवा उभय विकार जन्य भावोनुं बंध अपेक्षाए समानवर्तीपणुं होवा छतां तेमां रती अरतीनी मान्यतापुर्वक वर्ती रहेली एवी पोतानी स्वभाव विमुख मुढतानुं सम्यक प्रकारे चिंतवन करवुं ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आश्रव अनुप्रेक्षा

वस्तु स्वभावनी विमुखता पुर्वक ग्रहण थती एवी ते भावाश्रय जन्य वर्गणाने एकांत दुःखना हेतुरुप होवानुं विचारी तेनी निवृत्तिना वास्तविक उपायमां योजावुं ते ।

संवर अनुप्रेक्षा

शुभाशुभ विकार जन्य भावोना अभाव रुप एवा पोताना शुद्धोपयोग रुप संवर भावने एकांत सुखना हेतु रुप गणी तेनी स्वभाव लक्षे सन्मुखता करवी ते ।

निर्जरा अनुप्रेक्षा

भाव संवर पुर्वक थती निर्जरानुं सम्यग्दर्शन साथे अविनाभावपणुं होवाथी ते नियमा मोक्षना हेतु रुप थाय छे, एम सम्यक प्रकारे विचारवुं ते ।

लोक अनुप्रेक्षा

षट द्रव्यात्मक एवा आ लोकना विषे रहेलो एवो जे पोतानो आत्मा ते विर्य रुचीना विमुख-वर्ती वलणने अवलंबी पोते पोताना कारणे लोकनी दशे दिशामां पर्यटन करी रह्यो छे, एम स्वभाव लक्षे विचारी पोताना विर्य रुचीना वलणने स्व सन्मुख प्रेरीत करवुं ते ।

बोधिदुर्लभ अनुप्रेक्षा

निमित उपादाननी अनुकूल संधीना परमार्थ योग विना, अने ते योगे संप्राप्त थयेला बोधने स्वभाव सन्मुख प्रेर्या विना, सम्यग्ज्ञान दर्शनादि रुप एवा बोध बीजनी प्राप्ती त्रणे कालना विषे दुर्लभ छे, एम विचारी तेना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमां योजावुं ते ।

धर्म अनुप्रेक्षा

आत्म धर्मनुं अस्तित्व त्रिकाळ एक रुप एवा शुद्ध आत्म स्वभावना विषे अवस्थित होवाथी तेनी प्राप्तीनो वास्तविक उपाय पण तेने ज अवलंबीने रहेलो छे, एम सम्यक प्रकारे विचारी तथारुप लक्षे उपयोगनी सन्मुख प्रवृति करवी ते ।

आ प्रमाणे उपरोक्त साधक मैत्री आदि चार भावनाने के द्वादश अनुप्रेक्षाना विचारने अवलंबीत थई पोते पोताना अंतर परिणामना विषे वैराग उपशम भावनी वर्द्धमानता अने हेयोपादेयनी पृथकता-पुर्वक मुख्यपणे अप्रशस्त एवा अशुभ रागादि भावो प्रत्ये औदासीनता उपयोगनी अंतर सन्मुखता-पुर्वक करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुप्रेक्षा वर्द्धमान रुप, अहिं थाय विशेषे जेम ।
आत्मार्थ ध्येयनुं अंतरे, प्रगटे दृढत्व विशेष तेम ॥
तेथी शल्यात्मक दोषो आंय, परिक्षीण पामे अंतर मांय ।
विशेषे एम अंतर धार, अनुप्रेक्षानो ए उपकार ॥१८॥

अन्वयार्थ—द्वादश अनुप्रेक्षा रुप विचार श्रेणीनुं अहिं जेम जेम विशेष प्रकारे वर्द्धमान पणुं थतुं जाय छे, तेम तेम ते साधकना अंतर परिणामना विषे आत्मार्थ ध्येयनुं विशेष प्रकारे दृढत्व पणुं प्रगटतुं जाय छे, अने तेथी अहिं अंतरना विषे त्रण प्रकारना एवा जे शल्यात्मक दोषो ते विशेष प्रकारे परिक्षीणपणाने पामता जाय छे, अने ए द्वादश अनुप्रेक्षाना अंतर विचारनो परम उपकार छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे धार ।

विशेषार्थ—मैत्री आदि चार भावनाने के द्वादश अनुप्रेक्षाना अंतर विचारने अवलंबीत थनार एवा उपरोक्त सुसाधकनी तथारुप सुविचार श्रेणी जेम जेम विशेष प्रकारे वर्द्धमानताने पामती जाय छे, तेम तेम तेना अंतर परिणामना विषे आत्मार्थ ध्येयनुं एटले आत्म कल्याणनी अंतर्मुख सिद्धिना हेतु रुप मुख्य एवा स्वभाव सन्मुख पुरुषार्थने अवलंबीत थवानुं विशेष प्रकारे दृढत्वरुप एवा लक्ष बिंदुनुं निश्चयात्मकपणुं उपलब्ध रुप थतुं जाय छे, अने तेम थवाथी तेना अंतरना विषे त्रण प्रकारना एवा जे शल्यात्मक दोषो ते विशेष प्रकारे परिक्षीण पणाने पामे छे, के पामता जाय छे, ते दोषोनुं स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

माया शल्य

मायिक युक्ति पुर्वक बद्ध परिणामी करेला एवा अनेक प्रकारना गुप्त शल्यात्मक दोषोनुं अस्तित्व जे पोताना विषे वर्ती रह्युं होय ते ।

मिथ्या शल्य

विपर्यय भावथी बद्ध परिणामी करेला एव अनेक प्रकारना अतत्व श्रद्धान रुप दोषोनुं अस्तित्व जे पोताना विषे वर्ती रह्युं होय ते ।

निदान शल्य

मोह जन्य इच्छाथी बद्ध परिणामी करेला एवा अनेक प्रकारना भाव वासनात्मक दोषोनुं अस्तित्व जे पोताना विषे वर्ती रह्युं होय ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ प्रमाणे त्रण प्रकारना शल्यात्मक दोषोनुं स्वरुप छे, तेनुं द्वादश अनुप्रेक्षानी अंतर विचार श्रेणीना बळे विशेष प्रकारे परिक्षीणपणुं थतां, एवा ते साधक जीवना अंतर परिणामना विषे विशेष प्रकारे निर्मलत्वपणुं प्रगटे छे, अने एज द्वादश अनुप्रेक्षा रुपे थयेली एवी ते अंतर सुविचार श्रेणीनो परम एवो आ उपकार छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

ते साथे विनयादि अहिं, होय उत्कृष्ट भावे स्थित ।
तेथी परमार्थ दृष्टीना, लक्षे वर्ते त्यां तेम नित्य ।।
सुगुर्वादिक प्रत्ये ते खास, लावी प्रेम प्रतित उल्लास ।
एवुं सत्य प्रत्येनुं मान, सन्मुख साधकने होय जाण ।।१९।।

अन्वयार्थ—ते साथे अहिं तेने विनयादि पण उत्कृष्ट भावे स्थित होय छे, अने तेथी परमार्थ दृष्टीना लक्षे एटले शुद्ध द्रव्य स्वभावथी पोतानुं स्वरुप सिद्ध सम शुद्ध होवाना अंतरंग लक्षपुर्वक सद्‌गुर्वादिक प्रत्ये प्रेम प्रतित अने परम विर्योल्लास भाव लावी खास कहेता अवश्य करी नित्य तेम वर्ते छे, एटले तेमनी विनयादि सेवना करे छे । आवा प्रकारनुं सत्यार्थ निमित प्रत्ये रहेलुं एवुं जे बहु मान ते सन्मुखवर्ती एवा आत्मार्थी साधकने ज यथार्थरुप होय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण ।

विशेषार्थ—विनयादि शब्दार्थनी परमार्थ दृष्टीए तत्त्व मिमांसा करीए तो सत्यरुप एवा निज आत्मार्थ हेतुनी सिद्धीमां तेना बाह्य अनुकूल निमित रुप एवा सद्‌गुर्वादिक सत्यार्थ रुप साधनो प्रत्ये रहेलो एवो जे विनय वैयावृत्य रुप शुभ सेवनात्मक भाव तेमां तेनो समावेश थाय छे, अने तेथी तथारुप लक्षे थतो के करातो एवी ते धर्मात्मा व्यक्तिनो अती दिनत्व भावपुर्वकनो आदर के तेमनुं बहुमान तेने विनयना नामथी ओळखवामां आवे छे । अने ते धर्मात्मा व्यक्तिनी धर्म बुद्धीए एटले निज आत्मार्थ लक्षे थती के करातो एवी जे सेवा तेने वैयावृत्यना नामथी ओळखवामां आवे छे ।

आ प्रमाणे विनयादि शब्दना अर्थने परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे । जे जीवने तथारुप बोधनुं अंतर्मुख सिंचन तथारुप लक्षे थयुं छे, के वर्ते छे, ते जीव विनयादि सेवनानो आदर तथारुप लक्षे अवश्य करे छे, अने तेज लक्ष आ पहेली अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते सुसाधकने होवाथी ते

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तथारुप लक्षे अंतर विचारणा करी एटले सिद्ध सम शुद्ध एवा पोताना मुळ वस्तु स्वभावने विचारी ते तथारुप स्वभाव सिद्धीना ध्येयपुर्वक त्यां सन्मुख योगे वर्ते छे।

आ उपरथी विनयादि सेवनामां रहेला एवा तेना मुळ परमार्थने विचारीए तो निमित उपादाननी अनुकूल संधीनी वास्तविक समजपुर्वक अने ते अनुसार स्व प्रत्येनी अंतर सन्मुखतापुर्वक थतुं एवुं जे गुणोत्कृष्ट धर्मात्मा व्यक्ति प्रत्ये बहुमान ते परमार्थे पोताना गुणोत्कृष्ट स्वभावना ज बहुमाननो हेतु छे, अने तेथी आत्मार्थी जीवनी तथारुप लक्षे थती सेवना ते तेने निज आत्मार्थ साधनामां उपकाररुप होवाथी अने ते साथे मानादि एवा पोताना आंतरिक शत्रुओ पर विजय के तेनो निग्रह थतो होवाथी तथारुप लक्षे एवी ते विनयादि सेवनानो आदर तेणे सम्यक प्रकारे इच्छवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

शुभाचरण व्यवहारमां, करी सन्मुख वृति एम।
हेय बुद्धी परमार्थ दृष्टीए, राखी सेवे व्यवहार तेम॥
एवो त्यां अंतर आत्मार्थ, ते बोधी समजाव्यो परमार्थ।
थई ए पहेली अवस्थानी वात, हवे बीजी बोधुं सुण भ्रात॥२०॥

अन्वयार्थ—एम ते शुभाचरण व्यवहारमां पोतानी वृति सन्मुख करीने अने परमार्थ दृष्टीए तेमां हेय बुद्धी राखीने एटले शुद्ध नयथी ते भाव त्यागवा योग्य छे, एम विचारीने ते व्यवहाररुप सेवना तथारुप लक्षे करे छे। आवा प्रकारनो त्यां अंतर आत्मार्थ एवा ते साधक जीवने वर्ततो होय छे, ते अहिं बोधीने तेनो सर्व परमार्थ तने समजाव्यो। अहिं सुधी पहेली अवस्थानी वात थई, हवे तने बीजी अवस्था बोधुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आ जीवनुं अनादि काळथी स्वभाव विमुख परिणमन होवाथी तेनुं देहादि पर द्रव्य अने पर निमित जन्य एवा शुभाशुभ रागादि भावोमां एकत्व बुद्धीपणुं वर्ती रह्युं छे, अने तेथी ते तथारुप भावोमां कर्तापणानो आरोप करी एकांत बंध पर्याय जन्य अशुद्ध भावोने सेवी रह्यो छे, अने ते ज जीवना परिभ्रमणनो मुळ हेतु छे, ज्यारे जीवने सत्संगादि निमित्तना योगे जीवादि तत्वना बोध परमार्थनुं अंशे पण सत्यार्थरुप परिणमन थाय छे, त्यारे ते पोतानी प्राथमीक एवी ते बोध अवस्थामां देहादि पर द्रव्यने पोताथी भिन्नरुप होवानुं विचारी अने कर्मोपाधि जन्य एवा ते

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुण्य पापरुप विकार जन्य भावोनुं बंध अपेक्षाए समानवर्तीपणुं होवा छतां, अने निश्चयथी सर्वथा अनादरणीय छतां, मात्र व्यवहार द्रष्टीए पापनी अपेक्षाए पुण्यने उपादेयरुप गणी, तेनो आदर तथारुप लक्षे करे छे ।

आ ऊपरथी प्राथमीक एवी आ बोध अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवनी आत्मार्थ सन्मुखता केवा प्रकारनी होय छे, तेनो तत्व शोधक जीवने सहज ख्याल थई शकवा योग्य छे, अने ते द्वारा परमार्थ मार्गनी अंतर श्रेणीनुं सम्यक भान पण आवी शकवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे । हवे अहिं बीजी अवस्थाना बोध विशेषनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बीजी बोध अवस्था अधिकार

बीजी अवस्थाना विषे, बोध गोमय अग्नि समान ।
तेथी सुविवेक अंतरे, स्फुरे तेने विशेष जाण ॥
तेथी जीवादि तत्व प्रवेश, करी विचारे मन विशेष ।
विशेषे थईने सन्मुख, स्व करुणा भाव करीने मुख्य ॥१॥

अन्वयार्थ—बीजी अवस्थाना विषे बोध गोमय अग्नि समान एटले जेम गोबरनो अग्नि तृणना अग्नि करतां विशेष जोरदार होवाथी कांईक वधारे वखत टकी शके छे, तेम आत्मबोधनुं अस्तित्व अहिं स्थुल रुपे होवा छतां पण पुर्व अवस्था करतां कांईक विशेष स्थिर परिणामे टकी शके तेवुं योग्यपणु तेना विषे होय छे, अने तेथी तेना अंतरना विषे आत्मार्थ सद्विवेकनुं विशेष प्रकारे स्फुरवापणुं थाय छे, एम तुं जाण, अने तेथी ते जीवादि तत्वना विशे प्रवेश करी, तेने विशेष प्रकारे विशेष अंतर सन्मुख थईने, अने त्यां स्व करुणात्मक भाव मुख्य करीने, मन द्वारा विचारे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—सम्यग्दर्शननी उपलब्धीमां सम्यग्दर्शन जेना आश्रये उत्पन्न थाय छे, तेना बोध विशेषनी अती आवश्यकता छे, अने ते बोधनी अंतर्मुख सिद्धी एकंदर जीवादि नव पदार्थना बोध विशेषथी ज थाय छे, एटले अहिं ते साधक जीव तथारुप बोध विशेष विचारणाने तथारुप लक्षे अवलंबीत थई तथारुप तत्वना पृथक भेदने निचे प्रमाणे विचारे छे ।

जीव

जेमां ज्ञान दर्शनादिरुप एवी चैतन्यात्मक शक्ति विशेषनुं अस्तित्वपणु वर्ततुं होय अने ते भाव प्राणरुप स्व शक्तिना बळे जे त्रीकाळ एक रुप पोते पोताना विषे टकनारो के पोताथी जीवनारो होय तेने जीव तत्व कहे छे ।

अजीव

जेमां चैतन्यात्मक शक्तिना अभावरुप एवुं जड परिणामीपणुं वर्ततुं होय, एवा धर्म, अधर्म, आकाश अने काल ए चार अरुपी द्रव्यने, अने देहादि पुदगल परिणामरुप एवा एक रुपी द्रव्यने अजीव तत्व कहे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुण्य

बाह्य निमितना लक्षे शुभोपयोगरुप एवा कोई पण परिणाम विशेषने अवलंबीत थवुं तेने पुण्य तत्व के भाव पुण्य कहे छे, अने तथारुप भावनुं निमित पामीने पुदगल परमाणुरुप शक्ति विशेषनुं द्रव्य कर्म रुपे परिणमन थवुं तेने द्रव्य पुण्य कहे छे ।

पाप

बाह्य निमितना लक्षे अशुभोपयोगरुप एवा कोई पण परिणाम विशेषने अवलंबीत थवुं तेने पाप तत्व के भाव पाप कहे छे, अने तथारुप भावनुं निमित पामीने पुदगल परमाणुरुप शक्ति विशेषनुं द्रव्य कर्म रुपे परिणमन थवुं तेने द्रव्य पाप कहे छे ।

आश्रव

पुण्य पापरुप एवा ते शुभाशुभ परिणाम विशेषने अवलंबीत थई तेनुं वासनात्मक भाव रुपे ग्रहण थवुं तेने आश्रव तत्व के भावाश्रव कहे छे, अने ते भावनुं निमित पामीने पुद्गल परमाणुरुप शक्ति विशेषनुं द्रव्य कर्म रुपे परिणमन थवुं तेने द्रव्याश्रव कहे छे ।

बंध

पुण्य पापरुप एवा ते भावाश्रव जन्य परिणाम विशेषमां तन्मयपणे अटकवुं तेने बंध तत्व के भाव बंध कहे छे,. अने तथारुप भाव बंधनुं निमित पामीने पुदगल परमाणुरुप शक्ति विशेषनुं द्रव्य बंध रुपे परिणमन थई तेनुं जीवनी साथे एक क्षेत्रावगाहरुप संबंध विशेषपणे रहेवुं तेने द्रव्य बंध कहे छे ।

संवर

पुण्य पापरुप एवा ते भावाश्रव जन्य परिणाम विशेषनुं शुद्धोपयोगरुप एवा चैतन्यात्मक स्वभावना अंतर अवलंबनपुर्वक निरोधपणुं करवुं तेने संवर तत्व के भाव संवर कहे छे, अने ते अनुसार त्यां नुतन कर्म बंधनुं बंध रुपे परिणमन थतुं अटकवुं तेने द्रव्य संवर कहे छे ।

निर्जरा

पुण्य पापरुप एवा ते वर्तमान उदयरुप भावोनुं स्वभाव लक्षे संवरपणुं थतां, ते भावोनुं जीव अवस्थाना विषे एक देश (अंशे) क्षयरुप अभावपणुं थवुं तेने निर्जरा तत्व के भाव निर्जरा कहे छे, अने ते समये तेना निमितभुत कर्मनुं कर्म भावथी अबंधरुपे दुर थवुं तेने द्रव्य निर्जरा कहे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मोक्ष

पुण्य–पापरुप अशुद्ध भावोनुं जीव अवस्थाना विषे सर्वथा क्षयरुप अभावपणुं थई त्यां केवळ शुद्धावस्थानुं प्रगटपणुं थवुं तेने मोक्ष तत्व के भाव मोक्ष कहे छे, अने त्यां द्रव्य कर्मनी समस्त वर्गणानुं सर्वथा क्षयरुप अभावपणुं थवुं तेने द्रव्य मोक्ष कहे छे।

आ प्रमाणे नव तत्वनुं (पुण्य पाप आश्रव तत्वना पेटा विभाग होवानी प्रधानरुप दृष्टीए तेने सात तत्व रुपे पण ओळखवामां आवे छे) स्वरुप छे, तेमां जीव अने पुद्गल ए बे सामान्यरुप छे, अने ते उभयना पृथक रुपे एटले द्रव्यथी अने भावथी एवां शेष सात तत्वो ते विशेषरुप छे, ते विशेषरुप तत्वोमां पुण्य पाप आश्रव अने बंध ए चार तत्वो जीव अने पुदगलना संयोग परिणामरुप एवी विभाव पर्यायथी उत्पन्न थाय छे, अने संवर, निर्जरा तथा मोक्ष ए त्रण तत्वो जीव अने पुदगलना संयोगरुप परिणामना विनाशथी उत्पन्नरुप एवी जे विवक्षीत स्वभाव पर्याय तेनाथी उत्पन्न थाय छे।

उपरोक्त नव तत्वने निश्चय अने व्यवहार नयथी तेना ज्ञेय, हेय, अने उपादेय सम्बन्धीना परमार्थने विचारीए तो तेमां जीव अने पुद्गल ए बे तत्वो निश्चय नयथी जाणवा योग्य छे। संवर, निर्जरा अने मोक्ष ए त्रण तत्वो एक देश शुद्ध निश्चय नयथी अने उपचाररुप व्यवहारथी आदरवा योग्य छे, अने पाप आश्रव अने बंध ए त्रण तत्वो उभय नयथी सर्वथा त्यागवा योग्य छे, अने पुण्य तत्व निश्चयथी सर्वथा त्यागवा योग्य परिणामना लक्षे मात्र उपचाररुप व्यवहारथी तेना स्वामित्व भावनी नकार बुद्धीपुर्वक आदरवा योग्य छे।

आ प्रमाणे उपरोक्त साधक जीवादि नव तत्वना स्वरुपने विचारी ते अनुसार तेनो विशेष अंतर सन्मुखतापुर्वक अवधार करे छे, अने तेथी त्यां गर्भीत शुद्धतानुं वर्द्धमानपणुं पण थतुं जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

अनुक्रमे ते अंतरे, बोध विचारे विशेष जेम।
लक्षणथी त्यां लक्ष्यनो, थाय निरधार विशेष तेम ॥
ते लक्षे चैतन्य लक्षणरुप, छुं सदा हुं जीव स्वरुप।
आगम अनुमानादिथी एम, अवधारे स्वरुपने तेम ॥२॥

अन्वयार्थ—जेम जेम अहिं ते साधक जीव पोताना अंतरना विषे अनुक्रमे जीवादि तत्वना बोधने विशेष प्रकारे विचारे छे, तेम तेम त्यां लक्ष्य कहेतां पोताना आत्मानो निरधार विशेष

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकारे तेना लक्षण द्वारा थतो जाय छे, अने ते लक्षे हुं सदा चैतन्य लक्षणरुप एवो जीव स्वरुप छुं, एम आगम अनुमानादिथी पोते पोतानी चैतन्य सत्तानो अवधार करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ— वस्तु मात्रना संशोधननो सर्व आधार तेना वास्तविक लक्षणना निरधार पर ज रहेलो छे, अने तेना लक्ष्यनी वास्तविक प्रतितीनो के सिद्धीनो सम्यक उपाय पण ते ज छे । आम होवाथी ज्यां ज्यां चैतन्यात्मक एवा ज्ञानरुप लक्षणनो निरधार थाय छे, त्यां त्यां तथारुप लक्षणना धारक लक्ष्य एवा आत्मानुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी तेनो निरधार पण त्यां स्वभावीक ज थई जाय छे, अने ज्यां ज्यां लक्ष्य एवा आत्मानो निरधार थाय छे, त्यां त्यां चैतन्यात्मक एवा तेना लक्षणरुप ज्ञाननुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी तेनो निरधार पण त्यां स्वभावीक ज थई जाय छे । मतलब के आत्मभुत एवा लक्षण अने लक्ष्यनुं अभिन्नपणुं होवाथी ते वस्तु स्वभावना विषे सजाती स्वरुपे त्रीकाळ एक रुप टकीने ज रहे छे, अने तेथी जेनुं जे लक्षण छे, ते लक्ष्य विना अन्य स्थाने एटले अलक्ष्यमां कोई पण प्रकारे होतुं नथी, एम सहज सिद्ध थाय छे ।

आ उपरथी समजाशे के चैतन्यात्मक एवुं ज्ञान स्वरुपपणुं ए आत्मानुं मुख्य लक्षण छे, अने तेना अभावरुप लक्षण ते जडनुं छे, अने तेथी ज्यां चैतन्यात्मक एवुं ज्ञानरुप लक्षण होय त्यां लक्ष्य एवो आत्मा पण अवश्य होय, अने ज्यां लक्ष्य एवो आत्मा न होय त्यां मृत शरीरना जेम लक्षणरुप एवुं ज्ञान पण न होय, अने तेथी लक्ष्य एवा आत्मानी शोध अलक्ष्य कहेतां जडमां करवाथी के जडनी क्रियामां पोतानुं अस्तित्व मानवाथी तेनी प्राप्ती अनंत काळ अनंत प्रयत्न करवा छतां पण थती नथी। आवा प्रकारना अल्प पण सत्यार्थ बोधथी विशुधीत थयेलो एवो उपरोक्त साधक पोते तथारुप एवा आ संप्राप्त बोधनी सन्मुखताने अवलंबी तथारुप बोधने विशेष प्रकारे विचारे छे के चैतन्यरुप एवुं जे जीवनुं लक्षण तेनुं लक्ष्यरुप एवा जीवमां ज व्याप्यरुप परिणमन थतुं होवाथी ते अव्याप्तिरुप दोषथी सर्व प्रकारे रहीत छे, अने तथारुप लक्षण जीव सिवाय अन्य एके द्रव्यमां तेनुं व्याप्यरुप परिणमन न थतुं होवाथी ते अतीव्याप्तिरुप दोषथी पण सर्व प्रकारे रहीत छे । एम आगम अनुमानादिथी पोते पोतानी चैतन्य सत्तानो विशेष प्रकारे अवधार स्व तरफथी विशेष सन्मुखतापुर्वक करे छे, अने ते साथे गुण–गुणीनी एकतारुप एवा आत्मभुत लक्षण लक्ष्यनी अभिन्नताना सिद्धांतिक नियमने अवलंबी ते अनुसार पोते स्व सन्मुख थवाना सम्यक पुरुषार्थने पण अनुसरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ते साथे सुगुर्वादि प्रत्ये, होय विशेष सन्मुख चित्त ।
तेथी स्व लक्षे सेवना, करे लावी प्रेम प्रतित ॥
कदी प्रत्यक्षनो होय अभाव, तो सुशास्त्र विचारे करी सदभाव ।
प्रत्यक्ष तुल्य गणीने ते, अस्वछन्द परिणामे रही ए ॥३॥

अन्वयार्थ—ते साथे अहिं ते साधकने सद्गुर्वादिक प्रत्ये पण चित्तनी विशेष प्रकारे सन्मुखता होय छे, अने तेथी ते स्व लक्षे एटले निज आत्मार्थ लक्षने मुख्य करी तेमनी सेवना प्रेम, प्रतित लावीने करे छे । जो कदी तेमनी प्रत्यक्ष हाजरी न होय तो आत्मार्थ प्रेरक एवा सद्शास्त्र ने प्रत्यक्ष सद्गुरु तुल्य गणी तेने अस्वछन्द परिणामे एटले स्व मती कल्पनाना निरोधपुर्वक सदभावे करी विचारे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जेम जेम उपरोक्त साधक पोतानी अंतरंग सन्मुखताने विशेप प्रकारे अवलंबतो जाय छे, तेम तेम दर्शनाचार विशुद्धीना बळे श्रयात्मक सदविवेकनी वर्द्धमानतापुर्वक तथारुप बोधनी विशेप प्रकारे निर्णयात्मक शक्ति पण स्फुरायमान थती जाय छे, अने तेथी ते वस्तु स्वभावना वास्तविक निर्णयनी अंतरंग वर्द्धमानतापुर्वक तथारुप बोधविशेषना बाह्य निमितरुप एवा सद्गुर्वादिक प्रत्ये विशेष प्रकारे प्रेम प्रतित लावी त्यां चित्त सन्मुखता पण निज आत्मार्थ लक्षपुर्वक करतो जाय छे, अने तेवा योगनुं अभावपणुं होय तो तथारुप लक्षे एटले आत्मार्थ प्रेरक एवा कोई सद्शास्त्रने प्रत्यक्ष सद्गुरु तुल्य गणी, तेना वांचन विचारमां निज उपयोगने स्वछन्द निरोधपुर्वक सन्मुख भावे प्रेरतो जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

होय प्रत्यक्षनो योग तो, करी तेमनुं ते बहुमान ।
वर्ते सन्मुख योगथी, करी भक्ति भाव प्रधान ॥
विचारी एम चित्तमां ते, सुभाग्ये मल्या गुरु मुजने ए ।
तेथी साध्य करुं मुज कार्य, तजी प्रमाद ने सर्व अकार्य ॥ ४ ॥

अन्वयार्थ—जो कदाच ते साधकने प्रत्यक्ष सद्गुरुनो योग थयो होय तो ते अहो ! सदभाग्ये मने आ प्रत्यक्ष आत्मज्ञानी पुरुषनो सुयोग संप्राप्त थयो छे, तेथी सर्व प्रकारना अकार्यने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अने पंच प्रमाद भावोने तजी आत्म ज्ञान पामवारुप एवुं जे मारुं कार्य ते साध्य करुं, एम ते चित्तना विषे विचारीने त्यां भक्ति प्रधान भावे सन्मुख योगे वर्ते छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जे जीवने आत्मार्थ बोधना सिंचनथी आत्मार्थ सद्विवेकनी उपलब्धी थाय छे, अने ते द्वारा तथारुप बोधना अनुकूल निमितरुप एवा प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगनुं अवर्णनीय महात्म्य समजाय छे, ते ज तेना सुयोगनी तालावेलीमां उपयोगने सन्मुख भावे प्रेरे छे, अने तेवो सुयोग संप्राप्त थतां ते अत्यंत प्रेम प्रतित अने विर्योल्लासपुर्वक तेमनी भक्ति प्रधान भावे सेवना पण सर्व प्रकारना अकार्यने, अने पंच प्रमाद भावोने (विषय–५, कषाय–४, विकथा–४, निंद्रा–१ अने स्नेह–१, एम एकंदर–१५ भेदने मुख्यपणे व्यवहारथी पंच प्रमाद कहे छे, अने निश्चयथी विर्य रुचीना वलणने स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करवाना अनुत्साहने प्रमाद कहे छे) तजी सन्मुख योगे करे छे ।

आ उपरथी आत्मार्थी जीवनुं लक्ष बिंदु अने तथारुप लक्षे थती एवी तेनी सन्मुख योगे विर्य प्रवृति ते केवा प्रकारनी होय छे, ते अहिं तथारुप मार्गना प्रवासी जीवने सहज समजावा योग्य छे, अने ते द्वारा पोताना विर्य रुचीना वलणने अत्यंत उत्साहपुर्वक स्वभाव सन्मुख प्रेरवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

वळी करे विचारणा, लावी विवेक चित्तमां एम ।
द्रव्यानुयोगना बोध वण, पामुं बोधी हुं अंतर केम ॥
तेथी सद्गुरु आज्ञाधार, रहेवुं ते अंतिम निरधार ।
स्व हेतु सिद्ध थवा ते एम, ध्येय स्थिर करे विचारी तेम ॥५॥

अन्वयार्थ—वळी ते चित्तना विषे विवेक लावी एम विचारणा करे छे के सम्यग्दर्शन रुपी शुद्ध आत्म धर्मनी प्राप्तीमां मात्र एक द्रव्यानुयोगना बोधनुं ज मुख्यपणुं छे । तथारुप अनुयोगना बोध विना, एटले आत्म स्वरुपने यथार्थ जाण्या विना, हुं अंतरना विषे सम्यग्दर्शन रुपी परम लाभने शी रीते पामी शकुं ? तेथी ते बोधनी सिद्धीना अनुकूल निमितरुप एवा आ प्रत्यक्ष सद्गुरुनी आज्ञाधार एटले तेमनी आज्ञानुसार रहेवुं ते मारो अंतिम निरधार छे, एम ते स्व हेतु सिद्ध थवा अर्थे विचारी तथारुप लक्षे वर्तवा पोतानुं ध्येय स्थिर करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषार्थ—जीनागमना विषे विषय भेद कथनना रहस्यार्थ बोधने समजाववा अर्थे तेना एकंदर चार विभाग पाडवामां आव्या छे, तेने मुख्यपणे अनुयोगना नामथी संबोधवामां आवे छे । ते चार अनुयोगमां वस्तुना मुळ धर्मनी बोध सन्मुखता अर्थे द्रव्यानुयोगनुं मुख्यपणुं छे । तथारुप अनुयोगना परमार्थ बोधनुं अंतर्मुख सिंचन जे जीवने कोई प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगे थाय छे, अने ते द्वारा वस्तुना मुळ स्वभावनुं, के शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मनुं सम्यक भान स्व पर स्वरुपना भेद विज्ञानपुर्वक प्रगटे छे, ते जीवनो पर्यायाश्रीत लक्ष निवृत थई उपयोग सहज स्वभाव सन्मुखताने पामे छे, अने ते द्वारा सम्यग्दर्शननी उपलब्धी पण थाय छे। आवा प्रकारनो परमार्थ लक्ष उपरोक्त सुसाधकने द्रव्यानुयोग संबंधीनो थवाथी ते तथारुप स्व हेतुनी सिद्धी अर्थे, तथारुप बोध सिद्धीना अनुकूल निमितरुप एवा प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगनुं बहुमान लावी तेमनी आश्रय भक्तिमां रहेवानो निर्णयात्मक ध्येय सम्यक योगे दृढ करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

एम सु दृढ परिणामथी, रही सदगुरु आश्रय तेह ।
स्व लक्षे सन्मुख सेवना, करे स्वछंद टाळी एह ॥
त्यां सुक्ष्म दोषो जेजे चित्त, थाय ते विचारीने नित्य ।
स्पष्ट करी आलोचे ते, स्व करुणात्मक भावे ए ॥६॥

अन्वयार्थ—आ प्रमाणे ते सुसाधक सुदृढ परिणामथी सद्गुरु आश्रये रही, अने त्यां स्व-आत्मार्थ लक्षने मुख्य करी तेमनी सन्मुख भावे सेवना सर्व प्रकारना स्वछंदने टाळी करे छे, अने त्यां जे जे सुक्ष्म दोषो चित्तना विषे उत्पन्न थाय छे, ते स्व करुणात्मक भावे नित्य चित्तना विषे विचारे छे, अने तेने स्पष्ट करी आलोचना पण करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—आत्मार्थी जीवनी आत्मार्थ सन्मुखता केवा प्रकारनी होय छे, अने तथारुप सन्मुखवर्ती साधनामां ते पोताना विर्यात्मक रुचीना वलणने सन्मुख भावे प्रेरीत करवामां कई कई विचार श्रेणीने अवलंबे छे, अने ते द्वारा पोतानो निर्णयात्मक ध्येय केवा प्रकारे दृढ करे छे, ते अहिं उपरोक्त साधकनी साधनात्मक प्रवृत्ति तरफ दृष्टि प्रेरता तेवा कोई आत्मार्थी जीवने सहज ख्यालमां आवी शकवा योग्य छे, अने ते उपरथी एम पण समजवा योग्य छे के आत्मार्थ साधनामां ज्यां उपा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दाननुं सन्मुखवर्तीपणुं वर्ते छे, त्यां स्व सिद्धी अवश्य छे, अने निंमित पर उपचारनो आरोप पण त्यां ज थई शकवा योग्य छे, एम उमरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं बीजी एवी आ बोध अवस्थाना विषे उत्पन्न थतुं एवुं जे सम्यग्दर्शननुं सप्तम कारण ते सम्बन्धी निरुपण करवामां आवे छे।

दश कारण सम्यकत्व प्राप्तीनां, तेमां षट कह्या प्रकार।
अहिं ते पैकी सातमुं, तत्व मिमांसा विशेष धार ॥
तेथी स्वनी विशेष प्रतित, लावी शंशयादि वमे चित्त।
ते साथे त्रय विपर्यय पण ते, वमे विचारी अंतर ए ॥७॥

अन्वयार्थ—सम्यग्दर्शन प्राप्तीना दश कारणोमां पुर्वे तेना तने षट प्रकार कह्या हता, अहिं ते पैकी तेने सातमुं तत्व मिमांसा–एटले वस्तुना सामान्य विशेषात्मक धर्मनी के जीवादि तत्वनी सुक्ष्म विचारणा करवी ते, एवुं विशेषरुप कारण प्रगटे छे, एम तुं धार, अने तेथी ते विशेष प्रकारे तत्व मिमांसा करी अने ते द्वारा पोताना वस्तु स्वभावनी विशेष प्रतिती लावी शंशयादि त्रयात्मक दोषोने चित्तना विषे विशेष प्रकारे वमे छे, अने ते साथे त्रण प्रकारना विपर्यय भावो पण ते अंतरना विषे विशेष प्रकारे विचारी तेनो पण विशेष प्रकारे परिहार करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मार्थ साधनामां के सम्यकत्वादि गुण विशेष परिणमनमां शंशयादि त्रयात्मक दोषो अने ते साथे त्रण प्रकारना विपर्यय भावो मुख्यपणे रोधकरुप होवाथी ज्यां सुधी तेनुं सम्यक प्रकारे अभावपणुं थतुं नथी, त्यां सुधी तथारुप गुण विशेष अवस्थानुं उपलब्धपणुं पण थई शकवुं नथी, एटले अहिं तथारुप दोषना परिहार अर्थे तेना पृथक भेदनुं निरुपण करवामां आवे छे।

शंशय

वस्तुना निर्णयमां भ्रमात्मकपणुं जेम के हुं देह छुं के आत्मा छुं. ते सम्बन्धीना वास्तविक निर्णयनुं अभावपणुं होवुं ते।

विपर्यय

वस्तुना निर्णयमां अन्यथापणुं जेम के हुं देह स्वरुप ज छुं, एम बुद्धीनुं सर्वथा विपर्यासपणुं होवुं ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विमोह

वस्तुनुं सर्वथा अनिर्णयात्मकपणुं जेम के हुं कांई पण छुं, एम वस्तु विचारनुं सर्वथा मुढत्व-पणुं होवुं ते।

आ प्रमाणे शंशयादि त्रयात्मक दोषोनुं स्वरुप कह्युं। हवे अहिं त्रण प्रकारना विपर्यय भावोनुं स्वरुप प्रतिपादन करवामां आवे छे।

कारण विपर्यय

जीवनी जोवा जाणवारुप थती क्रियानो आरोप एकांत जड़ इंद्रियोमां करी वा शुभोपयोगरुप व्यवहार रत्न त्रयने गुण, धर्म के मोक्ष मार्गना हेतुरुप गणी तथारुप अभिप्रायने वळगी रहेवुं ते।

स्वरुप विपर्यय

देहादि पर चतुष्टयरुप नास्ति भावोमां के कर्मोपाधि जन्य एवी शुभाशुभ क्षणीक अवस्थामां स्व चतुष्टयरुप एवुं पोतानुं अस्तित्वपणुं कल्पी तेनुं स्वामित्व भावपुर्वक कर्तापणुं पोताना विषे दृढ करवुं ते।

भेदाभेद विपर्यय

सामान्य विशेषात्मक एवा पोताना वस्तु स्वभावना के द्रव्य गुण पर्यायना एकत्वने भुली मारी पर्याय के गुण विशेष अवस्था परथी थाय छे, एम मिथ्याभिनीवेशने वळगी रहेवुं ते।

आ प्रमाणे शंशयादि त्रयात्मक दोषोनुं अने त्रण प्रकारना विपर्यय भावोनुं स्वरूप छे, तेना परिक्षीणपणानो के क्षयनो मुख्यमां मुख्य उपाय मात्र एक तत्व विचारणा करवी ते छे, के जे साधनने अवलंबतां क्रमे क्रमे ते दर्शन विशुद्धीनो हेतु थई तथारुप दोषोनी सम्यक प्रकारे निवृत्ति करावे छे, अने ते द्वारा सम्यक्त्वादि भावोनी उपलब्धी पण थाय छे। आवा प्रकारनो आत्मार्थ सद्विवेक उपरोक्त साधकने होवाथी ते विशेष प्रकारे तत्व विचारणामां निज उपयोगने सन्मुख भावे प्रेरे छे, अने ते द्वारा विशेष प्रकारे तत्व निर्णय करी तथारुप दोषोनुं विशेष प्रकारे परिक्षीणपणुं पण करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते साथे त्याग वैराग ने, होय संयममां प्रवेश।
तेथी मन विषे करे, पंच नियम दृढ विशेष॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्यां पहेलो नियम मन शुद्धी ते, बीजो नियम जाण संतोष ए ।
त्रीजो तप चोथो स्वाध्याय, पंचम ध्यान विषे स्थिर थाय ॥८॥

अन्वयार्थ– ते साथे अहिं ते साधकनो त्याग, वैराग अने संयमना विषे प्रवेश होय छे, अने तेथी ते मनना विषे पांच प्रकारना नियमो विशेष प्रकारे दृढ करे छे। त्यां पहेलो नियम–मननी शुद्धी होवी ते, बीजो नियम–संतोष वृति धारण करवी ते, त्रीजो नियम–तप एटले इच्छानो निरोध करवो ते, चोथो नियम–स्वाध्याय एटले शास्त्राध्ययन करवुं ते, अने पांचमो नियम–ध्यान एटले तत्व चिंतवन करवुं ते, एम पंचात्मक नियमो ते विशेष प्रकारे दृढ करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ–उपरोक्त साधक तत्व मिमासाना बळे जेम जेम आत्मार्थ भावनी अंतर सन्मुखताने अवलंबतो जाय छे, तेम तेम मुख्यत्वे करी त्यां त्याग, वैराग अने संयम भावनुं वर्द्धमानपणुं सहज विभाव प्रत्येनी औदासीनतापुर्वक थतुं जाय छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे ।

त्याग

बहिरात्म जन्य मुढतानो के तथा प्रकारनी रागादि भावरुप विमुखतानो ।

वैराग

पांच इंद्रियात्मक विषयनो, के पर लक्षे उत्पन्न थती सर्व मोह जन्य इच्छानो ।

संयम

वृतिओनो के अनाचरण रुपे उपस्थित थता दोषोनो ।

आ प्रमाणे ते साधक जीवने त्याग, वैराग अने संयम भावनी उपलब्धी थतां ते मनना विषे पंचात्मक नियमो विशेष प्रकारे दृढ करे छे, तेनुं विशेष स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

शौच

सर्व प्रकारना गुप्त शल्यात्मक एवा मनना विषे रहेला पुर्व कृत दोषोनी सम्यक आलोचना करी नित्य चित्त विशुद्ध परिणामे वर्तवुं ते ।

संतोष

बाह्य परिग्रह रुपे वर्तती एवी सर्व पौदगलीक वस्तुओनी भाव जन्य तृष्णानुं अने तेनी वर्द्धमानतानो इच्छानुं विरामपणुं के तेनुं अल्पत्वपणुं करवुं ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तप

अभ्यंतर परिग्रह रुपे वर्तती एवी सर्व मोह जन्य इच्छानुं विरामपणुं के तेनुं अल्पत्वपणुं करवुं ते ।

स्वाध्याय

आत्मार्थ भावनी अंतरंग सन्मुखतापुर्वक कोई प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगे के परोक्षना लक्षे सद्शास्त्रनुं अध्ययन करवुं ते ।

ध्यान

चित्तनी एकाग्र स्थिरतापुर्वक वस्तु स्वभावनुं चिंतवन करवुं ते ।

आ प्रमाणे ते साधक जीव तत्व मिमांसाना बळे त्याग, वैराग अने संयम भावरुप एवी निर्मल गुण अवस्थाने अवलंबी उपरोक्त पंचात्मक नियमो मनना विषे विशेष प्रकारे दृढ करे छे, अने तेना पालनमां उपयोगने सन्मुख भावे प्रेरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

तेथी पिंडस्थ पदस्थ रुप, नित्य ध्यान करे स्थिर मन ।
अथवा रुपस्थ भावमां, करे जिनवरनुं चिंतवन ॥
अथवा रुपातित लक्षे रही, स्वरुपने विचारे अहिं ।
दर्शन विशुद्धी तेथी आंय, थाय वृद्धीगत अंतर मांय॥ ९ ॥

अन्वयार्थ–तेथी ते पिंडस्थ पदस्थरुप ध्यान नित्य स्थिर मने करे छे, अथवा तो ते रुपस्थ ध्यानना विषे उपयोगने स्थिर करी श्री जीनेश्वरनुं चिंतवन करे छे, अथवा तो ते रुपातित ध्यानना लक्षे रही स्वरुपने विचारे छे, अने तेथी अहिं तेना अंतर परिणामना विषे दर्शनाचार विशुद्धीनुं वर्द्धमानपणुं पण थतुं जाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ–ध्यानना अनेक प्रकार छे, तेमां आध्यात्मीक दृष्टीए उपर कह्या ते चार प्रकार मुख्य छे, तेनुं अनुक्रमे स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

पिंडस्थ

ज्ञानादि अनंत गुण पर्यायना एक पिंडरुप एवो चैतन्य घन स्वभावनों धारक हुं आत्मा छुं, एम स्वरुप चिंतवन करवुं ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पदस्थ

ज्ञान दर्शनादि पदनो धारक एवो अखंड अविनाशी हुं आत्मा छुं, एम स्वरुप चिंतवन करवुं ते ।

रुपस्थ

पुर्ण आत्मज्ञ अने सर्वज्ञ स्वभावना ऐश्वर्यने पामेल एवा श्री जीन स्वरुपना प्रधान लक्षे ते साकार भगवंततुं चिंतवन करवुं ते ।

रुपातित

ज्ञायकरुप स्वभावनी अखंड एकतारताने पामेल एवा सिद्ध स्वरुपना प्रधान लक्षे स्व स्वरुपनुं चिंतवन करवुं ते ।

उपरोक्त चार प्रकारना ध्यानने सालंबनी ध्यान कहेवामां आवे छे, अने ते प्रथसनी चार अवस्थाना विषे एटले पहेलाथी चोथा गुणस्थानना अस्पर्श भाव पर्यंत दर्शन मोहनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे अनुक्रमे विशुद्ध परिणामरुप स्वरुपनी ओघ प्रतिती रुपे होय छे, अने पांचमीथी उपरनी अवस्थाना विषे एटले चोथाथी शुक्ल ध्यानना पहेला भेदरुप एवा दशमा गुणस्थान पर्यंत चारित्र मोहनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे अनुक्रमे विशुद्ध परिणामरुप स्वरुपनी सम्यक प्रतिती रुपे होय छे ।

आ प्रमाणे सालंबनी ध्यानना मुख्यत्वे करी चार प्रकार छे, तेने उपरोक्त साधक जीव स्वभाव लक्षे अवलंबी तेनुं एकाग्रतापुर्वक ध्यान करे छे, अने तेथी अहिं अंतरंगना विषे अनुक्रमे दर्शनाचार विशुद्धीनुं वर्द्धमानपणुं थतुं जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

पंचाचार विशुद्धीनो, सर्व आधार दर्शनाचार ।
विशुद्धी तेनी थवा, तत्व मिमांसा मुख्य तुं धार ॥
ते लक्षे ते साधकनी आंय, साधना वर्ते अंतर मांय ।
थई ए बीजी अवस्थानी वात, हवे त्रीजी बोधुं सुण भ्रात ॥१०॥

अन्वयार्थ—पंचाचार विशुद्धीनो सर्व आधार मात्र एक दर्शनाचार विशुद्धी पर रहेलो छे, अने दर्शनाचार विशुद्धी थवामां तत्व मिमांसा ए ज तेनुं मुख्यमां मुख्य साधन छे, एम तुं धार ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ते लक्षे अहिं ते साधक जीवनी तत्व मिमांसारुप एवी जे साधना, ते तेना अंतरना विषे वर्तती होय छे। अहिं सुधी बीजी अवस्थानी वात थई, हवे तने त्रीजी अवस्था बोधुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—पंचाचारमां मुख्यपणे दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपाचार अने विर्याचार एम एकंदर पांच प्रकारनो समावेश थाय छे, ते सर्वमां दर्शनाचार विशुद्धी ए जीवनी प्राथमीक भुमीका होवाथी अने शेष चारनी विशुद्धीनो सर्व आधार पण तेना पर ज रहेलो होवाथी जीनागमना विषे तेनुं मुख्यपणुं दर्शावी, तेनी विशुद्धीना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थने अवलंबवानुं एटले जीवनी द्रष्टी तत्व सन्मुख प्रेरीत करवानुं ठाम ठाम दर्शाववामां आव्युं छे। तथारुप लक्ष उपरोक्त साधकने होवाथी ते तेनो अवधार करी एटले तथा प्रकारनी जीन आज्ञाने अवलंबी ते तथारुप लक्षे वर्ते छे, अर्थात पोतानी द्रष्टी तत्व मिमांसारुप एवा ते अंतर साधननी सन्मुखतामां नित्य सम्यक योगे प्रेरे छे।

आ उपरथी बीजी एवी आ बोध अवस्थना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवनो प्रगती मार्ग केवा प्रकारनो होय छे, तेनो तत्व शोधक जीवने सहज ख्याल थई शकवा योग्य छे, अने ते द्वारा तथारुप मार्गनी अंतर श्रेणीनुं सम्यक भान पण आवी शकवा योग्य छे, अने ए ज गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं त्रीजी अवस्थाना बोध विशेषनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(त्रीजी बोध अवस्था अधिकार)

त्रीजी अवस्थाना विषे, बोध काष्टना अग्नि समान ।
तेथी सुविवेकनी अहिं, होय वृद्धि विशेषे जाण ।।
तेथी उभय चतुष्टयनी चित्त, पृथकता विचारे नित्य ।
विशेष स्थिर करीने मन, थाय विशुद्ध तेथी दर्शन ।।१।।

अन्वयार्थ—त्रीजी अवस्थाना विषे बोध काष्टना अग्नि समान एटले जेम काष्टनो अग्नि गोबरना अग्नि करतां विशेष जोरदार होवाथी कांईक वधारे वखत टकी शके छे, तेम आत्म बोधनुं अस्तित्व अहिं स्थुल रुपे होवा छतां पण पुर्व अवस्था करतां कांईक विशेष स्थिर परिणामे टकी शके तेवुं योग्यपणुं तेना विषे होय छे, अने तेथी आत्मार्थ सद्विवेकनुं अहिं तेने विशेष प्रकारे वृद्धीरुप परिणमन वर्ततुं होय छे, एम तुं जाण, अने तेथी ते विशेष प्रकारे मन स्थिर करीने स्व पर एवा उभयात्मक चतुष्टयनी पृथकता ते नित्य चित्तना विषे विचारे छे, अने तेथी अहिं ते साधकने दर्शन विशुद्धी विशेष प्रकारे थाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—त्रीजी एवी आ बोध अवस्थाना विषे उपरोक्त साधकनुं बोध विशेष परिणमन वृद्धीरुप अने विशेष उज्जवळरुप थतां, ते विशेष एवी तत्व विचारणाने अवलंबीत थई, अहिं ते स्व पर चतुष्टयनुं चिंतवन तेनी विशेष पृथकता पुर्वक निचे प्रमाणे करे छे ।

(जीव द्रव्यना स्वचतुष्टयनुं स्वरुप)

स्व द्रव्य

ज्ञानादि अनंत गुण पर्यायना एक पिंडरुप एवी चैतन्य घन मुळ वस्तु जे त्रीकाळ एकरुप अने परथी सर्वथा असंगरुप वर्ती रही छे ते ।

स्व क्षेत्र

जीवनो अवगाहना प्रमाणे असंख्यात आत्म प्रदेशोनुं रहेवुं ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्व काळ

अनादि अनंत एवा पोताना ध्रुव स्वभावे त्रीकाळ एक रुप टकीने पोतानी स्व पर्यायमां प्रति समय परिणमवुं ते ।

स्व भाव

सम्यक रत्न त्रयात्मकरुप एवा शुद्ध ज्ञायक स्वभावमां उपयोगनी निर्वीकल्प स्थिरता थवी के होवी ते ।

(पुद्गल द्रव्यना स्व चतुष्टयनुं स्वरुप)

स्व द्रव्य

वर्णादि गुण पर्यायना एक पिंडरुप एवी पुदगल परमाणुरुप मुळ वस्तु जे त्रीकाळ एक रुप अने परथी सर्वथा असंगरुप वर्ती रही छे ते ।

स्व क्षेत्र

पोताना प्रदेशत्व गुण पर्यायरुप एवा अमुक आकारमां पोतानुं अस्तित्व होवुं ते ।

स्व काळ

अनादि अनंत एवा पोताना मुळ परमाणु रुपे त्रीकाळ एक रुप टकीने पोतानी वर्णादि पर्यायमां प्रति समय परिणमवुं ते ।

स्व भाव

पोते पोताना वर्णादि गुणोथी सदा तन्मयपणे रहेवुं ते ।

आ प्रमाणे वस्तु मात्रनुं स्व चतुष्टयमां अस्तिरुप सद्भावपणुं अने पर चतुष्टयमां नास्तिरुप अभावपणुं होवाथी जीवनुं कर्ता कर्मपणुं जीवमां, अने पुदगलनुं कर्ता कर्मपणु पुद्गलमां एम सौ कोईनुं परिणमन पोत पोताना विषे स्वभावीक ज वर्ती रहेलुं होय छे, एम उपरोक्त साधक स्व पर चतुष्टयनी बोध विशेष विचारणाने अवलंबी तेनी विशेष प्रकारे पृथकता करे छे, अने तेथी अहिं तेना अंतरना विषे विशेष प्रकारे दर्शन विशुद्धी थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये जीव पुदगलना स्वाश्रीत परिणमन संबंधी कंईक युक्तिपुर्वक प्रश्न करे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पुछे एम ।
न कर्ता जीव पर द्रव्यनो, तो जड क्रिया करे जड केम ॥
जीवमां ज्ञानादि न जडमां ते, तेथी स्व क्रिया करे केम ए ।
गुरुजी कहे सुण तुं बोध, समजावुं तुजने अविरोध ॥२॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये वंदन करी एम पुछे छे के हे भगवंत ! जो जीव देहादि पर द्रव्यनो कर्ता न होय तो देहादि जड क्रिया ते जड पुदगल द्रव्य शी रीते करी शके ? जीवमां ज्ञानादि गुण प्रत्यक्ष जोवामां आवे छे, अने ते पोताना क्रियात्मक परिणमनमां हेतुरुप छे, पण जडमां तो ते गुणनुं अभावपणुं वर्ते छे, तो पछी ते पोतानी स्व क्रिया कई रीते करी शके ? अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने अहिं पुर्वापर अविरोध एवा जीनाशय श्रुतथी समजावुं छुं, ते तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—आजे सौ कोई जीवो जीव द्रव्यमां जोवा जाणवारुप एवी शक्ति विशेपनुं अस्तित्व होवाथी अने पुदगल द्रव्यमां ते शक्तिनुं अभावपणुं रहेवाथी जीव उपरोक्त एवी ते शक्तिना बळे पोतानी परिणमनरुप क्रिया जीव पुद्गल उभयना विषे अर्थात वस्तु मात्रमां करी शके छे, एम माने छे, अने ते मान्यताने वश थई पोते वस्तु मात्रने पराश्रीत होवानुं स्वीकारे छे, अने ते द्वारा परना कर्ता कर्मनुं स्वामित्वपणुं ते पोताना विषे दृढ करी वस्तु मात्रनी स्वतंत्र शक्तिनुं खुन करे छे। आ वातनो परम सद्‌विवेक बोधनी अंतर सन्मुखताना बळे उपरोक्त सुसाधकने थतां, ते तेनी सर्वांग समाधानी अर्थे गुरुजीने प्रश्न करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

परिणमन सौ वस्तुनुं, रह्युं स्वाश्रीत सर्व प्रकार ।
द्रव्यत्व गुण तेमां सदा, होय मुख्यपणे एम धार ॥
तेथी ज्ञानादि गुणनी नोय, वर्ते अपेक्षा तेमां कोय ।
वस्तु मात्र विषे एम धार, परिणमनमां सर्व प्रकार ॥३॥

अन्वयार्थ—वस्तु मात्रना परिणमनमां सर्व प्रकारे स्वाश्रीतपणुं रहेलुं छे, अने ते स्वाश्रीत पणे थता परिणमनमां सदा द्रव्यत्व गुणनुं ज मुख्यपणुं होय छे, एम तुं धार, अने तेथी जीवना ज्ञानादि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणनी अपेक्षा तेमां एटले वस्तु मात्रना परिणमनमां सर्व प्रकारे कहेतां सर्वथा रहेती नथी, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे धार।

विशेषार्थ— वस्तु मात्रनी कहेतां जीव पुदगलादि समस्त द्रव्यनी पोत पोताना विषे थती एवी जे परिणमनरुप क्रिया, तेमां सामान्यरुप एवा द्रव्यत्व गुणनुं ज मुख्यपणुं छे, अने मुख्यपणुं होवथी वस्तु मात्रना विषे तथारुप गुणनुं होवुं अनिवार्यरुप छे। तथारुप गुण सामान्यरुप होवाथी वस्तु मात्रना षट सामान्य गुण पैकीनो ते पण एक प्रकार छे, ते षट सामान्य गुणनुं अहिं चालु विषयने अनुसरीने अनुक्रमे निरुपण करवामां आवे छे।

अस्तित्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तुनुं अस्तित्व त्रीकाळ एक रुप टकीने रहेवुं तेने अस्तित्व गुण कहे छे।

वस्तुत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तु सदा अर्थ क्रिया संपन्न होवी तेने वस्तुत्व गुण कहे छे।

द्रव्यत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तुनुं अवस्थांतरपणुं तेना पोताना विषे प्रति समय थवुं तेने द्रव्यत्व गुण कहे छे।

प्रमेयत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तु कोईना ज्ञाननो जाणवारुप विषय थई शके तेने प्रमेयत्व गुण कहे छे।

अगुरुलघुत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तु अन्य वस्तु रुपे, वा तेनो एक गुण अन्य गुण रुपे, न परिणमे, वा तेना सर्व समुदायरुप गुणो कदी पृथकत्व रुपने न पामे, तेने अगुरुलघुत्व गुण कहे छे।

प्रदेशत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तुनो कोई पण प्रकारनो आकार अवश्य होवो तेने प्रदेशत्व गुण कहे छे।

आ प्रमाणे वस्तु मात्रनां विषे षट सामान्य गुणो मुख्यपणे वर्ती रहेला होय छे, तेमां त्रीजा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्रव्यत्व गुणनी शक्तिथी वस्तु मात्रनुं परिणमन पोत पोताना विषे पोत पोताना कारणे स्वतन्त्रपणे प्रति समय थई रह्युं छे, अने तेथी जीव पुद्गल एवा कोई पण द्रव्यना परिणमनमां जीवनी ज्ञानादि शक्ति के अन्य व्यक्ति विशेषनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी। आवा प्रकारना वास्तविक बोधथी अजाणरुप जीवो अनादि काळथी पोते देहादि पर वस्तुना विषे पोतानुं कर्तापणुं मानी के कोई अन्य व्यक्ति विशेषने पोतानी वस्तुनो कर्ता ठेरावी वस्तु स्वतन्त्रतानुं खुन करी रह्यो छे, अने महा पाप पोषक एवी अनंत ज्ञानीओनी आशातना पण त्यां तेथी ज थाय छे।

प्रश्न—जीवनी उलटी समजथी वस्तु स्वतन्त्रतानुं खुन थाय ए स्वभावीक छे, पण तेथी ज्ञानीओनी आशातना शी रीते थाय ?

उत्तर – प्रथम तो जीवनी उलटी समज ए सुचवे छे के तेने सर्वज्ञना ज्ञान सामर्थ्यनो, अने तेना सिद्धांतनो, पुर्ण विश्वास नथी अने तेथी तेणे सर्वज्ञना ज्ञानमां अने तेना सिद्धांतमां वस्तु मात्र स्वतन्त्रपणे सौ पोत पोताना स्वभावमां वर्ती रही छे, अने तेनो कोई कर्ता नथी, ए वातनो स्वीकार तेना वास्तविक निर्णयपुर्वक पोताना ज्ञानथी कर्यो नथी। मतलब के अनादिथी वर्ती रहेली एवी पोतानी उलटी समजने हजु पण तेणे ते रुपे ज टकावी राखी छे, अने तेथी स्थुल दृष्टीए सर्वज्ञने अने सर्वज्ञना सिद्धांतने मानवानो के तेना पर विश्वास होवानो दावो करवा छतां तत्व दृष्टीए ते निमित द्वारा पोतानी उलटी समजनो परित्याग न थवाथी ते मानवारुप के विश्वास होवारुप एवी जे वात ते एक मात्र वंचकपणुं छे, अने ते ज सर्वज्ञ देवनी के अनंत ज्ञानीओनी आशातना छे—

प्रश्न—ते उलटी समजमां मुख्यपणे कई कई बाबतोनो समावेश थाय छे ?

उत्तर—ते निचे प्रमाणे छे—

१—देहादि पुद्गल द्रव्यमां, के तेनी स्वतन्त्र क्रियामां, जीवे आत्म बुद्धीनो के तेना स्वामित्व-पणानो कर्ता भाव पुर्वक आरोप करवो ते।

२—पुण्य पापरुप विकार जन्य भावोमां जीवे पोतानुं स्वामित्वपणुं दृढ करवुं अने पुण्यथी धर्म थाय ए मान्यताने वळगी रहेवुं ते।

३—कोई पण जीव के जड पदार्थथी पोताने राग द्वेषनी उत्पत्तिनुं सुख दुःखनुं के कोई प्रकारनी हानी लाभनुं कारण मानवुं ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४—वस्तु मात्र एक बीजाना आश्रये रहेली छे, अने तेनो कोई कर्ता छे, एवी मिथ्या मान्यताने वश थई वस्तु स्वतन्त्रतानुं खुन करवुं ते।

५—देवादि त्रयात्मक तत्वोना असत्यार्थ बोधने सत्यार्थ भाव पुर्वक वळगी रहेवुं ते।

उपरोक्त बाबतोनो समावेश उलटी समजमां थाय छे, अने तत्व विचार ए तेना विलयनो मुख्यमां मुख्य उपाय छे, ते लक्ष उपरोक्त सुसाधकने होवाथी ते तथारुप सद्विवेकने अवलंबी ते द्वारा पोतानी आत्मार्थ साधनाने तत्वनी विशेष समाधानीपुर्वक विशेष दृढ करतो जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये पुदगल क्रिया पराश्रीत होवा सम्बन्धीनी आशंका उत्पन्न करी ते सम्बन्धी पुनः प्रश्न करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये करे, पुनः प्रश्न विचारी एम।
पुदगल स्वाश्रीत होय तो, दीसे क्रिया जीवाश्रीत केम॥
इच्छाधिन रही जीवनी ते, वर्तें देहादि प्रत्यक्ष ए।
गुरुजी कहे ते कहुं आंय, सुण थई सन्मुख अंतर मांय॥४॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य विचारीने पुनः गुरुजी प्रत्ये एम प्रश्न करे छे, के हे भगवंत! जो पुदगल द्रव्य स्वाश्रीत होय तो तेनी सर्व क्रिया जीवाश्रीत केम देखाय छे? जीवनी इच्छाना आधिन देहादि पुदगल द्रव्य रही ते सर्व शुभाशुभ क्रियामां तन्मयपणे वर्ती रह्यां छे, ए प्रत्यक्ष जोवामां पण आवे छे। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के हे शीष्य ते हुं तनें अहिं समजावुं छुं, ते तुं अंतरना विषे सन्मुख थई आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आजे सौ कोई जीवने पोतानो अंतर्मुख दृष्टीना अभावे मात्र बाह्य जडनी क्रिया देखाय छे, अने तेथी सर्व कोईने ते क्रिया हुं करी शकुं छुं, अथवा जीवनी इच्छानुसार ते क्रिया थई शके छे, एवा प्रकारनी भ्रमात्मक बुद्धी रह्या करे छे। तथारुप दोषनुं उपरोक्त साधकने विशेष प्रकारे परिक्षीणपणुं बोधनी अंतरंग सन्मुखताना बळे थवा छतां पण पोतानी अल्पांशे रहेली आशंकाने श्री गुरुजी सन्मुख उपस्थित करी तेनी विशेष प्रकारे समाधानी इच्छे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

इच्छाधीन रही जीवनी, करे क्रिया न पुदगल एक।
पण स्वाश्रीतपणे सदा, रही करे ते क्रिया अनेक॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वस्तु मात्र विषे हे बाळ, प्रदेश भेद रह्यो त्रण काळ।
तेथी क्रिया बे एकमां नोय, के करे न एक मली बे कोय ॥ ५ ॥

अन्वयार्थ—पुदगल द्रव्य जीवनी इच्छाना आधिन रही एक पण क्रिया करतुं नथी, पण सदा स्वाश्रीतपणे रही ते अनेक क्रिया करे छे। वस्तु मात्रना विषे हे बाळ! त्रणे काळ प्रदेश भेद रहेलो छे, अने तेथी एक द्रव्यना विषे बे क्रिया होती नथी, के बे द्रव्य मलीने एक क्रिया उपजावतां नथी, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— देहादि पुदगल क्रिया जीव केम न करी शके? ए प्रश्न सौ कोई जीवने पोतानी विपर्यय बुद्धीना लीधे उत्पन्न थाय ए स्वभावीक छे, अने तेवा ज प्रकारनो प्रश्न उपरोक्त साधकनो पण छे, तेनी सर्वांग समाधानी अर्थे अहिं जीव पुदगलनी निमित नैमितिकरुप थती एवी परस्पर संबंध विशेषरुप क्रियानुं चार भंगनी पृथकतापुर्वक स्पष्टीकरण करवामां आवे छे।

(जीव पुदगलनी परस्पर निमित नैमितिक क्रियामां उभयनुं स्वाधिनपणुं)

१—जीवमां इच्छा जन्य विकल्प होय—अने ते समय पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता पण होय।
२—जीवमां इच्छा जन्य विकल्प होय—पण ते समय पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता न होय।
३—जीवमां इच्छा जन्य विकल्प न होय—पण ते समय पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता होय।
४—जीवमां इच्छा जन्य विकल्प न होय—अने ते समय पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता पण न होय।

स्पष्टीकरण

पहेला भंगमां जीवनो इच्छा जन्य विकल्प होवाना समये पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता होवाथी जीवनी इच्छानुसार देहादि बाह्य क्रिया थती जोवामां आवे छे, जेम के जीव्हा वडे शब्दोचार करवारुप, हस्त वडे लेवा मुकवारुप, कम्मर वडे उठवा बेसवारुप, पग वडे हरवा फरवारुप, विगेरे क्रिया थवी ते। बीजा भंगमां जीवनो इच्छा जन्य विकल्प होवा छतां ते समये पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता न होवाथी जीवनी इच्छानुसार देहादि बाह्य क्रिया थती जोवामां आवती नथी, जेम के कोई रोगादि कारण विशेषथी जीव्हा वडे शब्दोचार करवारुप, हस्त वडे लेवा मुकवारुप, कम्मर वडे उठवा बेसवारुप, पग वडे हरवा फरवारुप, विगेरे क्रियानुं अटकी जवुं ते। त्रीजा भंगमां जीवनो इच्छा जन्य विकल्प न होवा छतां ते समये पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता होवाथी जीवनी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छा विरुद्ध देहादि बाह्य क्रिया थती जोवामां आवे छे, जेम के वायु आदिना प्रकोपथी एकाएक दम के दस्त विगेरेनुं शरु थवुं, शरिरने चक्कर आववाथी तेनुं भोंय पर पडी जवुं, एकाएक देह पृथकता रुप मृत्यु थई जवुं विगेरे क्रिया थवी ते। चोथा भंगमां जीवनो इच्छा जन्य विकल्प अने पुद्गल कर्मनी उदय जन्य योग्यता बंनेनुं अभावपणुं (बाह्य क्रियानी अपेक्षाए) होवाथी देहादि बाह्य क्रिया थती जोवामां आवती नथी, जेम के निद्रा ग्रस्त हालतमां शरिरनुं पडी रहेवुं ते।

आ उपरथी समजाशे के जीवना इच्छा जन्य विकल्पनी साथे देहादि पुद्गल क्रियानो संबंध कोई पण प्रकारे नथी, पण तेनी पोतानी उदय जन्य योग्यता साथे छे, अने तेथी ते स्वतंत्ररुप होवाथी तेनुं परिणमन कोई पण प्रकारे जीवना आधिन नथी, अने तेथी जीव ते क्रिया न करी शके ए सहज अने स्वभावीक छे।

आ उपरथी लक्षमां आवशे के वस्तु स्वभाव सर्वथा स्वतन्त्ररुप होवाथी अने ते अनुसार तेनो प्रदेश भेद अने द्रव्यत्व गुणनुं परिणमन भेद रहेवाथी एक द्रव्यनुं परिणमन बीजा द्रव्यना आधिन नथी, अने तेथी एक द्रव्य बीजा द्रव्यनुं कांई पण हिताहित करी शकवाने समर्थ पण नथी। आम वस्तु स्थिति होवाथी आत्मानी परिणमनरुप क्रिया आत्माथी अभिन्नरुप अने देहादि पुद्गल परिणमनरुप क्रिया, पुद्गलथी अभिन्नरुप होवानुं सिद्ध थाय छे, अने तेथी जेम आत्मा व्याप्य व्यापक (फेलावनारनी फेलायेली अवस्था) भावथी पोतानी परिणमनरुप क्रिया करे छे, अने भाव्य भावक (भोगवनारनी भोगववा योग्य अवस्था) भावथी तेने अनुभवे छे, तेम जो आत्मा व्याप्य व्यापक भावथी पुद्गलनी परिणमनरुप क्रिया करे, अने भाव्य भावक भावथी तेने भोगवे तो आत्मा अने पुद्गलनुं परस्परनुं भिन्नत्वपणुं मटीने उभय द्रव्य अभिन्नपणाने पामे। मतलब के एम त्रणे काळना विषे वस्तु पोताना स्वतंत्र स्वभावने अवलंबीत होवाथी बनतुं नथी, अने तेथी एक द्रव्यनुं बीजा द्रव्य रुपे, के बंनेनुं एक रुपे परिणमवुं थई शकतुं नथी। आम होवाथी एक द्रव्यमां बीजा द्रव्यनी क्रिया, अर्थात एक द्रव्यमां बे क्रिया होती नथी, तेम ज बे द्रव्य मलीने एक क्रियाने पण उपजावतां नथी, अने तेथी प्रत्येक द्रव्यनुं कर्ता कर्मपणुं एटले पोतानी पर्यायनी प्रति समय अवस्था बदलनार, अने प्रति समय बदलाती एवी जे पोतानी अवस्था ते पोताना विषे सदा अभिन्नपणे स्वाभावीक ज वर्तती होय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तथारुप लक्षे साधकनी साधनात्मक प्रवृति संबंधी आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अहिं ते विचारी बोधने, करे विशेष तत्व प्रतित ।
निमित नैमितिकरुप, गणी क्रिया उभयनी चित्त ॥
ते लक्षे विशेष प्रकारे ते, सन्मुख भावे वर्ते ए ।
मानी सदगुरुनो उपकार, वर्ते त्यां पण आज्ञा धार ॥६॥

अन्वयार्थ—अहिं ते साधक जीव तथारुप एवा ते सद्गुरु बोधने विचारी अने ते द्वारा जीव पुदगलरुप एवी ते उभय द्रव्यनी परस्परनी क्रियामां मात्र त्यां निमित नैमित्तिकरुप संबंध होवानुं गणी तेनी पोताना चित्तना विषे विशेष प्रकारे तत्व प्रतिती करे छे, अने ते लक्षे ते विशेष प्रकारे सन्मुख भावे पण वर्ते छे, अने ते साथे प्रत्यक्ष एवा ते सद्गुरुनो उपकार मानीने त्यां पण ते तेमनी आज्ञाधिनपणे वर्ते छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—अनादि काळथी आ जीवनुं पोतानी विपर्यात्मक बुद्धीना लीधे देहादि पुदगल द्रव्यना विषे वर्ती रहेलुं एवुं जे एकत्व बुद्धीपणुं अने ते अनुसार तेना कर्ता कर्म भावनुं पोताना विषे दढत्वपणुं तेनुं वास्तवीक भान वस्तुनी योग्य समाधानीपुर्वक उपरोक्त एवा ते सुसाधकने बोधनी सन्मुखवर्ती विचारणाना बळे थतां, ते पोतानी आज पर्यंत विमुख भावे पोषायेली एवी जे मिथ्यात्व रुपी महा भुल ते भुलने भुल रुपे स्वीकारी तेनो सन्मुख भावे परिहार करे छे, अने उभय द्रव्यनी क्रियामां मात्र त्यां निमित नैमितिकरुप एवो संयोग संबंध होवानुं एटले जीवनी सर्व शुभाशुभ विकल्पात्मक क्रियामां देहादि पुदगल द्रव्य मात्र निमितरुप छे, अने देहादि पुदगल द्रव्यना सर्व शुभाशुभ बाह्य क्रियात्मक आचरणमां जीवनो विकल्प मात्र निमितरुप छे, एम विशेष प्रकारे दढ करे छे, अने ते लक्षे ते विशेष प्रकारे स्व सन्मुख भावे पण वर्ते छे, अने ते निष्कारण करुणावंत एवा ते प्रत्यक्ष बोध दाताना उपकारने पुनः पुनः विचारी तेमनी आश्रय भक्तिमां मनादि योगने पण सर्वार्पण भावे विशेष विशेष स्थिर करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

दश कारण सम्यक्त्व प्राप्तीना, तेमां सात कह्या प्रकार ।
अहिं ते पैकी आठमु, स्वरुप चिंतवन विशेष धार ॥
तेथी विशेष प्रकारे नित्य, स्वरुप चिंतवनमां होय स्थित ।
ते साथे पंचात्मक भावो पण, चिंतवे ते विशेषे मन ॥ ७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वयार्थ—सम्यग्दर्शन प्राप्तीना दश कारणोमां पुर्वे तेना तने सात प्रकार कह्या हता, अहिं ते पैकी तेने आटमुं स्वरुप चिंतवन एटले विशेष तत्व मिमांसाना बळे स्वरुप चिंतवनरुप एवुं गुण विशेष परिणमन प्रगट थवुं ते, एवुं विशेषरुप कारण प्रगटे छे, एम तुं धार अने तेथी ते नित्य विशेष प्रकारे स्वरुप चिंतवनमां स्थित कहेता स्व विर्यात्मक रुचीना वलणने तथा प्रकारना एकाग्र भावमां प्रेरे छे, अने ते साथे पंचात्मक भावोनुं पण ते मनना विषे विशेष प्रकारे चिंतवन करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचन रुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—बोधनी विशेष तत्व मिमांसाना बळे रुचीनुं वलण स्व तरफ प्रेरीत थई अहिं उपरोक्त साधकने सम्यग्दर्शननी प्राप्तीमां हेतुरुप एवुं स्वरुप चिंतवन ए नामनुं आठमुं विशेषरुप कारण तेनुं अहिं उपलब्धिपणुं थाय छे, अने तेथी ते विशेष प्रकारे स्वरुप चिंतवनरुप एवा गुण विशेष परिणमनमां अर्थात स्वरुप विचारणामां नित्य उपयोगने विशेष प्रकारे प्रेरे छे, अने ते साथे जीवना पंचात्मक भावोनुं पण ते विशेषप्रकारे चिंतवन करे छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

औपशमीक भाव

जीवनी अवस्था विशषमां तेना पोताना कारणे थयेला एवा स्व पुरुषार्थनुं निमित पामीने पुदगल कर्मना विषे तेना पोताना कारणे तथारुप कर्मोदय जन्य अशुद्धतानुं जघन्य अंतर्मुहूर्त पर्यन्त दबाई जवुं ते।

क्षायिक भाव

जीवनी अवस्था विशेषमां तेना पोताना कारणे थयेला एवा स्व पुरुषार्थनुं निमित पामीने पुदगल कर्मना विषे तेना पोताना कारणे तथारुप कर्मोदय जन्य अशुद्धतानुं सर्वथा अभावपणुं थवुं ते।

क्षायोपशमीक भाव

जीवनी अवस्था विशेषमां तेना पोताना कारणे थयेला एवा स्व पुरुषार्थनुं निमित पामीने पुदगल कर्मना विषे तेना पोताना कारणे तथारुप कर्मोदय जन्य अशुद्धतानुं अमुक प्रमाण क्षय अने उपशम एम उभयरुप थवुं ते।

उदयिक भाव

पुदगल कर्मना विषे तेना पोताना कारणे उदयरुप थयेला, थता, के वर्तता एवा समस्त उदयिक भावना पोषकरुप के तेनी वर्द्धमानताना हेतुरुप मिथ्यात्वादि द्रव्य मोहास्रवनुं निमित पामीने जीवे तथारुप परिणाम विशेषमां तेना पोताना कारणे भाव मोहास्रव रुपे परिणमन करवुं ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पारिणामीक भाव

उदय, उपशम, क्षयोपशम, के क्षय, एवा चारे भावोथी अने जीवनी उत्पाद व्ययरुप अपेक्षीत पर्यायथी रहीत एवा शुद्ध अने पुर्ण त्रीकाली द्रव्य गुण अने निर्पेक्ष पर्यायरुप ध्रुव स्व-भावमां सामान्यरुप एवा परम पारिणामीक भावनुं त्रीकाळ एक रुप एवुं शुद्ध परिणमन वर्ती रह्युं छे ते।

आ प्रमाणे पंचात्मक भावोनुं स्वरुप छे, तेमां आदिना चार भावो ते पर्यायार्थीक नयथी छे, अने अंतनो एक ते शुद्ध द्रव्यार्थीक नयथी जीव मात्रना स्वभाव परिणामरुप छे। तथारुप भावोना पृथक पृथक भेदने विचारीए तो तेना अनुक्रमे--२-९-१८-२१--अने ३ एम एकंदर (५३) त्रेपन भेद थाय छे। तथारुप भावोमां आदिना बे भावो ते जीवना सम्यकत्वादि भावोनी उपलब्धी समये ज क्रमे प्रतिहत अने अप्रतिहत एवा सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था विशेषने अवलंब-वाथी जीव अवस्थामां उपलब्धरुप थाय छे। त्रीजो भाव साधक दशामां जीवने निमितरुप होय छे। चोथो उदयिक भाव तेमां मुख्यत्वे करी मिथ्यात्व, ते जीवना सम्यकत्वादि गुण विशेषनुं निमित पामीने उदय निवृतिना हेतुरुप एवुं तेनुं उपशमादि रुपे परिणमवुं थाय छे, अने पांचमो पारिणामीक भाव ते जीवना निज स्वभाव परिणामरुप होवाथी आत्मार्थ साधकने ते त्रीकाळ एक रुप अवलंबनभुत छे।

प्रश्न—उपरोक्त भावोमां आदिना बे भावो तो क्वचित एवा कोई सन्मुखवर्ती साधकने ज उपलब्धरुप थई शकवा योग्य छे, तो पछी तेने आदिमां स्थान आपवानो शुं हेतु छे? अने ते भावोनी प्राप्तीनो वास्तवीक उपाय शुं छे?

उत्तर—सम्यकदर्शन रुपी धर्मनी शरुआत प्रथम औपशमीक भावथी ज थाय छे, अने तेनी पुर्णतामां नियमा क्षायिक भाव ज होय छे, अने तेथी तथारुप दृष्टीए एवा ते उभय भावोने आदि स्थान आपवामां आव्युं छे। तथारुप भावो पर्यायार्थीक नयथी क्षणीक अवस्थारुप होवाथी अने तेमां भेद विकल्पनुं मुख्यपणुं रहेवाथी तथारुप लक्षे ते भावोनी उपलब्धी थती नथी, पण तेना अभावरुप लक्षे एटले शुद्ध द्रव्यार्थीक नयथी अखंड ध्रुव स्वभावरुप एवा पारिणामीक भावने अवलंबवाथी क्रमे करी ते भावोनी उपलब्धी थाय छे, अने ते ज तेनी प्राप्तीनो वास्तविक उपाय छे।

आ उपरथी एम समजवा योग्य छे के पर्यायार्थीक नयना विषयभुत एवा आदिना चारे भावो क्षणीक अवस्थारुप अने भेद विकल्पना उत्पादकरुप होवाथी तथारुप लक्षे सम्यग्दर्शन रुपी धर्मनी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपलब्धी अनंतकाळ प्रयत्न करवा छतां पण थती नथी, एटलुं ज नहिं पण तथा प्रकारनो विमुखवर्ती पुरुषार्थ विपर्यय भावे पोषावाथी मुख्यपणे ते उदयिक भावना बंध हेतुरुप थई तेनी वर्द्धमानताना पोषकरुप बने छे। मतलब के सम्यग्दर्शन रुपी धर्मनी उपलब्धीमां मात्र एक शुद्ध एवा पारिणामीक भावनी ज अपेक्षा रहे छे, अने साधकनी प्राथमीक भुमीकामां औपशमीक भावनी प्राप्ती पण ते द्वारा ज थाय छे।

उपरोक्त बोधनुं सम्यक भान आ त्रीजी अवस्थामां वर्तता एवा ते सुसाधकने श्री सद्गुरु योगे थवाथी ते तेनुं विशेष प्रकारे चिंतवन स्वरुप लक्षे करे छे, अने ते द्वारा पोताना आत्मार्थ भावने विशेष प्रकारे स्व सन्मुख पण प्रेरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

भाव विशुद्धी अंतरे, प्रगटे तेथी तेने विशेष।
तेथी मुढत्व भावनो, नोंय अंतर लेष प्रवेश ॥
तेथी चमत्कारादि अन्य, जोई न आश्चर्य पामे मन।
जाणे अंतरमां सौ जाल, बुद्धीनो एम लावी ख्याल ॥८॥

अन्वयार्थ—तेथी अहिं ते साधकनां अंतर परिणामनां विषे विशेष प्रकारे भाव विशुद्धी प्रगटे छे, अने तेथी तेना अंतरना विषे मुढत्व भावनो प्रवेश लेश पण होतो नथी, अने तेथी अन्य कोई मिथ्यादृष्टीना चमत्कार विगेरे जोई त्यां ते बुद्धीनो ख्याल लावी अंतरमां एम जाणे छे के आ सर्व इंद्रजाळनो तमासो कहेतां मायिक प्रपंच छे, अने तेथी तेनुं मन त्यां लेश मात्र पण आश्चर्यरुप विकल्पने पामतुं नथी, के ते तरफ आकर्षातुं नथी, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—कोई पण मिथ्यादृष्टीना बाह्य चमत्कारादि जोई त्यां मनना विषे आश्चर्यरुप विकल्पनुं उपस्थितपणुं थवुं, के ते तरफ मननुं आकर्षावुं ते एक मात्र पोतानी तत्व विमुख दृष्टी होवानुं सुचन करे छे, अर्थात ते जीवने तत्व संबंधी वास्तविक बोध नहिं होवाथी ते तरफ ते पोताना वलणने मुढत्व भावे प्रेरे छे। आवा प्रकारना दोष विशेषनुं अभावपणुं थवामां के करवामां मुख्यत्वे करी मात्र एक तत्व विचारनी अपेक्षा रहे छे, अने ते तेनो वास्तविक उपाय होवाथी तेवो कोई आत्मार्थ साधक जेम जेम तथारुप तत्व विचारनी सन्मुखतामां पोतानी वियत्मिक रुचीना वलणने प्रेरतो जाय छे, तेम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेम दर्शनाचार विशुद्धीनुं क्रमे क्रमे वर्द्धमानपणुं थई ते द्वारा तेवा प्रकारना मुढत्व भावनुं सहज अभावपणुं थतुं जाय छे। तथारुप बोध विशेषनुं वास्तविक परिणमन उपरोक्त एवा ते सुसाधकने होवाथी ते तेवा प्रकारना मुढत्व भावने ते बोध विशेषना बळे वमी पोताना विर्यात्मक रुचीना वलणने निज आत्मार्थ भावनी सन्मुखतामां प्रेरीत करे छे, अने ए ज तथारुप बोध विशेषना वास्तविक परि-णमननुं फल छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

एम ते सन्मुख भावथी, वर्ते स्थिर करीने चित्त।
ते साथे बोधी भावना, भावे अंतरमां ते नित्य॥
विशेष चित्त विषे वैराग, विशेषे विभावनो त्याग।
विशेषे होय भवनो खेद, विशेषे जाणे जग केद॥९॥

अन्वयार्थ—एम ते साधक सन्मुख भावथी चित्त स्थिरतापुर्वक वर्ते छे, अने ते साथे बोधी कहेतां शुद्ध सम्यग्दर्शन प्राप्तीनी भावना पण ते नित्य अंतरना विषे भावे छे। वळी तेना चित्तना विषे विशेष प्रकारे वैराग, अने विशेष प्रकारे मिथ्यात्व जन्य एवा रागादि वा क्रोधादि विभाव भावोनो त्याग होय छे। वळी विशेष प्रकारे भवनो खेद, अने विशेष प्रकारे ते जगतना प्रपंचने केद कहेतां काराग्रहरुप बंधननी बेडीओ समान जाणे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—सम्यग्दर्शन रुपी परम निधाननी प्राप्तीमां मुख्यत्वे करी कया कया गुण विशेषनो अपेक्षा रहे छे, ते उपरोक्त साधकनी वर्ती रहेली एवी अंतर सुविचार श्रेणी परथी आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाय तेवुं छे। प्रथम तो जेना अंतरना विषे चित्त स्थिरता सन्मुख भावे वर्ते छे, अने ते मोह जन्य इच्छानुं विशेष प्रकारे परिक्षीणपणुं होवानुं सुचन करे छे, ते साथे निरंतर तेना अंतरमां बोधी भावना सहज सन्मुख भावे वर्ती रही छे, अने ते पोताना विषे प्रगटेली एवी निज आत्मार्थ सन्मुखता तेनुं विशेष प्रकारे सुचन करे छे, अने ते साथे तेना चित्तना विषे मुख्यत्वे करी मिथ्यात्व जन्य एवा रागादि वा क्रोधादि विभाव भावो प्रत्ये विशेष प्रकारे वैराग, अने विशेष प्रकारे तेना त्यागमां उप-योगनुं सन्मुखवर्तीपणुं पण सम्यक योगे वर्ती रह्युं छे, अने ते विर्यात्मक रुचीना पर जन्य वलण प्रत्ये पोतानी औदासीन वृत्ति होवानुं सुचन करे छे, वळी ते साथे तेना अंतरना विषे विशेष प्रकारे भवनो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खेद वर्ते छे, अने ते सर्व प्रकारना भव भावनी आकांक्षाना अभावरुप एवुं पोतानुं निःशल्यात्मकपणुं होवानुं सुचन करे छे, अने ते साथे विशेष प्रकारे ते जगतना प्रपंचने एटले कर्मोदय जन्य एवी समस्त औपाधिक भावरुप आकुळताने केद कहेतां काराग्रहरुप बंधनी बेडीओ समान जाणे छे, अने ते स्वाश्रीत निराकुल परिणामरुप एवा पोताना वास्तविक सत सुखनो पोताने परमार्थ लक्ष होवानुं सुचन करे छे।

आ प्रमाणे ते साधक अंतर सुविचार श्रेणीने अवलंबी पोताना आत्मार्थ भावनी वर्द्धमानता अने विशेष प्रकारे सन्मुखता सम्यक योगे करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

एम परमार्थ दृष्टीने, करी मुख्य अंतरमां तेह।
वर्ते वृद्धीगत भावथी, टाळी सर्व संसारनो नेह॥
शुभ प्रवृति विषे योग, ने त्यां स्थिर करी उपयोग।
थई ए त्रीजी अवस्थानी वात, हवे चोथी बोधुं सुण भ्रात॥१०॥

अन्वयार्थ—एम ते परमार्थ दृष्टीने एटले शुद्ध आत्मार्थ भावनी अंतरंग सन्मुखताने मुख्य करी, अने ते अर्थे शुभाचरण प्रवृतिना विषे मनादि योगने अने उपयोगने स्थिर करी त्यां तथारुप लक्षे एटले निज आत्मार्थ भावनी वर्द्धमानतापुर्वक संसार जन्य भावो प्रत्येना नेहनो कहेतां राग बंधन टाळी ते वर्ते छे। अहिं सुधी त्रीजी अवस्थानी वात थई। हवे तने चोथी अवस्था बोधुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— परमार्थ दृष्टीनुं मुख्यपणुं ते मुख्यत्वे करी आत्मार्थ भावनो हयाति होवानुं सुचन करे छे, अने तेथी ज्यां ज्यां तथारुप दृष्टीनुं मुख्यपणुं होय छे, त्यां त्यां आत्मार्थ भावनी वर्द्धमानतापुर्वक तेना सन्मुखवर्ती साधनमां योग अने उपयोगनुं प्रेरावापणुं पण नियमा होय छे, अने संसार जन्य भावो प्रत्येना नेहनुं कहेतां पर तरफना राग बंधननुं क्रमे क्रमे परिक्षीणपणुं पण त्यां ज थवा योग्य छे, अने ते उपरोक्त साधकनी वर्तमान एवी आ अवस्थाने अवलोकतां सहज सिद्ध थई शकवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं चोथी अवस्थाना बोध विशेनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

卐

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(चोथी बोध अवस्था अधिकार)

चोथी अवस्थाना विषे, बोध दीपक ज्योति समान ।
तेथी सुविवेकनी अहिं, क्रमे वृद्धी विशेषे जाण ॥
तेथी विशेष प्रकारे नित्य, वांचनादिमां प्रेरी चित्त ।
अनुप्रेक्षा करे बोधनी ते, विचारी विशेषे ए ॥१॥

अन्वयार्थ—चोथी अवस्थाना विषे बोध दीपक ज्योति समान एटले जेम दीपकनी ज्योत काष्टना अग्नि करतां विशेष एवा स्थिर प्रकाश रुपे होवाथी कांईक वधारे वखत टकी शके छे, तेम आत्म बोधनुं अस्तित्व अहिं स्थुल रुपे होवा छतां पण पुर्व अवस्था करतां कांईक विशेष स्थिर परिणामे टकी शके तेवुं योग्यपणुं तेना विषे होय छे, अने तेथी आत्मार्थ सद्विवेकनुं अहिं तेने अनुक्रमे विशेष प्रकारे वृद्धीरुप परिणमन वर्ततुं होय छे, एम तुं जाण, अने तेथी अहिं ते विशेष प्रकारे पोताना चित्तने नित्य वांचनादि भावोमां प्रेरी तथारुप बोधनी अनुप्रेक्षा तेना विशेष विचारपुर्वक करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—स्थुल सुक्ष्म परिणमननी अपेक्षाए बोधना मुख्यत्वे करी बे प्रकार छे, स्थुल परिणमनमां सुक्ष्म ग्रन्थी भेदनुं अभावपणुं होवाथी त्यां बोधनुं ओघ प्रतितीपणुं गर्भीत शुद्धतापुर्वक होय छे, अने सुक्ष्म परिणमनमां तथारुप ग्रन्थी भेदनुं सदभावपणुं होवाथी त्यां बोधनुं सम्यक प्रतितीपणुं प्रगट शुद्धतापुर्वक होय छे । आम होवाथी आदिनी चार बोध अवस्था पैकीनी एवी अन्तिम बोध अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते सुसाधकनी जे कांई वांचनादि प्रवृति होय छे, तेने तथारुप एवी ते सुक्ष्म ग्रंथी भेदना अभावे स्थुल बोध रुपे ज कहेवा योग्य छे ।

प्रश्न—तथा प्रकारनी वांचनादि प्रवृतिनो शुं अनुक्रम छे ?

उत्तर—ते अनुक्रम निचे प्रमाणे छे :—

वांचना

आत्मार्थ प्रेरक सद्ग्रन्थादिनुं आत्मार्थ लक्षे वांचन वा ते लक्षे सद्गुरु बोधनुं श्रवण करवुं ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पृच्छना

ते द्वारा मिथ्यात्व जन्य एवा शंशयादि दोषोने परिहरवा के तथारुप बोधने निश्चयात्मक भावे दृढ करवा ते संबंधी प्रश्न पुछवा ते ।

परिवर्तना

प्रश्नोत्तर रुपे संप्राप्त थयेला एवा ते बोधनी विशेष प्रकारे पुनः पुनः विचारणा करवी ते ।

अनुप्रेक्षा

विचारेला बोधनुं आत्म परिणमन थवा अर्थे तेनुं निरंतर चिंतवन करवुं ते ।

आ प्रमाणे वांचनादि प्रवृत्तिनो अनुक्रम छे, ते अनुसार उपरोक्त साधकनी थयेली के थती एवी ते प्रवृत्ति के बोध चिंतवनरुप अनुप्रेक्षा ते यथार्थरुप होवा छतां पण सुक्ष्म ग्रन्थी भेदना अभावे तेने स्थुल रुपे कहेवा योग्य छे, अने तेमां आदिनी चार अवस्थानो समावेश थई जाय छे, ते पैकीनी स्थुल बोध परिणमनरुप एवी आ अन्तिम बोध अवस्थाना विषे वर्तता एवा उपरोक्त साधकनी निर्मल एवी आत्मार्थ सन्मुखता तरफ दृष्टी प्रेरी विचारीए तो तेने तथा प्रकारना सद्विवेकनुं विशेष एवुं वृद्धीरुप परिणमन अहिं उपलब्धरुप थवाथी ते विशेष प्रकारे पोताना चित्तने नित्य वांचनादि भावोमां प्रेरी तथारुप बोधनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा विशेष एवी आत्मार्थ सन्मुखतापुर्वक करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

अनुप्रेक्षा करी अंतरे, श्रद्धे एम स्वरुपने तेह ।
ज्ञानादि उपयोगमां, रह्युं जाणवादिपणुं जेह ॥
द्रव्य सामान्यथी प्रकाश ते, स्फुरे शक्ति विशेषे ए ।
स्व पर ज्ञायक दर्शक नित्य, स्वाश्रीत पद ते मारुं खचीत ॥२॥

अन्वयार्थ—तथा प्रकारनी अनुप्रेक्षा अंतरना विषे करी अहिं ते स्वरुप साधक जीव ते पोताना स्वरुपनी एवी श्रद्धान करे छे, के ज्ञान दर्शनोपयोगमां जे जोवा जाणवापणुं रह्युं छे, ते प्रकाशरुप शक्ति विशेषनुं स्फुरवुं मात्र एक द्रव्य सामान्यथी एटले सामन्यरुप एवा द्रव्य स्वभावथी प्रति समय तेनुं अवस्थांतरपणुं थईने थाय छे, ते स्व पर ज्ञायक अने दर्शकरुप एवुं जे स्वाश्रीतपणे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

टकेलुं अविनाशी पद ते खचीत करीने मारुं पद कहेतां ते स्वरुपे हुं छुं एम स्वरुप प्रतितीनुं ते विशेष प्रकारे दढत्वपणुं करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मा ए अनंत धर्मात्मक वस्तु होवाथी तेमां अनंत गुणो रहेला छे, अने तेथी तेने ज्ञानादि गुण समुदायनो धारक एवा गुणी आत्माना नामथी ओळखवामां आवे छे। अहिं गुण अने गुणीना परमार्थने विचारीए तो जेम अग्नि अने अग्निनी उष्णता एवा ते उभयरुप गुण गुणीनुं अभिन्नपणुं होवाथी अग्नि पोताना उष्ण गुण वडे काष्टादिने बाळवानुं कार्य करी शके छे, तेम गुणी एवा आत्मा साथे ज्ञान दर्शन गुणनुं अभिन्नपणुं होवाथी आत्मा पोताना एवा ते उभय गुणो वडे वस्तु मात्रने जोवा जाणवानुं कार्य करी शके छे।

आ उपरथी समजाशे के अग्नि पोताना उष्ण गुण विना, जेम काष्टादिने बाळवानुं कार्य करी शके नहिं, अने उष्ण गुण गुणी एवा अग्निना आश्रय विना रही शके नहिं, तेम गुणी एवो जे आत्मा, ते पोताना ज्ञानादि गुण विना, वस्तुने जोवा जाणवानुं कार्य करी शके नहिं, अने ज्ञानादि गुण गुणी एवा आत्माना आश्रय विना रही शके नहिं, आम वस्तु स्थिति होवाथी बंनेनुं अभिन्नपणुं प्रदेश भेद रहीत होवानुं स्वाभावीक ज सिद्ध थाय छे, अने तेम होवाथी सामान्यरुप एवो जे गुणी आत्मा ते पोताना ज्ञानादि गुण वडे तथारुप अवस्था विशेष रुपे परिणमी वस्तु मात्रने जोवा जाणवानुं कार्य परनी अपेक्षा रहीत स्वाभावीक ज करी शके छे, एम वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य छे।

आ प्रमाणे उपरोक्त साधक वास्तविक एवी तत्व मिमांसाना बळे बोधनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा करी जीवनी जोवा जाणवारुप शक्तिनुं स्वाश्रीत परिणमन होवानुं विशेष प्रकारे दढत्वपणुं स्वरुप प्रतितीनो विशेष वर्द्धमानतापुर्वक करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तथारुप विषयने मुख्य करी शीष्य गुरुजी प्रत्ये आत्मा परनी अपेक्षा रहीत जोवा जाणवारुप कार्य शी रीते करी शके ते संबंधी प्रश्न उपस्थित करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, पुछे प्रश्न करी बहु मान।
जोवा जाणवाना विषे, दीसे इन्द्रिय पांच प्रधान॥
छतां अपेक्षा परनी नोय, शुं हेतु ए बोध विशेषनो होय।
गुरुजी कहे समजावुं ते, सुण तुं सन्मुख भावे ए॥ ३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये तेमनुं बहुमान करी प्रश्न करे छे के हे. भगवंत ! जीवनी जोवा जाणवारुप क्रियाना विषे पांच ईंद्रियो प्रधानपणे जोवामां आवे छे, तेम छतां ते परनी अपेक्षा रहीत जोवा जाणवानुं कार्य करी शके छे, एम आ बोध विशेष निरुपणनुं अहिं शुं प्रयोजन छे ? ते मने कृपा करी समजावो । अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के ते हुं तने समजावुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—अनादि काळथी आ जीवनुं स्वभाव विमुख परिणमन होवाथी तेने मात्र ईंद्रिय ज्ञान छे, अने तेथी ते पोतानी जोवा जाणवारुप क्रियात्मक शक्तिनो सर्व आधार पण तेने अवलंबन भुत होवानुं माने छे, अने ते मान्यताने वश थई पोते वस्तु स्वभावने पराश्रीत होवानुं स्वीकारे छे, अने ते द्वारा परना कर्ता कर्मनुं स्वामित्वपणुं ते पोताना विषे दृढ करी स्व पर एवी वस्तु मात्रनी स्वतन्त्र शक्तिनुं खुन करे छे । आ वातनी अंतर्मुख विचारणा तथा प्रकारना बोध श्रवणथी उपरोक्त सुसाधकने थतां, ते तथारुप बोध विशेषनी सर्वांग समाधानी अर्थे गुरुजीने विनय पुर्वक प्रश्न करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

परिणमन सौ वस्तुनुं, रह्युं स्वाश्रीत सर्व प्रकार ।
तेथी जोवा जाणवा विषे, पराश्रीतपणुं नोंय धार ॥
तेथी अपेक्षा परनी नोंय, पण ज्ञानादि स्वनी होय ।
न तेथी ईंद्रियो प्रधान, पण ज्ञानादि एम तुं जाण ॥४॥

अन्वयार्थ—वस्तु मात्रना परिणमनमां सर्व प्रकारे स्वाश्रीतपणुं रहेलुं छे, अने तेथी जीवनी जोवा जाणवारुप क्रियाना विषे कोई पण प्रकारे पराश्रीतपणुं न होय, एम तुं धार, अने तेथी तथारुप जोवा जाणवारुप क्रियाना विषे परनी अपेक्षा रहेती नथी, पण ज्ञानादि स्व गुणनी ज अपेक्षा रहे छे, अने तेथी त्यां ईन्द्रियोनुं प्रधानपणुं नहिं, पण ज्ञानादि गुण विशेषनुं ज छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण ।

विशेषार्थ—वस्तु स्वभाव सर्वथा निर्पेक्ष होवाथी तेना स्वतन्त्र परिणमनमां के वस्तु मात्रने जोवा जाणवारुप एवी जीवनी कार्य प्रवृत्तिमां परनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी, अने तेथी तेना कर्ता कर्मनुं के कार्य कारण भावनुं भिन्नत्वपणुं पण होतुं नथी । आम वस्तु स्थिति होवाथी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीवनुं जोवा जाणवारुप थतुं एवुं जे ज्ञानादि गुण विशेष परिणमन तेनुं कारण निमित, इंन्द्रिय के विकल्प नथी, पण सामान्य रुप एवो जे पोतानो वस्तु स्वभाव ते ज तेनुं मुळ कारण छे। तथारुप वस्तु स्वभावनुं जीवने अबोधपणुं होवाथी अने ते अबोधपणाना लीधे जीवनो एकांत पर लक्ष रहेवाथी, ते पोतानुं जोवा जाणवारुप थतुं एवुं जे ज्ञानादि गुण विशेष परिणमन तेनो आरोप एकांत निमित्त, इंद्रिय, के पोताना राग जन्य विकल्प पर करे छे, अने ते द्वारा पोताने तथारुप ज्ञानादिनी प्राप्ती थई एम पोतानी मती मुढताथी माने छे। आवा प्रकारनी विपर्यात्मक मान्यताथी ग्रस्त जीवो उपरोक्त बोधने अंतर्मुख लक्षे विचारशे तो स्पष्ट समजाशे के वस्तु मात्रना परिणमनमां सर्व प्रकारे स्वाश्रीत-पणुं होवाथी जीवनी जोवा जाणवारुप थती क्रियामां परनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी, पण ज्ञानादि स्व गुणनी ज अपेक्षा रहे छे, अने तेथी तथारुप क्रियाना विषे इंद्रियोनुं प्रधानपणुं नहिं, पण ज्ञानादि गुण विशेषनुं ज छे, एम तत्व दृष्टीए समजवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य तथारुप बोधनी अंतर विचारणा करी तेनी विशेष समाधानी अर्थे पुनः गुरुजीने कंईक युक्तिपुर्वक पुछे छे।

शीष्य गुरुजीने कहे, बोध विचारी अंतर्मुख।
जोवा जाणवाना विषे, कहीए ज्ञानादि शक्ति मुख्य॥
तो त्यां प्रश्न उपस्थित होय, इंद्रिय वण जाणे नहिं कोय।
गुरुजी कहे समजावुं ते, सुण तुं बोध विशेषे ए॥५॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य तथारुप बोधने अंतर्मुख लक्षे विचारी गुरुजीने कहे छे के हे भगवंत! जीवनी जोवा जाणवारुप क्रियाना विषे जो ज्ञानादि शक्तिनुं मुख्यपणुं कहीए तो त्यां पुनः प्रश्न उपस्थित थाय छे के तथारुप क्रिया इंद्रिय विना तो कोई जीव करी शकतो नथी, तो पछी ते संबंधमां अहिं शुं समजवुं, ते मने कृपा करी कहो। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के ते हुं तने विशेष रुपे समजावुं छुं ते हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आजे सौ कोई जीवो वस्तु बोधना अभावे पोतानी जोवा जाणवारुप क्रिया इंद्रिय द्वारा थती होवानुं माने छे, अने ते अनुसार तेनुं मुख्यपणुं पण विशेष दृढतापुर्वक स्वीकारे छे। आवा प्रकारनी विपर्यात्मक बुद्धीनो अंशे पण परमार्थ लक्ष उपरोक्त सुसाधकने बोधनी अंतर्मुख विचारणाना बळे थतां, ते तेनी विशेष प्रकारे अंतर मिमांसा करे छे, अने तेना वास्तविक निर्णयना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हेतु लक्षने अवलंबी पुनः सद्गुरु सन्मुख ते संबंधी प्रश्न उपस्थित करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

वस्तु विषयनी योग्यता, होय ज्ञानादिमां जे प्रकार।
इंद्रिय अनुकूल होय त्यां, एम निश्चय तुं अंतर धार॥
तेथी मुख्यता तेनी नोय, पण ज्ञानादि शक्तिनी होय।
ते स्व योग्यतानी अनुसार, वस्तु विषय करे एम धार॥६॥

अन्वयार्थ—ज्ञानादि गुण विशेष परिणमनमां वस्तु विषयनी योग्यता जे प्रकारनी होय छे, ते प्रकारनी त्यां अनुकूल इंद्रियो निमित रुपे वर्तती होय छे, एम तुं निश्चय अंतरना विषे धार, अने तेथी वस्तु विषयमां एटले जीवनी जोवा जाणवारुप क्रियामां इंद्रियोनुं मुख्यपणुं नहिं पण ज्ञानादि शक्ति विशेषनुं मुख्यपणुं होय छे, अने ते मुख्यतापुर्वक ते पोतानी योग्यतानुसार वस्तु विषय करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे धार।

विशेषार्थ—ज्यां ज्यां ज्ञानादि गुण विशेष परिणमनमां वस्तु विषयनी योग्यता जे जे प्रकारनी होय छे, त्यां त्यां ते ते प्रकारनी अनुकूल इंद्रियो तेना पोताना कारणे निमित रुपे होवी अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, ए एक स्वभावीक नियम छे, अने तेथी जीवनी जोवा जाणवा रुप कार्य प्रवृत्तिनो सर्व आधार इंद्रियो पर नहिं, पण मात्र पोताना ज्ञानादि गुण विशेष परिणमन पर ज रहेलो छे, अने तेथी निगोदथी मांडी संज्ञी पंचेन्द्रिय सुधीना सर्व जीवो पोत पोतानी तथारुप गुण विशेष परिणमननी योग्यतानुसार वस्तुने जोवा जाणवारुप प्रवृत्ति पोत पोताना सामान्यरुप स्वभावने अवलंबीने ज करे छे।

आ उपरथी समजाशे के जीवनी जोवा जाणवारुप कार्य प्रवृत्तिमां इंद्रियोनुं मुख्यपणुं नहिं, पण मात्र पोताना ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननुं ज मुख्यपणुं छे, अने तेथी ते पोतानी योग्यतानुसार तथारुप प्रवृत्ति सामान्यरुप एवा पोताना वस्तु स्वभावने अवलंबीत थई करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजीने पुनः ते संबंधी कंईक युक्तिपुर्वक पुछे छे।

शीष्य कहे वस्तु बोधनो, करे विचार दीसे छे एम।
छतां जिनागमना विषे, मुख्य इन्द्रियो भाखे ते केम॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ते बोध विशेषनो हेतु शुं, ते अहिं पुछुं आपने हुं।
गुरुजी कहे ते कहुं आंय, सुण थई सन्मुख अंतर मांय ॥७॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये कहे छे के हे भगवंत! वस्तु बोधने विचारतां आपनो उपदेश मने यथार्थरुप भासे छे छतां जीनागमना विषे जीवनी तथारुप थती क्रियामां इंद्रियो मुख्यरुप होवानुं ते केम दर्शावे छे ? ते बोध विशेषनो शुं हेतु होवो जाईए ते हुं आपने अहिं पुछुं छुं। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने अहिं समजावुं छुं, ते तुं अंतरना विषे सन्मुख थई आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आजे सौ कोई जैनावलंबनी जीवो वस्तु बोधना अभावे जोवा जाणवारुप जीवनी थती क्रियामां इंद्रियोनुं ज मुख्यपणुं माने छे, अने ते संबंधी जीनागमना विषे निगोदथी मांडी संज्ञी पंचेन्द्रिय सुधीना सर्व संसारी जीवो इन्द्रियो द्वारा जोवा जाणवारुप क्रिया करे छे, एवा तेना व्यवहार नयना उपचाररुप कथनने सत्यार्थरुप होवानुं स्वीकारी पोतानी तथारुप मान्यताने विशेष प्रकारे दृढ पण करे छे। आवा प्रकारनी विपर्यात्मक मान्यतानो विशेष प्रकारे परिहार उपरोक्त साधकने बोधनी विशेष सन्मुखताना बळे थतां, ते विशेष प्रकारे उपयोगनी अंतर सन्मुखतापुर्वक तथारुप वस्तु बोधना विचारने अवलंबी पोतानी विशेष समाधानी अर्थे जीनागम दृष्टीने मुख्य करी पुनः श्री सद्गुरु सन्मुख ते संबंधी प्रश्न उपस्थित करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेलानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

निमिताश्रीत ते रह्युं, मात्र उपचाररुप कथन।
वस्तु विचारतां अंतरे, तने समजाशे ते मन॥
मात्र निमितनुं थवा ज्ञान, ते बोध विशेषनो हेतु जाण।
ते वण उद्देश अन्य न कोय, एवो आशय जिननो होय॥८॥

अन्वयार्थ—जीनागमनो ते उपदेश निमिताश्रीत होवाथी मात्र ते उपचाररुप कथन छे, एम अंतरना विषे वस्तु विचार करवाथी तने ते मनना विषे समजाशे। तथारुप बोध विशेषनो हेतु मात्र जीवने निमितनुं ज्ञान कराववा अर्थे छे, ते विना अन्य कोई उद्देश ते बोध निरुपणनो नथी, अने ए ज मुख्यपणे श्री जीननो आशय कहेतां अभिप्राय छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषार्थ—जीनागमना विषे निगोदथी मांडी संज्ञी पंचेन्द्रिय सुधीना सर्व संसारी जीवो ईन्द्रियो द्वारा जोवा जाणवारुप क्रिया करे छे, एम कहेवानुं प्रयोजन मात्र निमितनुं ज्ञान कराववा अर्थे छे, पण वस्तु अपेक्षाए नथी, कारण के वस्तु तो सामान्य विशेषात्मक एवी उभय धर्मात्मक छे, अने तेम होवाथी सामान्यरुप एवा वस्तु स्वभावमांथी ज्ञानादि गुण विशेष परिणमन प्रति समय अवस्थांतर थई ते द्वारा ते वस्तु मात्रने जोवा जाणवारुप कार्य पोतानी योग्यतानुसार करी शके छे, तेना बदले जीव तथारुप क्रिया इन्द्रियो द्वारा करे छे एम एकांत वस्तु स्वभावनी मुढतापूर्वक मानवामां आवे तो, त्यां वस्तु स्वभावनुं अस्तित्व कोई पण-प्रकारे टकी शकतुं नथी, कारण के तेवी मान्यताने अवलंबनार जीवे, पोताना ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननो ज अस्वीकार कर्यो, अने तेना अस्वीकारमां पोताना सामान्यरुप एवा वस्तु स्वभावनो अस्वीकार त्यां स्वभावीक ज थई जाय छे। आम वस्तु स्थिति होवानुं आत्मार्थी जीवे विचारी जीनागमना विषे प्रतिपादन करेला एवा ते व्यवहार नयना उपचार-रुप कथनने, उपचाररुप गणी, पोतानी आज पर्यंतनी विपर्यात्मक मान्यतानो सर्व प्रकारे परिहार करवा सम्यक योगे उद्यमवंत थवुं, अने ए ज उपरोक्त गाथा-सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य तथारुप बोधनी अंतर विचारणा करी तेनी विशेष समाधानी अर्थे पुनः गुरुजीने कंईक युक्ति-पुर्वक पुछे छे।

शीष्य कहे विशेष रुप, ज्ञानादिनो भले अस्वीकार।
तो पण ते सामान्यथी, अस्ति रहे सर्व प्रकार॥
ते साथे जोवा जाणवादि होय, ईंद्रियो द्वारा न विरोध कोय।
गुरुजी कहे समजावुं ते, शुं विरोध विचार अंतर ए॥ ९॥

अन्वयार्थ— अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये कहे छे के हे भगवंत! ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननो भले अस्वीकार करवामां आवे तो पण सामान्यरुप स्वभावथी तो ते सर्व प्रकारे त्रीकाळ अस्ति रुपे रही शके छे, अने ते साथे जोवा जाणवारुप क्रिया पण ईंद्रियो द्वारा थई शके छे, अने तत्व दृष्टीए तेमां कोई पण प्रकारनो विरोध पण आवी शकतो नथी। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के ते मान्यतामां शुं विरोध आवे छे, ते तने अहिं समजावुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचन-रुप बोधना परमार्थने श्रवण करी तेने अंतरना विषे विचार।

विशेषार्थ—उपरोक्त साधक केवा प्रकारे बोधनी अंतर्मुख विचारणाने अवलंबीत थाय छे, अने ते द्वारा युक्ति विशेषमां उपयोगने प्रेरो केवा प्रकारे गुरुजी सन्मुख प्रश्न उपस्थित करे छे,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ते वात तत्व शोधक जीवने विशेष प्रकारे विचारवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारे तत्व बोधनी निःशंक प्रतिती थवा अर्थे विशेष प्रकारे युक्ति विशेषने उपस्थित करी तेनी तथा प्रकारे एटले निज आत्मार्थ लक्षे प्रत्यक्ष एवा कोई बोध दाताना समीपवर्ती संगनी सन्मुखता पुर्वक सर्वाङ्ग समाधानीनी विजय-ताने प्राप्त करवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे । हवे अहिं तेना अनुसंधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

ज्ञानादि विशेषनो, थतां अंतर अस्वीकार ।
ज्ञानादि सामान्य त्यां, टके केम ते मन विचार ॥
नास्ति अंशनी वर्ते ज्यां, नियमा अंशी नोय त्यां ।
अंश ने अंशी तेथी साथ, वस्तुनो जाण ए परमार्थ ॥ १० ॥

अन्वयार्थ—ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननो अंतरना विषे अस्वीकार थतां त्यां ज्ञानादि रुप एवा सामान्य स्वभावनुं अस्तित्व शी रीते टकी शके, ते तुं मनना विषे विचार । ज्यां विशेषरुप एवा वस्तु स्वथावना अंशनुं नास्तिपणुं वर्ते छे, त्यां वस्तु सामान्यरुप एवा अंशीनुं अस्तिपणुं नियमा होतुं नथी, अने तेथी अंशने अंशी त्रीकाळ अभिन्न स्वरुपे साथमां ज होय एवो वस्तुनो परमार्थ हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण ।

विशेषार्थ—वस्तु सामान्य विशेषात्मक होवाथी ते उभय धर्मनुं अस्तित्व तेमां स्वभावीक ज रहेलुं छे, अने तेथी ज्ञानादि गुण समुदायनो धारक सामान्यरुप एवो जे गुणी आत्मा ते अंशीनुं अंश रुपे एटले ज्ञानादि गुण अवस्था विशेष रुपे प्रति समय परिणमवुं ए तेनो स्वभावीक नियम छे, अने तेथी निर्विशेष सामान्य ए ज प्रथम तो मर्कटना सिंग समान अभावरुप ठरे छे । मतलब के विशेष विना सामान्य अने सामान्य विना विशेष कोई पण प्रकारे होतुं नथी । आम वस्तु स्थिति होवाथी अहिं महत्वनो प्रश्न ए ज उपस्थित थाय छे के जे समये जीवे इंद्रियो द्वारा जोवा जाणवानुं कार्य कर्युं ते समये सामान्यरुप एवा ज्ञानादिए शुं कार्य कर्युं ? जो कांई न कर्युं एम मानवामां आवे तो तेनो अर्थ उपर कह्या प्रमाणे निर्विशेष सामान्य ते मर्कटना सिंग समान अभावरुप ठर्युं, अने जो ते सामान्य ज्ञानादिए पोताना गुण विशेष परिणमन द्वारा तथारुप एवुं ते जोवा जाणवारुप कार्य कर्युं, एम पोताना ज्ञानादिरुप एवा सामान्य वस्तु स्वभावने अवलंबीने मानवामां आवे तो जीवे इंद्रियो द्वारा जोवा जाणवारुप कार्य कर्युं के करे छे, ए मिथ्या मान्यतानो अहिं सर्व प्रकारे परिहार थयो के थई जाय छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ उपरथी स्पष्ट समजाशे के जीवनी ज्ञानादि शक्ति, अने इंद्रियो, ए बंने पृथकरुप अने स्वाधिन छे। ज्ञानादि शक्ति चैतन्य परिणामरुप होवाथी वस्तुमात्रने जोवा जाणवारुप एवी क्रियात्मक प्रवृति तथारुप शक्तिना बळे तेमां स्वभावीक ज रहेली छे, अने इंद्रियो जड परिणामरुप होवाथी तेमां तथारुप शक्तिनुं अभावपणुं होवुं ए सहज अने स्वभावीक छे। आम वस्तु स्थिति होवाथी एकेंद्रियथी संज्ञी पंचेंद्रिय सुधीना जीवोमां जेवा प्रकारनी ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननी योग्यतारुप विकासनी उपलब्धी होय छे , तेवा प्रकारनुं त्यां निमितभुत इंद्रियोनुं उपस्थितपणुं तेना पोताना कारणे स्वभावीक ज होय छे। आवा प्रकारना वस्तु निर्णयपुर्वक स्व पर स्वरुपनुं भेद विज्ञान करवुं एटले ज्ञानादि गुण विकासना कारणे इंद्रियो, के इंद्रियोना कारणे ज्ञानादि गुण विकास नहिं, पण बंनेनुं परिणमन पोत पोताना कारणे पोत पोताना स्वतन्त्र स्वभावने अवलंबी थतुं होवानुं सम्यक प्रकारे अवधारवुं, अने ते अवधारपुर्वक बंनेना निमित नैमितिक संबंधनुं ज्ञान पोताना सामान्य स्वभावने अवलंबीत थई करवुं ते ज सन्मुख दृष्टीए अवधार थयेला वास्तविक एवा आ वस्तु निर्णयनुं फल छे।

आ प्रमाणे उपरोक्त साधकना सर्व उपस्थित प्रश्नोनी सर्वांग समाधानी थतां ते पोताना सर्व अभिप्राय जन्य दोषोना परिहारपुर्वक विशेष प्रकारे आत्मार्थ सन्मुखता दर्शन विशुद्धीपुर्वक करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तथारुप लक्षे साधकनी साधनात्मक प्रवृति संबंधी आगळ निरुपण करवमां आवे छे।

ते लक्षे विशेषे अहिं, करे स्थिर मने ते ध्यान।
अथवा स्वाध्यायना विषे, प्रेरी लक्ष करे दृढ भान॥
पर्याय दृष्टी तेथी आंय, क्रमे निवृते अंतर मांय।
शुद्ध द्रव्यात्मक लक्षे एम, ध्येय स्थिर करीने वर्ते तेम ॥११॥

अन्वयार्थ—तथारुप लक्षे अहिं ते साधक मनने विशेष प्रकारे स्थिर करीने स्वरुप ध्यान करे छे, अथवा तो स्वाध्यायना विषे लक्षने प्रेरी पोते पोता संबंधीनुं दृढ भान नक्कि करे छे, अने तेथी अहिं पर्याय जन्य दृष्टी ते अंतरना विषे क्रमे करी निवृतरुप थती जाय छे। आ प्रमाणे ते शुद्ध द्रव्यात्मक लक्षे पोतानुं ध्येय स्थिर करीने तथा प्रकारे वर्ते छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जेम जेम उपरोक्त साधकने बोधनी अंतर्मुख विचारणाना बळे वस्तुनो परमार्थ लक्ष तेना वास्तविक निर्णयपुर्वक स्फुरतो जाय छे, तेम तेम विपर्यात्मक रुचीनुं वलण सहज स्वभाव

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सन्मुख प्रेरीत थतुं जाय छे, अने ते अर्थे पोते स्वरुप चिंतवनरुप एवा ध्यान विशेषने अवलंबी के निज उपयोगने स्वाध्यायमां प्रेरी पोते चैतन्यात्मक भावनी दृढ़तामां पण उपयोगनें विशेष स्थिर करतो जाय छे, अने तेथी अहिं पर्यायात्मक दृष्टी तरफना मिथ्यात्व जन्य वलणनुं मंद परिणामीपणुं के क्रमे निवृत्तिपणुं तेना अंतर परिणामना विषे थतुं जाय छे। आ प्रमाणे ते शुद्ध द्रव्यात्मक दृष्टीना प्रधान लक्षे पोतानुं ध्येय स्थिर करीने तथा प्रकारनी अंतर सन्मुखतापुर्वक वर्तें छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते साथे नय विभागनो, होय तेने बोध विशेष।
तेथी दुराग्रह भावनो, नोंय अंतर लेष प्रवेश ॥
ते साथे एकान्त नयथी कांय, विचारे न अंतर मांय।
सापेक्षता घटावे ते, आशयने विचारी ए ॥१२॥

अन्वयार्थ—ते साथे ते साधकने निश्चय व्यवहाररुप एवा बंने नय विभागनो विशेष प्रकारे बोध होय छे, अने तेथी तेना अंतर परिणामना विषे दुराग्रह भावनो प्रवेश लेश पण होतो नथी, अने ते साथे नय पक्षना एकांत अभिप्राय जन्य विचारने पण ते अंतरना विषे ग्राह्य करतो नथी, पण तेना आशयने विचारी ते प्रमाणे तेनी सापेक्षता घटावे छे, एटले अपेक्षापुर्वक तेनो अवधार करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जैनत्व बोधनुं कथन अनेकान्त रुप छे, अने अनेकांतरुप होवाथी त्यां वचननुं सापेक्षपणुं अने सापेक्षपणुं त्यां जैनत्वपणुं एम स्वभावीक सिद्ध थाय छे। आवा प्रकारनुं बोध विशेष परिणमन जे जीवने वर्तें छे, एटले निश्चय अने व्यवहार ए उभय नय विभागना परमार्थ बोधने समजवा योग्य एवी जेना विषे पात्रता प्रगटी छे, ते पात्र जीव ज उभय नय पक्षना आशय भेद कथनने विचारी एटले शास्त्रकारनो आम कहेवानो मुळ हेतु शुं छे ? एम तेनी विशेष प्रकारे तत्व मिमांसा करी ते द्वारा पोताना एकांत नय पक्षना अभिप्रायने के तेवा प्रकारनी उपस्थित थती दोष जन्य मुढताने के ते अंगे पोताना विषे वर्तती एवी दुराग्रह बुद्धीने, ते नय विभागनी तथारुप बोध विशेष जाग्रतीना बळे टाळे छे। मतलब के तेवा प्रकारना दोषनो अंश मात्र पण प्रवेश ते अंतर विषे करतो नथी।

आ उपरथी समजाशे के आत्मार्थी जीव पोताना आंतरिक उपस्थित थता दोषोनो केवा प्रकारे निग्रह करे छे, अने तेना निग्रहपुर्वक पोताना विषे निर्मलत्व परिणामनुं केवा प्रकारे सिंचन करे छे,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ते उपरोक्त साधकना नय पक्ष संबंधीना विचारने अवलोकतां स्पष्ट समजावा योग्य छे, अने तेवा प्रकारनुं निर्मलत्वपणुं प्राप्त थवाना सम्यक पुरुषार्थमां तथा प्रकारनी बोध सन्मुखतापुर्वक योजावा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

दश कारण सम्यकत्व प्राप्तीनां, तेमां आठ कह्या प्रकार।
नवमुं ते पैकी अहिं, भेद विज्ञान विशेष धार ॥
तेथी अंतरमां कर्म जन्य, भावोनी करे भिन्नता मन।
ज्ञेय ज्ञायकनुं लावी भान, विशेषे एम अंतर जाण ॥१३॥

अन्वयार्थ—सम्यग्दर्शन प्राप्तीना दश कारणोमां पुर्वे तेना तने आठ प्रकार कह्या हता। अहिं ते पैकी नवमुं भेद विज्ञान एटले विशेष स्वरुप चिंतवनना बळे पर द्रव्य अने पर निमित जन्य भावोनुं भेद विज्ञान थवुं ते, एवुं विशेषरुप कारण प्रगटे छे, एम तुं धार, अने तेथी ते अंतरना विषे ज्ञेय ज्ञायक भावनुं विशेष प्रकारे भान लावी पर द्रव्य अने पर निमित जन्य एवा शुभाशुभ भावोनी मन द्वारा भिन्नता कहेतां पृथकता करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—भेद विज्ञान ए कोई सन्मुखवर्ती साधकना अंतर परिणामना विषे तत्व बोधना वास्तविक निर्णयनो पश्चात् पुरुषार्थना सन्मुखवर्ती वलणथी ज उत्पन्न थाय छे, अने तेमां मुख्यत्वे करीने ते साधकनो लक्ष अभेदनी अंतर्मुख स्थिरता थवारुप एवा सम्यक्त्वादि गुण विशेष परिणमननो, के ते अर्थे ग्रन्थी भेद करी भेद तरफनो लक्ष कहेतां पर लक्षे वर्ती रहेली एवी अनादि बंध पर्याय जन्य मोह विशेष अंतर संधीने छेदवानो अने ते पुर्वक क्रमे अंतर्मुख स्थिरतानुं वर्द्धमानपणुं करी पुर्ण स्वरुप वितरागत्वने पामवानो होय छे, अने तेथी भेद विज्ञान ए स्वरुप साधक जीवनी स्वरुप साधनामां एटले आदिथी अंत पर्यंत क्रम बद्ध थती एवी सर्व विशुद्ध परिणामरुप अवस्था विशेषनी उपलब्धीमां अने अंतिम पुर्ण एवा स्व पदे स्वरुपस्थ थवामां ते एक अपुर्व साधन छे।

उपरोक्त साधन आ चोथी अवस्थामां वर्तता एवा ते सु साधकने विशेष एवा स्वरुप चिंतवनना बळे उपलब्धरुप थतां, ते तेने अवलंबी स्व पर द्रव्यनुं के स्व द्रव्याश्रीत रहेलां एवा शुभाशुभ विकार जन्य भावोनुं विशेष प्रकारे पृथकपणुं करे छे, अने ते साथे पोतानुं ज्ञेय ज्ञायक संबंधपणुं त्यां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होवानुं विशेष प्रकारे दृढ करी ज्ञातारुप वस्तु स्वभावना लक्षे पोते विशेष प्रकारे स्वरुप चिंतवनमां उपयोगने प्रेरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये भेद विज्ञानने सम्यग्दर्शन कही शकाय के केम ? ते संबंधी प्रश्न करे छे।

अहिं शीष्य विचारी अंतरे, पुछे प्रश्न गुरुजीने एक।
स्व परनो होय आम ज्यां, ज्ञेय ज्ञायकरुप विवेक ॥
तो तेने सम्यग्दर्शन केम, न कहीए पुछुं आपने एम।
गुरुजी कहे ते कहुँ अहिं, सुण तुं अंतर लक्षे रही ॥ १४ ॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य अंतरना विषे विचार करीने गुरुजीने एक प्रश्न पुछे छे, के हे भगवंत ! आ प्रमाणे ज्यां स्व पर स्वरुपनो ज्ञेय ज्ञायकरुप सद्विवेक वर्ततो होय तो तेने सम्यग्दर्शन केम न कहीए ? एम हुं आपने पुछुं छुं। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने अहिं कहुं छुं ते तुं अंतर लक्ष पुर्वक आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—भेद विज्ञान अने सम्यग्दर्शन ए उभयना विषे रहेला भेदत्वनुं ज्यां सुधी जीवने वास्तविक बोध परिणमन थतुं नथी, के होतुं नथी, त्यां सुधी भेद विज्ञानने सम्यग्दर्शन कही शकाय के केम ? एवा शंशयात्मक भाव विशेषमां उपयोगनुं प्रेरावुं थाय, ए स्वभावीक छे। आवा प्रकारनी शंशयात्मक बुद्धीनो विशेष प्रकारे परिहार उपरोक्त सुसाधकने बोधनी अंतर विचारणाना बळे थवां छतां, ते तथारुप बोध विशेषनी सर्वांग समाधानीना हेतु लक्षने अवलंबी श्री गुरुजी सन्मुख तथारुप प्रश्न उपस्थित करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ज्ञेय ज्ञायकरुप विकल्प ते, भेद विज्ञानरुप व्यवहार।
तेथी ते सम्यकत्व नहिं, पण स्व पर विवेक धार ॥
भेद विज्ञाननो विषय ते, स्व परने पृथक जाणे ए।
सम्यकत्वनो विषय एक होय, अखंड अभेद जे वस्तु जोय ॥ १५ ॥

अन्वयार्थ—ज्यां ज्ञेय ज्ञायकरुप विकल्पनुं मुख्यपणुं वर्ते छे, तेने भेद विज्ञानरुप व्यवहार ए नामथी संबोधवा योग्य छे, अने तेथी तेने सम्यग्दर्शन नहिं पण स्व पर वस्तु विवेकनुं अंतर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

साधन कहेवा योग्य छे, एम तुं धार, अने ते भेद विज्ञाननो विषय होवाथी ते अनुसार ते स्व परने पृथक रुपे जाणे छे, अने सम्यग्दर्शननो विषय अखंड अभेद एवा वस्तु स्वभावने ज जे जुए छे, ते ज एक मात्र छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—भेद विज्ञान अने सम्यग्दर्शन ए उभयना भेदत्वने सम्यक प्रकारे जाण्या विना, कोई पण साधक जीव शुद्ध सम्यग्दर्शनने पामी शकतो नथी, एटले अहिं प्रथम ते उभयना भेदत्वनुं निरुपण करवामां आवे छे ।

१—भेद विज्ञान ए शुद्ध साध्यनी अंतर सन्मुखताना हेतुरुप एवुं शुभोपयोग मिश्र ज्ञान मुख्य अंतर साधन छे. त्यारे सम्यग्दर्शन ए शुद्ध साध्यना एकत्व परिणाम रुपे उत्पन्न थयेल एवी स्वरुपनी सम्यक प्रतितीरुप छे ।

२—भेद विज्ञानमां स्व पर द्रव्यनी के स्व द्व्याश्रीत रहेला एवा शुभाशुभ विकल्प जन्य भावनी पृथक भेदरुप विचारणानुं मुख्यपणुं छे, त्यारे सम्यग्दर्शनमां अखंड अभेद एवा सामान्यरुप वस्तु स्वभावना अवलंबनभुत एवी द्रव्य दृष्टीनुं ज मुख्यपणुं छे ।

३—भेद विज्ञाननो विषय स्व पर ज्ञेयोने जाणवारुप के स्व पर वस्तु विचाररुप होवाथी त्यां निमित पर्याय के भेदरुप व्यवहारनी अपेक्षा रहे छे, त्यारे सम्यकदर्शननो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवाथी त्यां निमित, पर्याय, के भेदरुप व्यवहारनी अपेक्षानुं सर्वथा अभावपणुं वर्ते छे ।

४—भेद विज्ञाननो विषय स्व पर ज्ञेयोने पृथक रुपे के स्व द्रव्याश्रीत पर्याय जन्य मलीनताने मलीन रुपे जाणतो होवाथी त्यां तथारुप मलीन पर्यायने स्व ज्ञेय रुपे स्वीकारवानी अपेक्षा रहे छे, त्यारे सम्यग्दर्शननो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवाथी ते पोतानी निर्मल पर्यायना पण अस्वीकारपुर्वक मात्र एक वस्तु सामान्यने अभेद रुपे ग्रहण करवानी ज अपेक्षाने अवलंबे छे ।

५—भेद विज्ञान मुख्यपणे शुभाशुभ भावोने पृथक रुपे स्वीकारवा छतां त्यां गौणपणे शुभोपयोग-रुप विकार जन्य पर्यायनुं अस्तित्व रहेवाथी ते दोष जन्य मलीनतानुं ग्रंथी भेदरुप अभावपणुं स्व लक्षे कर्या विना, ते अभेदमां अंतर्लीन थई शकवाने समर्थ नथी, त्यारे सम्यग्दर्शन मुख्य-पणे निर्वीकार पर्याय रुपे ज उत्पन्नरुप होवाथी ते कायम अभेदमां ज अंतर्लीनपणे टकीने रहे छे ।

आ प्रमाणे भेद विज्ञान अने सम्यग्दर्शन ए उभयनुं भेदत्वपणुं छे, तेने जे सम्यक प्रकारे जाणे छे, ते ज सम्यग्दर्शनना विषयभुत एवा पोताना अखंड अभेद शुद्ध आत्म द्रव्य स्वभावना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकत्वने अवलंबीत थई अने त्यां तथारुप सन्मुखवर्ती पुरुषार्थना बळे भेद विज्ञानरुप एवा ते अंतर साधनना लक्षनुं क्रमे क्रमे मंद परिणामीपणुं करी स्वभाव एकत्वरुप एवी अभेद स्थिरताने के शुद्ध सम्यग्दर्शनने ग्रंथी भेदपुर्वक पामे छे ।

आवा प्रकारनुं बोध विशेष परिणमन जे कोई साधक जीवने वर्ते छे, ते ज भेद विज्ञानने मात्र एक शुभ विकल्परुप (शुभ विकल्प संयुक्त) एवुं ज्ञान मुख्य अंतर साधन होवानुं समजे छे, अने त्यां निमित, पर्याय, के भेदरुप व्यवहारनी अपेक्षा रहेती होवानो स्वीकार पण करे छे, अने ते सम्यग्दर्शननो विषय नहिं होवानुं विचारी तेनी ते स्थानके ते नकार बुद्धी पण करे छे, अने ते साथे अखंड अभेद एवो शुद्ध चैतन्यात्मक आत्म द्रव्य स्वभाव ते तेनो (सम्यग्दर्शननो) विषय होवाना विशेष विशेष निर्णयपुर्वक ते तेने अवलंबीत थई त्यां ते ग्रंथी भेद के तथारुप शुभ विकल्पनो परिहार पण तथारुप शुद्ध स्वभावना लक्षे करे छे, अने ते द्वारा ते तथारुप शुद्ध स्वभावना स्व संवेदनने के शुद्ध सम्यग्दर्शनने पण पामे छे ।

आ उपरथी तत्व शोधक जीवने भेद विज्ञान अने सम्यग्दर्शन ए उभयना भेदत्वनुं वास्तविक स्वरुप समजाशे, अने ते द्वारा विपर्यय मान्यतानो परिहार पण थशे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

सम्यकत्वना स्वरुपथी, रही अंतर जे बेभान ।
अटके भेद विज्ञानमां, करी पर्याय लक्ष प्रधान ।।
तो ते लक्षे ग्रंथी भेद, थई न पामे वस्तु अभेद ।
ते दोषनुं स्फुरे अंतर भान, त्यां ग्रंथी भेद ने बोधी जाण ।।१६।।

अन्वयार्थ— जे कोई साधक जीव सम्यग्दर्शनना स्वरुपथी अंतरना विषे बेभान रही मात्र ते भेद विज्ञानमां पर्याय लक्ष प्रधान करीने अटके तो ते लक्षे ग्रंथी भेद थई पोते त्यां अभेद एवी वस्तुने एटले वस्तु स्वभावना एकत्वने न पामे, ज्यारे ते दोषनुं एवा ते साधकना अंतर परिणामना विषे भान स्फुरे छे, त्यारे त्यां ग्रंथी भेद अने ते पुर्वक बोधी कहेतां सम्यग्दर्शननी प्राप्ती सहज स्वभाव लक्षे थई जाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषार्थ—आजे केटलाक स्वरुप साधको चैतन्यात्मक वस्तु स्वभावना वास्तविक बोधना अभावे वास्तविक एवा सम्यग्दर्शनना स्वरुपने नहिं जाणता होवाथी तेओ मात्र भेद विज्ञानने ज सम्यग्दर्शनरुप गणी, के तेने सम्यग्दर्शननी प्राप्तीनुं नियमरुप कारण होवानुं स्वीकारी ते अनुसार तेनी साधना एकांत पर लक्षे एटले विमुख एवा पर्यायाश्रीत लक्षनी प्रधानतापुर्वक करे छे, अने जीवन पर्यंत तथारुप शुभ विकल्पमां अटकी पोताने मोक्ष मार्गी होवानुं स्वीकारे छे, तेवा जीवो तत्व बोधनी अंतरंग सन्मुखताने अवलंबी पुर्वोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेष निरुपणने विचारशे तो तेने स्पष्ट समजाशे के भेद विज्ञान ए सम्यग्दर्शन नथी, तेम सम्यग्दर्शननुं नियमरुप कारण पण नथी, अने तेथी तेनी उपलब्धीमां सम्यग्दर्शननो उपलब्धी थवी ज जोईए एवो खास नियम पण नथी, पण त्यां जो जीव ग्रन्थी भेद के तथारुप शुभ विकल्पना परिहार पुर्वक निज ज्ञानोपयोगने सामान्यरुप एवा शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावमां अभेद रुपे परिणमावी त्यां पोते पोताना विषे स्वभाव एकत्वरुप स्थिरताने पामे, तो तेने सम्यग्दर्शन कहेवा योग्य छे, अने तथारुप स्व कार्यनी सिद्धी थतां, त्यां भेद विज्ञानने सम्यग्दर्शननुं कारण एवो उपचार पण थई शकवा योग्य छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे।

प्रश्न—भेद विज्ञानमां स्वमां परनी नास्तिरुप एवा देहादि पर द्रव्य अने पर निमित जन्य शुभाशुभ रागादि भावोने हेयरुप गणी तेनुं पृथकपणुं करवुं, अने स्वमां स्वनी अस्तिरुप एवा ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप शुद्ध स्वभावने उपादेयरुप गणी तेने दृढतापुर्वक अवलंबवुं ए उद्देश मुख्यत्वे करी स्वरुप साधक जीवनो होय छे, अने ते अर्थे ते तथारुप अंतर साधनने अवलंबीत थई त्यां पोते पोताना विषे तन्मयाकार पण थाय छे, जेम के हुं शुद्ध छुं, बुद्ध छुं अबद्ध स्पृष्ट छुं, स्व पर प्रकाशक छुं, ज्ञानानंद स्वरुप छुं, अखंड अविनाशी छुं, रागादिथी शुन्य छुं; एम अनेक प्रकारे ते स्व तरफना वलणने दृढ करे छे, तो पछी तेने शुभ विकल्परुप अंतर साधन कहेवानुं अहिं शुं प्रयोजन छे ?

उत्तर—भेद विज्ञाननुं उपस्थितपणुं मुख्यत्वे करी जीवनी पर्याय जन्य भेद अवस्थामां ज थाय छे, अने त्यां ते ज्ञान मुख्य अंतर साधनमां ज्ञान साथे मन योगना संबंध विशेषरुप एवा राग भावनुं के शुभ विकल्पनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने तेथी भेद विज्ञानने शुभ विकल्प-रुप एवुं ज्ञान मुख्य अंतर साधन कहेवानुं खास प्रयोजन छे। आवा प्रकारना परमार्थ बोधनुं जे जीवने निर्लक्षपणुं वर्ते छे, ते जीवने स्वरुप बोधनुं निर्लक्षपणुं पण अवश्य होवुं घटे छे, अने तेथी ते पर्याय जन्य भेद अवस्थामां मात्र क्षणीक ज्ञान पुरतुं पोतानुं स्वरुप कल्पी त्यां ते हुं शुद्ध छुं, बुद्ध

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छुं, आदि अनेक प्रकारे पोते पोतानुं अस्तित्व दृढ करे अने जीवन पर्यंत तथारुप शुभ विकल्पमां अटकी पोताना स्व तरफना वलणने चुके छे, अने तेथी ते ग्रन्थी भेदना अभावे सम्यग्दर्शन रुपी स्वरुप लाभने पामी शकतो नथी।

आ उपरथी समजाशे के जे जीवने स्वरुप बोधनुं वास्तविक भान वर्ते छे, ते ज भेद विज्ञानना वास्तविक परमार्थने समजी शके छे, अने विना प्रमादे ते तथारुप अंतर साधनने स्वभाव लक्षे अवलंबी तथारुप शुभ विकल्पनो परिहार कहेतां ग्रन्थी भेद पण करे छे, अने ते द्वारा सम्यग्दर्शन रुपी स्वरुप लाभने पण ते पामे छे।

प्रश्न—तथारुप शुभ विकल्प ग्रन्थी भेदनी पुर्वे ते जेम सम्यग्दर्शनने रोकवा समर्थ छे, तेम ग्रंथी भेदना पश्चात पुनः ते सम्यग्दर्शनने रोकवा समर्थ छे के केम ?

उत्तर—ग्रन्थी भेद थतां एटले ज्ञान साथे संबंध विशेष रुपे रहेली एवी अनादि बंध पर्याय-जन्य रागादि भावरुप अंतर संधी, ते ज्ञानथी पृथकरुप थई विलयने पामतां, फरी ते संधी सम्यग्दर्श-नना बळे ज्ञान साथे एकत्वरुप थई शकती नथी, अने तेथी पुनः कोई पण शुभाशुभ विकल्प उदयरुप थवा छतां, पण ते सम्यग्दर्शनने रोकवा समर्थ नथी, एटलुं ज नहिं पण ग्रन्थी भेद के तथारुप सम्यग्दर्शननी उपलब्धी बाद थतुं भेद विज्ञान ते स्वरुप पुर्णता पर्यंत अनुक्रमे स्वरुप स्थिरतानी वर्द्धमानताना हेतुरुप बने छे, ए एक खास नियम छे।

आ उपरथी भेद विज्ञानने शुभ विल्परुप अंतर साधन कहेवानो मुळ हेतु समजाशे, अने ते समज पुर्वक पोतानी अंतर साधनामां वर्तता ते संबंधीना सर्व एवा विपर्यय भावरुप दोषो तेनो स्वरुप जाग्रती पुर्वक परिहार पण ग्रन्थी भेदपुर्वक थशे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते विषे स्पष्ट करी तने, पुनः समजावुं विशेष।
थाय न ग्रंथी भेद वण, वेद संवेदमां प्रवेश ॥
सुक्ष्म बोधनुं ज्यां विज्ञान, वेद पद तुं तेने जाण।
सुक्ष्म बोध स्वरुपे स्थित, संवेद पद ते जाण खचीत ॥१७॥

अन्वयार्थ—ते विषे अहिं तने पुनः विशेष स्पष्ट करी समजावुं छुं। ज्यां सुधी ग्रंथी भेद

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न थाय त्यां सुधी वेद संवेद पदना विषे जीवनो प्रवेश थई शकतो नथी, ते वेद पद ज्यां सुक्ष्म बोधनुं विशेष विज्ञानरुप एवुं अंतर्वेदन शुद्धात्म स्वरुपना लक्षे वर्ती रह्युं होय, तेने कहेवामां आवे छे, अने संवेद पद ज्यां सुक्ष्म बोध स्वरुपे स्थिरतारुप एवुं स्वभाव संवेदन वर्ती रह्युं होय, तेने कहेवामां आवे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे खचीत करीने जाण।

विशेषार्थ— वेद संवेद पदना पृथक बोधने परमार्थ दृष्टीए विचारीए तो तेमां सुक्ष्म बोध विज्ञान, अने सुक्ष्म बोध स्वरुपे स्थिरता, एम तेनो मुख्यपणे अर्थ थाय छे। अहिं तेना प्रथम पदनो तत्व मिमांसा करीए तो तेमां शुद्धात्म स्वरुपना अंतर्मुख लक्षे निज ज्ञानोपयोगनुं सुक्ष्म बोध विज्ञानमां सम्यक प्रकारे प्रेरावुं एटले मुख्यत्वे करी त्यां द्रव्यानुयोगनी अंतर्मुख विचार श्रेणीने अवलंबी वस्तुनुं विशेष प्रकारे विज्ञान करवुं, जेमां वस्तुना सामान्य विशेषात्मक धर्मनुं, निश्चय व्यवहाररुप अंतर संधीनुं, एकांत अनेकांतना न्यायनुं, स्वभाव विभावरुप शुद्धाशुद्ध भावनुं, एम अनेक प्रकारे भेदाभेद दृष्टीए वस्तु विचारनो के तेना पृथक्करणनो समावेश थाय छे, अने तथारुप एवा ते बीजा पदमां सुक्ष्म बोध स्वरुपे स्थिरतारुप एवा अखंड अभेद शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभाव संवेदननो समावेश थाय छे। तथारुप एवा ते उभय पदो स्वाश्रीत कहेतां स्वभाव परिणामरुप होवाथी तेनी उपलब्धी ग्रन्थी भेद थये ज थाय छे, अर्थात ते विना तेनी उपलब्धी कोई पण प्रकारे थई शकवा योग्य नथी, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

तेनो आ अवस्थामां, होय आत्यांतिक अभाव।
अहिं तेथी पद अवेदरुप, होय मिथ्या उदयिक भाव ॥
तेथी स्थुल दृष्टीए ते, स्व पर भेद विचारे ए।
पण सुक्ष्म भावे विपरित, तेथी ज्ञान त्यां ज्ञेय मिश्रीत ॥१८॥

अन्वयार्थ—तेनो एटले वेद संवेद एवा ते उभय पदनो चालु एवी आ बोध अवस्थाना विषे आत्यंतिक अभाव होय छे, अने तेथी अहिं अवेद पदरुप एवो मिथ्यात्व जन्य उदयिक भाव वर्ततो होय छे, तेथी स्थुल दृष्टीए ते जो के स्व पर स्वरुपनी भेद विचारणा करे छे, पण सुक्ष्म भावे तो तेनुं विपरीतपणुं ज होय छे, अने तेथी त्यां ज्ञान ज्ञेय मिश्रीत कहेतां ज्ञान साथे रागनी पर्यायनुं अपृथकपणुं वर्ततुं होय छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषार्थ—वेद संवेद एवा ते उभय पदोनुं चतुर्थ एवी आ बोध अवस्थाना विषे सर्वथा अभावपणुं होवानुं प्रतिपादन करवामां आव्युं ते मात्र एक ग्रन्थी भेद नहिं थवानी अपेक्षाए ज छे, अने तेथी अहिं अवेद पदरुप एवा तेना प्रतिपक्षी भावनुं एटले मिथ्यात्व जन्य उदयिक भावनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अहिं नियमा होय छे, तेथी स्थुल दृष्टीए आ बोध अवस्थामां वर्तता एवा ते साधक जीवनुं स्व पर भेद विचारणामां, के ज्ञेय ज्ञायक भावना भेद विज्ञानमां प्रेरावुं थवा छतां पण सुक्ष्म एवी तत्व दृष्टीए तेनुं विपर्ययरुप परिणमन तथारुप दोष विशेषने लईने वर्ततुं होय छे, अने तेथी त्यां ज्ञान ज्ञेय मिश्रीत कहेतां ज्ञान साथे रागनी पर्यायनुं एकत्वपणुं जे अनादि काळथी जीवनी अवस्थामां वर्तो रह्युं छे, तेनुं पृथकपणुं कहेतां ते दोषनुं सम्यक प्रकारे अभावपणु अहिं थयुं नथी, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

स्वरुप एकत्व अंतरे, थतां निवृते मिथ्या भाव।
त्यारे पद अवेदरुप, तेनो सर्वथा थाय अभाव॥
त्यारे ज्ञान त्यां थई स्वाश्रीत, वेद संवेदरुप वर्ते नित्य।
ज्ञाता भावे ज्ञेयनुं ज्ञान, सर्व शुभाशुभनु त्यां जाण॥१९॥

अन्वयार्थ—स्वभाव एकत्वरुप अंतर स्थिरता ग्रन्थी भेदपुर्वक थतां ज्यारे त्यां मिथ्यात्व जन्य उदयिक भाव निवृते छे, त्यारे त्यां अवेदरुप पद तेनुं सर्व प्रकारे अभावपणुं थई जाय छे, अने त्यारे त्यां ज्ञान स्वाश्रीत थई ते नित्य वेद संवेद पद रुपे वर्ते छे, अने त्यां सर्व शुभाशुभ एवा ते रागादि परिणामरुप ज्ञेयोनुं ज्ञेय रुपे ज्ञान एवा ते स्वरुप साधक जीवने होय छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—ज्यारे कोई साधक जीव तत्व बोधने अवलंबीत थई पोते पोताना वस्तुस्वभावनो वास्तविक निर्णय करे छे, अने ते द्वारा वेद संवेद पदनी उपलब्धीना हेतुरुप, अने अवेद पद रुप एवा मिथ्यात्व जन्य उदयिक भावनी निवृतिना कारणरुप एवो मात्र एक पोतानो वस्तु स्वभाव होवानुं समजे छे, त्यारे ते पोताना विर्यात्मक रुचीना वलणने तथारुप लक्षे स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करवाना पुरुषार्थमां वास्तविक एवा भेद विज्ञानपुर्वक योजाय छे, अने ते द्वारा क्रमे करी स्वभाव एकत्वरुप एवी अंतर्मुख स्थिरतानी सिद्धी एवा ते साधक जीवनी ग्रन्थी भेदपुर्वक थतां, त्यां अवेद-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रुप पदनुं अभावपणुं तेना निमित श्रुत कर्मनी कहेतां मिथ्यात्व जन्य उदयिक भावनी निवृत्ति पुर्वक त्यां स्वभावीक ज थई जाय छे, अने तेम थतां त्यां ज्ञान स्वाश्रीतरुप थई एटले ज्ञान गुण गुणी एवा आत्मा साथे अभेदत्वने पामी, ते नित्य वेद संवेद पद रुपे एटले सदा स्वरुप एकत्वरुप परिणामनी अंतर स्थिरता रुपे वर्ते छे, अने त्यां ज सर्व शुभाशुभ एवा ते रागादि परिणामरुप ज्ञेयोनुं मात्र ज्ञेय रुपे ज्ञान करवापणुं एवा ते स्वरुप साधक जीवने पोतानी स्वरुप साधनामां रहे छे, के तेम थवुं शरु थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

अहिं सुधी क्रमे कही, तने बोध अवस्था चार।
ते सौ पद अवेद रुप, वर्द्धमान थतो बोध धार ॥
ते स्व लक्षे विचारी नित्य, करजे बोध तुं अंतर स्थित।
हवे तने समजावुं भ्रात, पंचम अवस्थानी अहिं वात ॥ २० ॥

अन्वयार्थ— अहिं सुधी अनुक्रमे तने चार एवी बोध अवस्था कही, ते सौ अवेद पद रुपे वर्द्धमान थतो बोध तुं धार। ते बोध तुं नित्य स्वभाव लक्षे विचारी तेने अंतरना विषे स्थिर करजे। हवे तने पंचम एवी बोध अवस्थानी वात हे भ्रात समजावुं छुं, ते तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— अहिं सुधी प्रतिपादन थयेली आदिनी चार बोध अवस्था पर्यंतना परिणमनने के तेनी थती वर्द्धमानताने ग्रन्थी भेदना अभावे अवेद पद रुपे ओळखवामां आवे छे। तथारुप बोधना अनुक्रममां स्वरुप जाग्रती प्रेरक बोधनुं विशेष एवा तेना गुढ रहस्यार्थ भाव पुर्वक आत्मार्थी जीव सहज समजी शके तेवा स्वरुपे तेनुं निरुपण करवामां आव्युं छे, ते कोई आत्मार्थी जीव विशेष एवा आत्मार्थ लक्षपुर्वक दृष्टीने अंतर्मुख प्रेरी विचारशे, तो तेने स्वरुप प्रत्येनुं गुण विशेष परिणमन के बोधनुं अंतर्मुख सिंचन अवश्य थशे, अने तेथी आत्मार्थी जीवे तथा प्रकारना पुरुषार्थमां एटले तथारुप बोधनी तत्व मिमांसा करवाना सम्यक धर्ममां योजावुं एम अहिं सहज सुचन करवामां आवे छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं पांचमी अवस्थाना बोध विशेषनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

卐

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(पंचम बोध अवस्था अधिकार)

पंचम अवस्थाना विषे, बोध रत्ननी प्रभा समान ।
तेथी सुविवेक अंतरे, स्फुरे स्वनो विशेष जाण ॥
तेथी सुक्ष्म स्वरुप बोध, करीने बाह्य चित्त निरोध ।
विचारे विशेषे ते, सन्मुख थई समजावुं ए ॥१॥

अन्वयार्थ—पांचमी अवस्थाना विषे बोध रत्ननी प्रभा समान एटले जेम रत्ननो प्रकाश दीपकनी ज्योत करतां विशेष जोरदार होवाथी विशेष तेज रुपे एक सरखो स्थिर टकी शके छे, तेम आत्म बोधनुं अस्तित्व अहिं सुक्ष्म रुपे एटले सम्यकज्ञान दर्शनादि एवुं तेनुं प्रगट शुद्धता रुपे परिणमन थई ते अल्प स्थिरतारुप परिणामे एक सरखुं टकी शके तेवुं योग्यपणुं तेना विषे होय छे, कहेतां उपलब्धरुप थाय छे, अने तेथी अहिं तेना अंतर परिणामना विषे स्व तरफनो एवो आत्मार्थ सद्विवेक तेने विशेषे करी स्फुरे छे, एम तुं जाण, अने तेथी ते बाह्य चित्त वृत्तिनो निरोध करी सुक्ष्म एवा स्वरुप बोधने स्व सन्मुख थई विशेष प्रकारे विचारे छे, ते अहिं तने समजावुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ— जेम जेम उपरोक्त साधक स्वरुप बोधनी अंतरंग सन्मुखताने अवलंबतो जाय छे, तेम तेम तेना अंतर परिणामना विषे स्वनो कहेतां निज चैतन्यात्मक स्वभाव तरफनो परम एवो आत्मार्थ सद्विवेक विशेषे करी स्फुरतो जाय छे, अने तथा प्रकारनो सद्विवेक स्फुरायमान थवाथी ते विशेष प्रकारे स्वरुप बोधनी सुक्ष्म विचार श्रेणीमां पण निज ज्ञानोपयोगने पर तरफना लक्षनी विशेष औदासीनतापुर्वक के चित्त निरोधपुर्वक प्रेरतो जाय छे, अने ते साथे स्वरुप प्राप्तीनी अंतरंग तालावेलीनुं वर्द्धमानपणुं पण स्वनी विशेष दृढतापुर्वक करतो जाय छे ।

आ उपरथी आत्मार्थी जीवने उपरोक्त साधकनी स्वरुप जिज्ञासा बळनो अने तेना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनो सहज ख्याल थई शकवा योग्य छे, अने ते उपरथी स्वातम लक्षने मुख्य करी एम दृढ करवा योग्य छे के स्वरुपनी वास्तविक जिज्ञासा ते ज स्वरुप सन्मुखताना वास्तविक पुरुषार्थनो, स्वरुप प्राप्तिनो, अने स्वरुप पुर्णतानो हेतु छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्रीकाळी द्रव्य गुण शुद्ध ने, ध्रुव पर्याय पण ते रुप ।
सर्व अवस्थाना विषे, हुं ते निर्पेक्ष वस्तु स्वरुप ॥
ते लक्षे सापेक्ष पर्यायनी जे, समय पुरती अशुद्धता ते ।
वमुं स्वमां एकत्व थई, विचारे एम अंतर महीं ॥२॥

अन्वयार्थ—सर्व शुद्धाशुद्ध अवस्थाना विषे त्रीकाळ एकरुप, एवुं जे चैतन्यात्मक द्रव्य अने तेना गुणो ते जेम शुद्ध अने पुर्ण रुपे टकेला छे, तेम तेनी ध्रुव पर्याय पण ते अनुसार त्रीकाळ ते रुपे ज रहेली छे, ते निर्पेक्ष कहेतां परनी अपेक्षा रहीत मुळ एवा वस्तु स्वरुपे हुं सदा अवस्थित छुं, ते लक्षे सापेक्ष पर्यायनी एवी जे एक समय पुरती अशुद्धता ते हुं स्वमां एकत्व रुपे स्थिर थई वमुं, कहेतां तेनो परिहार करुं, एम ते अंतरना विषे विचारे छे ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—चैतन्यात्मक वस्तु सामान्य विशेषात्मक होवाथी ते उभय धर्मनुं अस्तित्व तेमां स्वभावीक ज रहेलुं छे । सामान्यमां त्रीकाळी द्रव्य गुण अने ते अनुसार निर्पेक्ष एवी तेनी ध्रुव पर्यायनो समावेश थाय छे, अने विशेषमां तथारुप गुणोनी उत्पाद व्ययरुप एवी तेनी अपेक्षीत पर्यायनो समावेश थाय छे । अहिं प्रथम सामान्य दृष्टीए वस्तु विचारीए तो ते दृष्टीए द्रव्य, गुण अने निर्पेक्ष एवी तेनी ध्रुव पर्याय ते त्रीकाळ एकरुप शुद्ध अने पुर्ण छे, अने तेम होवाथी तेमां परनी अपेक्षानुं एटले निमित, पर्याय, के भेदरुप व्यवहारनुं सर्वथा अभावपणुं वर्ते छे, अने तेथी तेनुं ध्रुवात्मकपणुं पण अखंडरुप छे । हवे अहिं विशेषरुप एवी अपेक्षीत पर्यायनी दृष्टीए वस्तु विचारीए तो ते दृष्टीए द्रव्य गुण त्रीकाळ एकरुप शुद्ध अने पुर्णरुप अने उत्पाद व्ययरुप एवी तेनी अपेक्षीत पर्याय (सर्व संसारी जीवोनी) अशुद्ध अने अपुर्णरुप छे, अने तेम होवाथी तेमां परनी अपेक्षानुं एटले निमित, पर्याय, के भेदरुप व्यवहारनुं सद्भावपणुं वर्ते छे । हवे अहिं तथारुप लक्षे एटले भेदत्व दृष्टीए तेनुं कहेतां द्रव्य गुण पर्यायनुं विशेष प्रकारे निरुपण करवामां आवे छे ।

द्रव्य

वस्तुनी सर्व क्रमरुप अवस्थामां वस्तु वस्तुपणे एवा पोताना मुळ द्रव्य स्वभावे जे त्रीकाळ ध्रुवपणे टकीने रहे तेने द्रव्य कहेवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुण

द्रव्यना सर्व भागमां अने तेनी सर्व क्रमरुप अवस्थामां जे त्रीकाळ शक्ति रुपे टकीने रहे एवा ज्ञानादि विशेषणोने गुण कहेवामां आवे छे।

पर्याय

एक समय मात्र काळरुप प्रमाणथी उत्पाद व्ययरुप थती एवी चैतन्यात्मक स्वभावनी क्रमरुप अवस्था विशेषने पर्याय कहेवामां आवे छे।

आ प्रमाणे द्रव्य गुण पर्यायनुं भेदत्व दृष्टीए स्वरुप छे, ते उपरथी समजाशे के द्रव्य एटले अन्वयरुप मुळ वस्तु तेनुं अवस्था दृष्टीए अनेक अवस्था रुपे परिवर्तन थवा छतां पण मुळ दृष्टीए तेनुं कांई पण परिवर्तन न थवुं. जेम के जीवनुं जीवपणे अने जडनुं जडपणे एवा पोताना मुळ स्वभावे त्रीकाळ अबाधितपणे टकीने रहेवुं, तेनुं नाम द्रव्य, गुण एटले द्रव्यना सर्व भागमां, अने तेनी सर्व क्रमरुप अवस्थामां तेनुं त्रीकाळ शक्ति रुपे टकीने रहेवुं जेम के आत्माना ज्ञानादि गुणोनुं गुणी एवा जीव द्रव्य साथे अने पुद्गलना वर्णादि गुणोनुं गुणी एवा पुद्गल द्रव्य साथे अभेदपणुं होवाथी तेनुं पोत पोताना द्रव्यना सर्व भागमां अने तेनी सर्व क्रमरुप अवस्थामां अभेद शक्ति रुपे त्रीकाळ टकीने रहेवुं तेनुं नाम गुण, अने पर्याय एटले द्रव्यनी वर्तमान अवस्था तेमां सामान्यरुप एवुं जे द्रव्य ते अंशी कहेतां पुर्ण वस्तु अने विशेषरुप जे पर्याय ते तेनो एक अंश, के जेनी एक समय मात्र काळरुप प्रमाणथी उत्पाद व्ययरुप क्रमवर्ती अवस्था वर्ती रही छे, जेम के जीव द्रव्यना सामान्यरुप स्वभावमांथी चैतन्यात्मक पर्यायनी क्रमरुप एवी विशेष अवस्था, अने पुद्गल द्रव्यना सामान्यरुप स्वभावमांथी पुद्गल पर्यायनी क्रमरुप एवी विशेष अवस्था एम उभयनुं पोत पोताना द्रव्य स्वभावमांथी प्रति समय उत्पाद व्ययरुप क्रमवर्ती अवस्थानुं परिवर्तनशीलपणुं थवुं तेनुं नाम पर्याय।

आ प्रमाणे सामान्य विशेषात्मक एवी उभयात्मक दृष्टीए वस्तु विचारतां आत्मार्थी जीवने सहज लक्षमां आवशे के त्रीकाळी द्रव्य गुण अने ते अनुसार निर्पेक्ष एवी जे तेनी ध्रुव पर्याय के जेने शुद्ध पारिणामीक भावे कारण शुद्ध पर्याय ए नामथी संबोधवामां आवे छे ते सर्व कहेतां द्रव्य, गुण, पर्याय त्रीकाळ एकरुप शुद्ध अने पुर्णरुप होवाथी तेने जे जीव अवलंबीत थाय छे, तेने अनादि काळथी मिथ्यात्व अज्ञानादि भावे वर्ती रहेली एवी जे द्रव्यनी अपेक्षीत पर्यायरुप एक समय पुरती अशुद्धता, ते सहज निवृतरुप थई ते जग्याए सम्यग्दर्शन रुपी निर्मल पर्यायनी कहेतां तथारुप एवी ते कार्य शुद्ध पर्यायनी उपलब्धी थाय छे, अने क्रमे सम्यकत्व पुर्वकनी सर्व निर्मल दशानी उपलब्धीनो मुळ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हेतु पण ते ज अर्थात त्रीकाळी वस्तु स्वभाव ज बने छे। आवा प्रकारना परमार्थ बोधने उपरोक्त साधक भेदाभेद दृष्टीए विचारी पोते पोताना मुळ स्वरुपनो वास्तविक निर्णय करे छे अने तथारुप लक्षे स्वमां एकत्व परिणामी थवाना मुख्य विचारने अनुसरवा उद्यमवंत थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते लक्षे स्व पुरुषार्थने, करी दृढ प्रेरे सन्मुख।
अनन्य चिंतवन अंतरे, पण स्वभावनुं त्यां मुख्य ॥
ते साथे स्व परनुं विज्ञान, विशेषे होय अंतर जाण।
तेथी क्रमे सौ भेदनो आंय, लक्ष निवृते अंतर मांय ॥ ३ ॥

अन्वयार्थ—तथारुप लक्षे अहिं ते साधक जीव पोताना पुरुषार्थने दृढ करी स्व सन्मुख प्रेरीत करे छे, अने त्यां अनन्य चिंतवन पण पोताने पोताना स्वभावनुं ज मुख्य रुप होय छे, अने ते साथे तेना अंतरना विषे स्व परनुं विज्ञान पण विशेष प्रकारे वर्ततुं होय छे, एम तुं जाण, अने तेथी अहिं अंतरंगना विषे पर्याय जन्य भेद अवस्था प्रत्येनो सर्व लक्ष क्रमे करीने निवृते छे, एटले प्रति समय मंद परिणामरुप थतो जाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आ जीवनुं अनादि काळ थी स्वभाव विमुख परिणमन होवाथी तेनी दृष्टी एकांत पर्यायाश्रीत भावे वर्ती रही छे, तथारुप दृष्टी भेद परिणामरुप होवाथी त्यां अभेदरुप एवा आत्म धर्मनुं अस्तित्व कोई पण प्रकारे होतुं नथी, के तथारुप लक्षे तेनुं प्रगटपणुं थतुं नथी। मतलब के तथारुप विमुख दृष्टीनी हयाति पर्यंत मोहनुं साम्राज्य शुद्धात्म धर्मना अभावपुर्वक कायम एक सरखुं टकीने ज रहे छे। आवा परमार्थ बोधनुं अंतर्मुख सिंचन विशेष विज्ञानपुर्वक एटले सामान्य विशेषात्मक एवा वस्तु बोधना वास्तविक लक्षपुर्वक उपरोक्त साधकने थतां, अने ते द्वारा आत्म धर्मनी उपलब्धीना मुळ हेतुभुत एवा पोताना मुळ वस्तु स्वभावनो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञान विशेष उपयोगना बळे आवतां, ते तथारुप लक्षे निज ज्ञानोपयोगने अभेदरुप एवा पोताना मुळ वस्तु स्वभाव मां प्रेरीत करवाना पुरुषार्थमां भेद विज्ञानपुर्वक योजाय छे, अने तथारुप लक्षनी अंतर्मुख श्रेणीना बळे त्यां पर्याय जन्य भेद अवस्थानो लक्ष क्रमे करीने स्वभावीक ज निवृतरुप एटले प्रति समय मंद परिणामरुप थतो जाय छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ उपरथी आत्मार्थी जीवने उपरोक्त साधकनुं स्व सन्मुख थयेलुं उग्र एवुं विर्यात्मक रुचीनुं वलण तेनो सहज ख्याल आवी शकवा योग्य छे, अने ते अनुसार निज वलणने स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसंधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

अती उत्कृष्ट भाव विर्यथी, करे ग्रन्थी भेद ते आंय।
त्यां स्पर्शी शुद्ध स्वभावने, पामे स्थिरता स्वरुप मांय॥
गुणस्थानक चोथुं ते जाण, अव्रृति छतां वर्ते स्व भान।
अखंड अविनाशीनुं नित्य, स्व संवेदनरुप ते समकीत॥ ४॥

अन्वयार्थ—अहिं ते अती उत्कृष्ट एवा भाव विर्यरुप अंतरंग पुरुषार्थने अवलंबी ग्रंथीभेद करे छे, अने त्यां पोताना शुद्ध स्वभावने ते स्पर्शी तथारुप स्वरुपे एटले पोंते पोताना विषे स्थिरतापणुं पामे छे, तेने तुं चतुर्थ गुणस्थानक जाण, के जे स्थानके अव्रतादिरुप कषायोनुं उदयपणुं होवा छतां पण तेना अंतर परिणामना विषे अखंड अविनाशी एवा पोताना शुद्धात्म स्वरुपनुं भान तेने नित्य वर्ते छे, अने तेने ज स्व संवेदनरुप समकीत कहेतां शुद्ध सम्यग्दर्शननी प्राप्ती थई एम परमार्थ दृष्टीए कहेवा योग्य छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— वस्तु स्वभावना वास्तविक निर्णयपुर्वक वस्तु स्वभावनी अंतरंग सन्मुखता भेद विज्ञानपुर्वक थवी ए सम्यग्दर्शननी उपलब्धीनो सरल, सुगम अने वास्तविक उपाय छे। तथा प्रकारना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थना बळे तेनी (श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्यायनी) उपलब्धी थतां जीवने पोताना वस्तु स्वभावनुं वास्तविक भान मिथ्यात्व कर्मनी उदय निवृत्तिपुर्वक प्रगटे छे, जेने जिनागम दृष्टीए अविरती सम्यकदृष्टी एवा चतुर्थ गुणस्थानकना नामथी संबोधवामां आवे छे। तथारुप स्थानके अव्रतादिरुप कषायोनुं उदयपणुं होवा छतां पण तथारुप गुण अवस्था विशेषने संप्राप्त थयेल एवा ते सम्यकदृष्टी जीवना अंतर परिणामना विषे तथारुप निर्मल अवस्था उपलब्धरुप थतांनी साथे ज पर्याय जन्य भेद अवस्थारुप एवी पराश्रीत लक्षे वर्ती रहेली विमुख दृष्टी ते सर्वथा विराम पामी स्वाश्रीत लक्षे शुद्ध आत्म दृष्टी जागे छे, अर्थात हुं देह के देहादि पर जन्य निमिते उत्पन्न थता क्षणीक विकाररुप नहीं, पण अखंड अविनाशी एवो शुद्ध चैतन्य घन स्वभाव परिणामी आत्मा छुं, एवो एक असाधारण भाव वास्तविक एवा भेद विज्ञानपुर्वक प्रगटे छे, अने ते साथे नाम, रुप, मन अने इन्द्रिय जन्य भावोमांथी अहं ममत्वादि भाव विलय पामी मानसीक, वाचीक के कायीकादि सर्व शुभाशुभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बाह्यांतर उदय जन्य क्रियाओ मात्र ज्ञाता भावे भेद विज्ञानपुर्वक थवी शरु थाय छे, अने ते सर्वज्ञ पदनी पुर्णता पर्यंत अनुक्रमे स्वरुप स्थिरतानी वर्द्धमानतापुर्वक एक सरखी टकीने ज रहे छे।

आ उपरथी समजाशे के ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप स्वरुप साधनामां के तेनी अंतर स्थिरतामां स्वभाव सन्मुख थती एवी अंतर क्रियानुं एटले भेद विज्ञाननुं ज मुख्यपणुं छे, के जेनी अंतर्मुख साधनाना बळे पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे ते स्वरुप साधक जीव क्रमे करी स्वरुप पुर्णताने पामे छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

वग सम्यग्दर्शन हतुं, जे ज्ञान असम्यकरुप।
ते पण ते रुपे अहिं, थयुं सम्यकज्ञान स्वरुप ॥
स्वरुपाचरण पण ते साथ, वरतुनो जाण ए परमार्थ।
ते रुपे थईने स्वमां स्थित, ज्ञायक भावे वर्ते नित्य ॥५॥

अन्वयार्थ—आज पर्यंत सम्यग्दर्शन विना जे ज्ञाननुं परिणमन असम्यकरुप कहेतां मिथ्यात्व रुपे वर्ती रहेलुं हतुं, ते पण सम्यग्दर्शन रुपी निर्मल गुण अवस्था प्रगटरुप थतां ते रुपे एटले सम्यकज्ञान स्वरुपे स्थिर थयुं। वळी ते साथे स्वरुपाचरण चारित्र पण प्रगटरुप थवाथी एवो ते सम्यकदृष्टी जीव ते रुपे कहेतां ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप एवा पोताना ज्ञायकरुप स्वभावे नित्य स्थित थई वर्ते छे, एवा वस्तुना परमार्थने हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—सम्यग्दर्शनना परम महात्म्यने विचारीए तो जे समय श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्यायनुं उपलब्धपणुं थई जीव चतुर्थ गुणस्थानकने स्पर्शे छे, ते ज समय ज्ञान सम्यक पदथी अलंकृत थई एटले ज्ञान विशेष उपयोग (दर्शनोपयोगपुर्वक) सामान्यरुप एवा द्रव्य स्वभावनी अभेदताने पामी, सम्यक ज्ञान रुपे अने ते साथे स्वरुपाचरण चारित्र स्वभाव स्थिरता रुपे सहज उपलब्धरुप थई जाय छे, अने तेम थवानुं मुख्य कारण पण स्वभाव परिणामरुप एवा ए त्रणे गुणोनी निर्मल अवस्थानुं परस्पर अविनाभावपणुं होवानुं ज छे, अने तेथी प्रथमना एक गुणनी निर्मल अवस्थानुं उपलब्धपणुं थतां, शेष बंने गुणोनी अंशत्वरुप एवी निर्मल अवस्थानुं उपलब्धपणुं अंतरंगना विषे त्यां स्वभावीक ज थई जाय छे, जो के आ स्थानके अप्रत्याख्यानावरणादि कषायोदय जन्य अविरतीनुं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुख्यपणुं होवाथी देश के सर्व विरतीरुप एवुं खास क्रियारुप चारित्र होतुं नथी, पण अनंतानुबंधी कशायोदय जन्य अविरतीना अभावपुर्वक प्रगटेलुं एवुं उपरोक्त स्वरुपाचरण चारित्र के जेनुं सम्यग्दर्शन साथे अविनाभावपणुं होवाथी ते तेनी साथे नियमा त्रीकाळ अबाधितपणे रहे छे, अने ए ज सम्यग्दर्शननुं आश्चर्यकारक महात्म्य मिथ्यादृष्टी जीवना देश के सर्वरुप एवा नाम मात्र बाह्य क्रियारुप चारित्र करतां पण विशेष प्रशंशनीय छे ।

वळी तेनुं विशेष आश्चर्यकारक महात्म्य ए छे के सम्यग्दर्शन साथे क्षायोपशमीक भावे थती एवी जे सकाम निर्जरा तेनुं अविनाभावी संबंधपणुं होवाथी ते तेनो उदय थतां अवश्य होय छे, अने तेथी समये समये ज्ञानावरणादि कर्मोनुं निर्जरवापणुं सम्यग्दर्शन रुपी शक्ति विशेषना बळे त्यां स्वभावीक ज थतुं होय छे, तेमां अन्य एके आत्म गुणनी निर्मल अवस्था होवानी अपेक्षा तेनी साथे निर्जरानुं असम्बन्धपणुं होवाथी रहेतो नथी । आम होवाथी सम्यक्दृष्टी जीवने तथारुप शक्ति विशेषना बळे प्रगटेली एवी जे उपयोगात्मक अनुभव करवा योग्य शुद्धोपलब्धीरुप ज्ञान चेतना ते स्व पर प्रकाशक लब्धीरुप शक्ति विशेषनो स्व पर ज्ञेय जाणवानो स्वभाव होवाथी तेनुं सहज स्व पर ज्ञेयने जाणवा रुपे परिणमवुं थाय छे, अर्थात जाणवा योग्य पदार्थने ते जाणे छे, अने तेथी उपरोक्त लब्धीरुप ज्ञान चेतना-शक्ति विशेषना बळे ते उपयोगात्मक अनुभवरुप एवा स्व ज्ञेयने जाणतो होय के घट पटादि पर ज्ञेयने जाणतो होय, ए बंने जग्याए मात्र जाणवारुप स्वभावनी अपेक्षाए त्यां निर्जरा बंध एकेनी अपेक्षा रहेती नथी, अर्थात स्व ज्ञेयने जाणवाथी संवर निर्जरा थती नथी, अने पर ज्ञेयने जाणवाथी आश्रव बंध थतो नथी, अने तेथी संवर निर्जरा थवा माटे ज्ञान उपयोगात्मक होवुं ज जोईए, एवा खास नियमनी आवश्यक्ता पण रहेती नथी । मतलब के ते वखते ज्ञान उपयोगात्मक हो वा न हो बंने सरखुं ज छे, कारण के निर्जरानुं तेनी साथे असंबंधपणुं होवाथी ते गुण दोष उत्पन्न करवाने समर्थ नथी । आम होवाथी निर्जरानो सीधो संबंध मात्र एक सम्यग्दर्शन साथे सिद्ध थाय छे, अने ए ज तेनी शक्ति विशेषनुं आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंशवा योग्य छे ।

वळी तेनुं विशेष आश्चर्यकारक महात्म्य ए छे के चैतन्य स्वरुपना श्रद्धा गुण सिवायना अन्य समस्त गुणो ते जेम पोतानी निर्मल अवस्थाना विकास रुपे क्रमथी परिणमे छे, तेम श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्यायनी उपलब्धीमां खास क्रमनी अपेक्षा रहेती नथी । मतलब के तथारुप गुण पोतानी निर्मल अवस्थाना विकास रुपे मात्र एक ज समयमां परिणाम पामी शुद्ध सम्यग्दर्शन रुपे स्थिर थाय छे, अने ए पण तेनी शक्ति विशेषनुं आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंशवा योग्य छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वळी तेनुं विशेष आश्चर्यकारक महात्म्य विचारीए तो सम्यग्दर्शन पोते निर्मल पर्यायरुप होवा छतां के ते रुपे उपजवा छतां पण तेनो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवाथी ते पोतानी तथारुप निर्मल पर्यायना पण अस्वीकारपुर्वक मात्र सामान्यरुप एवा वस्तु स्वभावने ज ग्रहण करी नित्य ते स्वरुपे वर्ते छे, अने ए पण तेनुं आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंशवा योग्य छे।

वळी ते संबंधी विचारीए तो सम्यग्दर्शननुं उपलब्धपणुं थतां तेनुं अपरिमीत संसार पर्यटन काळ प्रमाण पण घटीने परिमीत एटले वधारेमां वधारे अर्ध पुद्गल परावर्तन काळ प्रमाण जेटलुं ज अवशेष रह्यो जाय छे, अने ए पण तेनी शक्ति विशेषनुं आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंशवा योग्य छे।

आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननुं अवर्णनीय महात्म्य छे, के जेनुं उपलब्धपणुं थतां, ज्ञान चारित्रनुं मिथ्यापणुं निवृत्त थई सर्व सम्यकरुप बनी जाय छे, अने ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप एवा मोक्षमार्गनी शरुआत पण त्यांथी ज थाय छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे।

प्रश्न—सम्यग्दर्शन पोते निर्मल पर्यायरुप होवा छतां के ते रुपे उपजवा छतां तेनो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवाथी ते जेम पोतानी तथारुप निर्मल पर्यायनो अस्वीकार करे छे, तेम तेना अविनाभावी संबंधरुप एवा सम्यकज्ञाननो विषय शुं छे ? अने ते पोतानी निर्मल पर्यायनो स्वीकार करे छे के केम ? अने करे छे तो ते वडे ते स्व पर पदार्थने केवा प्रकारे जाणे छे ?

उत्तर—ज्ञाननो मुळ स्वभाव सामान्य विशेषात्मक होवाथी तेनो विषय स्व पर प्रकाशक एटले स्व पर पदार्थने जाणवानो छे। तथा प्रकारना बोधनुं अंतर्मुख सिंचन थई ज्यारे ते ज्ञान सम्यग्दर्शननी उपलब्धीना समये सम्यक पदथी अलंकृत थई सम्यकज्ञान रुपे परिणमे छे, एटले तथारुप एवो ते ज्ञान गुण गुणी एवा पोताना आत्मा साथे अभेदत्वने पामे छे, त्यारे निर्मल अवस्था रुपे परिणमेली एवी पोतानी पर्यायनो अभेदत्व रुपे स्वीकार पण ते साथे ज थई जाय छे, अने तेम थतां सम्यक पदथी अलंकृत थयेलुं एवुं ते ज्ञान सदा स्वाश्रीतपणे टकीने एटले सामान्यरुप एवा पोताना मुळ वस्तु स्वभावने अवलंबीने स्व पर एवा सर्व जाणवा योग्य पदार्थने ते सम्यक प्रकारे जाणे छे।

प्रश्न—तथा प्रकारना सम्यक जाणपणामां मुख्यपणे आत्मार्थ हेतुभुत एवी कई कई बाबतोनो समावेश थाय छे ?

उत्तर—एकंदर दश बाबतोनो समावेश थाय छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

१—वास्तविक एवा वस्तु स्वभावनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं तेना वास्तविक निर्णय पुर्वक होवुं ते।

२—पोताना सर्वज्ञ स्वभावनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं सर्वज्ञ सत्ताना वास्तविक निर्णय पुर्वक होवुं ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३—पोत पोताना स्वतंत्र स्वभावने अवलंबी वस्तु मात्रनी थती एवी क्रम बद्ध अवस्थानुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं तेना वास्तविक निर्णय पुर्वक होवुं ते ।

४—जैनधर्मना महत्वनुं के तेना सुक्ष्म रहस्यार्थ भावनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं अन्य सर्व दर्शननी समालोचना पुर्वक होवुं ते ।

५—अनेकान्त वादनुं के सम्यक एकांतरुप स्वभावनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं स्वभाव सन्मुखतापुर्वक होवुं ते ।

६—श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्याय रुपे उपलब्ध थयेल एवी सम्यग्दर्शन रुपी शुद्ध पर्यायनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं शुद्धोपलब्धीपुर्वक होवुं ते ।

७—सम्यग्दर्शननो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवानुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं स्व संवेदनपुर्वक होवुं ते ।

८—शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी वर्तमान विकार जन्य अवस्थानुं के अवस्था जन्य उणपनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं तेना भेद विज्ञानपुर्वक होवुं ते ।

९—निश्चय व्यवहारनुं के निमित उपादाननी अनुकूल संधीना सिद्धांतिक नियमनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं तेना वास्तविक बोधपुर्वक होवुं ते ।

१०—भिन्नाभिन्न साध्य साधन भावनुं के हेयोपादेयना परमार्थनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं जीवादि तत्वना वास्तविक बोधपुर्वक होवुं ते ।

आ प्रमाणे उपरोक्त दश बाबतोनुं सम्यक प्रकारे कहेतां यथार्थ जाणपणुं एवा ते सम्यक्ज्ञानी पुरुषना सम्यक ज्ञानमां होय छे, अने तथारुप एवुं ते सम्यक ज्ञान नियमा सम्यग्दर्शनपुर्वक होवाथी ते उभयनुं अस्तित्व परस्पर तफावत होता छतां पण साथे ज रहे छे, अने ते साथे स्वरुपाचरण चारित्रनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते पण तेनी साथे नियमा होय छे, अने तेम होवाथी त्यां तथा रुप सम्यक त्रयनी ज्ञायक रुप स्वभाव स्थिरता पण एवा ते सम्यकदृष्टी जीवने नित्य अवश्य वर्तती होय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

दश कारण सम्यकत्व प्राप्तीनां, ते पैकी रह्युं एक शेष ।
ते सुक्ष्म ग्रंथी भेद रुप, कह्युं दसमुं ते जाण विशेष ॥
ते सौ कारणनो उपचार, स्व कार्य सिद्ध थये तुं धार ।
ते वण उपचार अंशे नोयं, एवो आशय जिननो होय ॥ ६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वयार्थ—सम्यग्दर्शन प्राप्तीना दश कारण पैकी जे एक शेष रह्युं हतुं ते सुक्ष्म ग्रन्थी भेद एटले भेद विज्ञानना बळे अखंड अभेद एवा शुद्ध द्रव्य स्वभावनुं स्व संवेदनरुप एवुं एकत्वरुप परिणमन थतां, त्यां सुक्ष्म ग्रंथी भेद कहेतां रागादि भावरुप अंतर संधीनुं भेदन थवुं ते, एवुं दसमुं विशेष रुप कारण में तने चतुर्थ सुत्रमां कह्युं ते तुं अंतरना विषे जाण। ते सौ कारणनो कारणत्व रुपे उपचार सम्यग्दर्शनरुप एवा स्व कार्यनी सिद्धी थये ज थाय छे, ते विना तेना पर तथा प्रकारनो उपचार अंशे पण घटी शकतो नथी, एवो श्री जिननो आशय कहेतां अभिप्राय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे धार।

विशेषार्थ—पहेली बोध अवस्थाथी मांडी अहिं सुधीनी पांचमी बोध अवस्था पर्यंत सम्यग्दर्शननी प्राप्तीमां बाह्यांतर निमित उपादानरुप एवां एकंदर दश कारणोनी अपेक्षा रहे छे, पण तेना विषे कारणत्वनो उपचार त्यारे ज थई शके छे, के ज्यारे जीव निश्चयरुप एवी स्व कार्यनी विजयताने पामे, अर्थात बाह्यांतर एवा ते सर्व कारणत्व प्रत्येना पर लक्षने एटले निमित, पर्याय, के भेद व्यवहार जन्य एवी सर्व विकल्पात्मक अवस्था प्रत्ये ढळेला निज ज्ञान विशेष उपयोगने सामान्य रुप एवा शुद्ध द्रव्य स्वभावना लक्षे अंतर्मुख करी त्यां अभेद रुपे तथारुप स्वभाव स्थिरताने पामे। मतलब के निश्चयरुप स्व कार्यनी सिद्धी थये ज तेमां अन्य सर्व निमितरुप बाह्यांतर कारणत्व नो उपचार थई शकवा योग्य छे, अने ए ज निमित उपादाननी संधीनो सिद्धांतिक नियम छे।

प्रश्न—जो एम ज होय तो व्यवहार सम्यग्दर्शन निश्चय सम्यग्दर्शननुं कारण, व्यवहार रत्नत्रय निश्चय रत्नत्रयनुं कारण, आवा प्रकारनो शास्त्रोपदेश तो कार्य सिद्धीना सर्व आधारमां कारणनुं ज मुख्यपणुं दर्शावे छे, तेनुं केम?

उत्तर—शास्त्रकारनो ते उपदेश कारणमां कार्यना उपचार हेतुनी सिद्धी अर्थे नथी, पण कार्य सिद्ध थये (थया बाद) तेमां कारणत्वनी उपचाररुप सिद्धी नियमा थती होवानुं दर्शाववा अर्थे छे। आ लक्ष वाळ जीवोनी दृष्टीमां नहिं आववाथी एटले निमित-उपादाननी संधीना वास्तविक बोध परमार्थनुं अंतर्मुख सिंचन नहिं थवाथी आजे सौ कोई जीवो निज उपादान शक्तिनी मुढता अने विमुखतापूर्वक पोतानी दृष्टी एकांत निमिताश्रीत भावोमां स्थिर करी एटले व्यवहार सम्यग्दर्शनना हेतुभुत एवा सुदेवादि त्रयात्मक तत्वोनी प्रतितीमां के व्यवहार रत्नत्रयनी बाह्याचरण सेवनामां अटकी पोतानुं कृतार्थपणुं माने छे। मतलब के उपादान शक्तिना सन्मुखवर्ती लक्षनी बेभानतापुर्वक केवळ असत्यार्थरुप अने स्व कार्य सिद्धीना अहेतुरुप एवो जे निमिताश्रीत (असद्भुत) व्यवहार तेने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्यार्थरुप अने स्व कार्य सिद्धीना हेतुरुप गणी तथारुप विपर्यय मान्यताने विशेष प्रकारे पोषे छे, अने तेथी ते व्यवहार स्वकार्य सिद्धीना हेतुभुत नहीं थई शकवा योग्य होवाथी ते निश्चय सम्यग्दर्शननुं के निश्चय रत्नत्रयनुं कारण एवो तेना पर निमितपणानो उपचार कोई पण प्रकारे घटी शकतो नथी, अर्थात तेने निमित ज कहेवा योग्य नथी ।

आ उपरथी समजाशे के ज्यां सुधी जीव व्यवहार सम्यग्दर्शनमां के व्यवहार रत्नत्रयमां अटकी निज उपादान शक्तिनी विमुखताने पोषी रह्यो छे, त्यां सुधी ते व्यवहारने निश्चय सम्यग्दर्शननुं के निश्चय रत्नत्रयनुं निमित कही शकवा योग्य नथी, पण ज्यारे ते तथारुप व्यवहार प्रत्ये ढळेला एवा पोताना विर्य रुचीना वलणने स्वभाव सन्मुख प्रेरी त्यां स्वकार्य सिद्धीनी विजयताने एटले अभेद रुपे स्वभाव स्थिरताने पामशे, त्यारे ते व्यवहारने निमितरुपे स्थान त्यां अवश्य अपाशे, अने निमित उपादाननो संधीनुं योग्य मिलन पण त्यां ज थयुं गणाशे ।

आ उपरथी एम समजवा योग्य छे के जे जीव सुक्ष्म ग्रंथी भेदना मुळ हेतुरुप एवा स्वभाव सन्मुख पुरुषार्थने भेद विज्ञानपुर्वक अवलंबे छे, ते ज सम्यग्दर्शन रुपी परम लाभने पामे छे, एम उपरोक्त बोध विशेषथी समजवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं सम संवेगादि एवां सम्यग्दर्शननां चार प्रकारनां लक्षणोनुं निरुपण करवामां आवे छे ।

सम संवेग आस्था अने, अनुकंपा ए चार प्रकार ।
लक्षण सम्यकत्वनां कह्यां, होय तेने ते भावानुसार ॥
ते भावे जोडाण तेनुं नित्य, स्वरुप लक्षे होय खचीत ।
सराग सम्यकत्व तेनुं नाम, जिनाशय श्रुतमां आम ॥७॥

अन्वयार्थ—सम संवेग आस्था अने अनुकंपा ए सम्यकदृष्टी जीवनां चार प्रकारना लक्षणरुप परिणाम कह्या, ते अहिं तेने तथा प्रकारना भावानुसार होय छे, अने ते अनुसार तेनुं तथारुप भावोमां जोडाण पण नित्य स्वरुप लक्षे खचीत करीने वर्ततुं होय छे, अने तेथी तथारुप अवस्था विशेष परिणामनी अपेक्षाए तेने सराग सम्यग्दर्शन ए नामथी जिनाशय श्रुतना विषे संबोधवामां आवेल छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—सम्यग्दर्शननां सम, संवेग, आस्था अने अनुकम्पा एवां एकंदर चार लक्षणो एवा ते सम्यकदृष्टी जीवने अहिं उत्पन्नरुप थाय छे ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम

वस्तु मात्रनी पोत पोताना स्वतंत्र स्वभावने अवलंबीने थती एवी जे क्रमबद्ध अवस्था तेनी पुनः पुनः तत्व मिमांसा करी देहादि समस्त पर द्रव्य अने पर निमित जन्य भावोमां पोतानी कर्तृत्व बुद्धीरुप एवा मिथ्या अहंतुं अभावपणुं ज्ञायकरुप शुद्ध स्वभावना लक्षे करवुं ते ।

संवेग

सर्व ज्ञेय जन्य पदार्थो प्रत्ये ममत्वरुप मिथ्यात्वनी सम्यक निवृतिपुर्वक तेनी भोग जन्य तृष्णानुं सर्व प्रकारे विरामपणुं थवुं ते ।

आस्था

सुदेवादि त्रयात्मक तत्वोनी के जिनाश्रय सत श्रुतनी वास्तविक प्रतिती शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावनी अंतरंग सन्मुखता पुर्वक होवी ते ।

अनुकंपा

स्वातम प्रत्ये अत्यंत अत्यंत करुणात्मक बुद्धी स्थिर करी अवस्था जन्य मलीन पर्यायना उत्पादकरुप एवा पर्यायाश्रीत लक्षनुं अभावपणुं शुद्ध द्रव्यात्मक लक्षे करवुं ते ।

आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननां चार प्रकारना लक्षणरुप परिणाम एवा ते सम्यकदृष्टी जीवने उत्पन्नरुप थाय छे, तेने तथा प्रकारना राग विशेष परिणामनी अपेक्षाए उपचार नयथी सम्यग्दर्शननां लक्षण एम जिनागमना विषे संबोधवामां आवेल छे, अने तेने सराग सम्यग्दर्शन कहेवानो मुळ हेतु पण ते ज छे।

प्रश्न—सम्यग्दर्शन साथे उत्पन्नरुप थता एवा जे सम संवेगादि चार प्रकारना शुभोपयोगरुप राग विशेष परिणाम, ते जीवना चारित्र गुणनी विकारात्मक अवस्था छे, तेम छतां तेने सम्यग्दर्शननुं लक्षण एम तेना पर उपचार करवानो मुळ एवो जिनागमनो शुं हेतु छे ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन साथे उत्पन्नरुप थता एवा तेना संबंध विशेषरुप राग भावना जोडाणमां सम संवेगादि एवा ते चार भावोनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी तथा प्रकारना शुभोपयोगरुप परिणाम विशेषने सम्यग्दर्शननुं लक्षण एम उपचार नयथी दर्शाववानो मुळ एवो जिनागमनो हेतु छे, पण निश्चय नयथी शास्त्रकारनो तेम कहवानो हेतु नथी, कारण के निश्चय नयथी (शुद्ध नयथी) तो उपशमादि एवा त्रणे प्रकारना सम्यग्दर्शननुं लक्षण पोताने पोताना शुद्धात्म स्वरुपनी स्व संवेदनरुप एवी निःशंक प्रतिती थवी के होवी ते ज छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—तथारुप एवा ते त्रणे प्रकारना निश्चय सम्यग्दर्शननुं शुं स्वरुप छे ? अने तेमां तफावतपणुं दर्शाववानो एवो जे शास्त्रकारनो हेतु ते स्वरुप प्रतितीनी अपेक्षाए छे, के ज्ञान उघाड शक्तिनी अपेक्षाए छे ?

उत्तर—ते त्रणे प्रकारना सम्यग्दर्शननुं स्वरुप, अने तेमां तफावतपणुं दर्शाववानो हेतु निचे प्रमाणे छे ।

उपशम

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे दर्शन मोहीनीय कर्म अने अनंतानुबंधी चतुष्टय एम एकंदर पांच प्रकृतिओनुं सर्वथा उपशमपणुं थवुं ते ।

क्षयोपशम

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे मिथ्यात्व मोहीनीय अने मिश्र मोहीनीय प्रकृतिना परमाणुओ आत्म प्रदेशोथी पृथकरुप थई जवाथी जीव अवस्थाना विषे तेना फल विपाकनुं अभावपणुं थवुं, अने अनंतानुबंधीनी विसंयोजनापुर्वक सम्यक मोहीनीय कर्म प्रकृतिनुं उदय रुपे रहेवुं ते ।

क्षायिक

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे दर्शन मोहीनीयनी त्रण अने अनंतानुबंधीनी चार एम एकंदर सात प्रकृतिओना परमाणुओ आत्म प्रदेशोथी पृथकरुप थई सर्वथा क्षयने पामवुं ते ।

आ प्रमाणे त्रण प्रकारना निश्चय सम्यग्दर्शननुं स्वरुप छे, ते त्रण प्रकारना सम्यग्दर्शनमां तफावतपणानो हेतु स्वरुप प्रतिती के ज्ञान उघाड शक्तिनुं न्युनाधिकपणुं होवानी अपेक्षाए नथी, कारण के त्रणे प्रकारना सम्यकद्दष्टी जीवोनी स्वरुप प्रतिती तो सिद्ध सम शुद्ध एवी एक सरखी ज होय छे, अने ज्ञान उघाड शक्तिनुं न्युनाधिकपणुं होवा छतां तेनुं सम्यग्दर्शन साथे असंबंधपणुं होवाथी तेनी अपेक्षा पण रहेती नथी, पण उपादान अपेक्षाए जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे स्व पर्यायनी वर्तमान योग्यता तेवा प्रकारनी होवाथी अने निमित्त अपेक्षाए स्व पर्यायने अनुकूल एवी पुद्गल कर्मनी तेवी अवस्था तेना पोताना कारणे थवाथी ते अपेक्षाए त्रण प्रकारना एवा ते सम्यग्दर्शनमां तफावतपणुं होवानी अपेक्षा रहे छे, अने शास्त्रकारनो तेम दर्शाववानो हेतु पण ते ज छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपरोक्त बोधनी सर्वांग समाधानी पुर्वकना अंतर्मुख सिंचनथी स्पष्ट समजाशे के निश्चय सम्यग्दर्शननुं निश्चयरुप लक्षण पोताने पोताना शुद्धात्म स्वरुपनी स्वसंवेदनरुप एवी निःशंक प्रतिती थवी के होवी ते छे, अने तेनुं उपचाररुप लक्षण सम संवेगादि भावोमां जोडाणरुप एवी रागनी अनित्य प्रवृति थवी के होवी ते छे। आम होवाथी सम्यकदृष्टी जीवनी ज्यां ज्यां तथा प्रकारना रागरुप जोडाणथी रहीत एवी निर्वीकल्प दशा वर्तती होय छे, त्यां त्यां शुद्धोपयोगरुप एवो स्वभाव एकत्वरुप अंतर स्थिरतानुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अपेक्षाए तेने एटले एवा ते निश्चय सम्यग्-दर्शनने वितराग सम्यग्दर्शन ए नामथी संबोधवा योग्य छे, अने ज्यां ज्यां निमितना लक्षे तथा प्रकारना रागनी जोडाणरुप प्रवृति वर्तती होय छे, त्यां त्यां सम संवेगादि एवा चार प्रकारना शुभो-पयोगरुप भावोनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अपेक्षाए तेने एटले एवा ते निश्चय सम्यग्दर्शनने सराग सम्यग्दर्शन ए नामथी संबोधवा योग्य छे, अने ए ज शास्त्रकारनो के उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

हवे अष्टात्मक अंग अहिं, कहुं सम्यकत्वना ते विचार।
निःशंकता निष्कांक्षीता, निर्वीचिकित्सा त्रीजुं तुं धार॥
अमुढदृष्टी ने उपगुहन, स्थितिकरण जाण छट्ठुं मन।
सातमुं वात्सल्य वर्ते नित्य, प्रभावना आठमुं जाण चित्त॥८॥

अन्वयार्थ—हवे अहिं तने सम्यग्दर्शननां अष्टात्मक अंग कहुं छुं ते तुं विचार। त्यां पहेलुं अंग-निःशंकता, बीजुं–निष्कांक्षीता, त्रीजुं–निर्वीचिकित्सा, चोथुं–अमुढदृष्टी, पांचमुं–उपगुहन, छट्ठुं–स्थिति-करण, सातमुं–वात्सल्य, अने आठमुं–प्रभावना, एम अष्टात्मक अंगरुप गुणअवस्था विशेषनुं अहिं अनुक्रमे प्रगटपणुं थाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—सम्यग्दर्शननी उपलब्धी थतां मुख्यत्वे करी तेना आठ अंग प्रगटे छे, ते अंगनुं एटले तथारुप गुण अवस्था विशेषनुं स्वरुप अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

निःशंकता

जिनाशय तत्वार्थ बोधना विषे रहेला शंशयात्मक भावोनुं अने अनेक प्रकारना भय विशेष परिणामनुं शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे अभावपणुं थई त्यां निःशंकतारुप एवी परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निष्कांक्षीता

समस्त पर द्रव्य जन्य भावोमां रागरुप वांच्छानुं शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे अभावपणुं थई त्यां निष्कांक्षीतारुप एवी परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते ।

निर्वीचिकित्सा

समस्त पर द्रव्य जन्य भावोमां द्वेषरुप ग्लानीनुं शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे अभावपणुं थई त्यां निर्वीचिकित्सारुप एवी परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते ।

अमुढद्दष्टी

जिनाशय तत्वार्थ बोधना के सुदेवादि त्रयात्मक तत्वोना निर्णयमां रहेला विपर्यात्मक भावोनुं शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे अभावपणुं थई त्यां अमुढद्दष्टीरुप एवी परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते।

उपगुहन

शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी जे विकार जन्य अशुद्धता ते वर्तमान उदयरुप होवा छतां के थवा छतां पण तेनाथी भिन्न लक्षणरुप एवा पोताना त्रीकाळी स्वभावने ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप शुद्ध वस्त्रथी ढांकवारुप एटले तथारुप दोषथी पोते पोताना स्वभावने अलीप्त राखवारुप एवी उपगुहनरुप परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते ।

स्थितिकरण

ज्ञानादि सम्यक त्रयनी ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरता थवाना हेतु लक्षने अवलंबी ते अर्थे सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमां पोताना विर्यात्मक रुचीना वलणने प्रेरीत करवुं, एवी ते स्थितिकरणरुप परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते ।

वात्सल्य

परिषह उपसर्गादि जेवा प्रतिकुल प्रसंगमां पण शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे त्यां स्वरुप लक्ष न चुकवारुप के थती शिथिलतानुं अभावपणुं करवारुप एवा वात्सल्यरुप परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते ।

प्रभावना

शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मनुं उत्कर्षपणुं करवाना हेतु लक्षने अवलंबी ते अर्थे अत्यन्त विर्योल्लास

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाव पुर्वक स्वभाव एकत्वरुप अंतर स्थिरताना पुरुषार्थमां योजावुं के तेवा आत्मार्थी जीवोने तथा प्रकारना बोध सन्मुख प्रेरीत थवुं एवी प्रभावनारुप परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते।

आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननां अष्टात्मक अंगनुं स्वरुप छे, अने ते सर्व सम्यकद्दष्टी जीवोने सुदृढ परिणामे स्वरुप पुर्णता पर्यंत सदा टकीने ज रहे छे, अने ए पण तेनी शक्ति विशेषनुं आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंशवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

अहिं सेण विषे समता दीसे, वळी नेणे न लेष विकार।
ते साथे वेण मधुर ने, होय अपुर्वता अपार॥
करुणा कोमलता पण चित्त, परमार्थ लक्षे होय स्थित।
प्रसन्नता मुद्रामां होय, सर्वत्र सम दृष्टीए जोय॥९॥

अन्वयार्थ—वळी अहिं तथारुप गुण अवस्था विशेषना प्रगटपणाथी विशेषे करी सेण कहेतां शारिरीक चेष्टाओना विषे पण समता भाव जोवामां आवे छे, एटले मनादि योगो विशेष प्रकारे स्थिरतारुप परिणामने भजता होय छे। वळी नेण कहेतां नेत्रोना विषे पण अंश मात्र विकार होतो नथी, ते साथे वेण कहेतां वचननुं मधुरपणुं अने अपुर्वपणुं पण अपार कहेतां बेहद होय छे। वळी करुणा कोमलतादि पण तेना चित्तना विषे परमार्थ लक्षे स्थित होय छे। वळी तेनी मुद्रा कहेतां मुखाकृतिना विषे पण प्रसन्नता छवाई रहेली होय छे, अने सर्वत्र ते सम् दृष्टीए जुए छे। एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—सम्यकद्दष्टी जीवने तथारुप गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवाथी त्यां सेण कहेतां शारिरीक चेष्टाओना विषे पण विशेषे करी समता भाव जोवामां आवे छे, तेनुं कारण तथारुप गुण अवस्थाना बळे अनेक प्रकारना पर निमित जन्य भावोमां विशेष प्रकारे औदासीनपणुं होवानुं ज छे, अने तेथी मनादि योगो त्यां स्थिर परिणामने भजता होय ए सहज अने स्वभावीक छे। वळी नेण कहेतां नेत्रोना विषे पण अंश मात्र विकार होतो नथी, ते पण तथारुप गुण विशेषना बळे प्रगटेलुं एवुं तेना अंतरना विषे विशेष प्रकारे निर्वीकारपणुं ज होवानुं छे। ते साथे वेण कहेतां वचननुं मधुरपणुं अने अपुर्वपणुं होवानुं मुख्य कारण पण तथारुप गुण विशेषना अविनाभावी संबंध रुपे प्रगटेली एवी मती श्रुतरुप निर्मल ज्ञान अवस्थानुं ज छे, अने तेथी तेनी निमितभुत वाणी पण पुर्वे कदी पण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रवण न करी होय तेवी आत्म स्पर्शी, अपुर्व आत्मार्थ गुण प्रेरक अने शांत रसोत्पादक एटले वैराग उपशम भावने पोषण आपनारी होय छे। वळी ते साथे करुणा कोमलतादि पण तेना चित्तना विषे परमार्थ लक्षे एटले सामान्यरुप एवा वस्तु स्वभावे सर्व जीव सिद्ध सम शुद्ध होवा छतां विशेषरुप एवी पर्यायात्मक दृष्टीए सौ जीव पोताना अज्ञानात्मक भावने वश थई असीम दुःखरुप एवा संसारना विषे भवथी अने भावथी अनेक प्रकारना कटु विपाकने अनुभवी रह्या छे, ते जीवो बोध बीजने पामो, स्वभाव स्थिरताने पामो, एवा प्रकारनी निष्कारण करुणात्मक बुद्धी, अने दृश्यावलोकनमां हृदयनुं अती कोमलपणुं तेना अंतरना विषे स्थित होय छे। वळी तेनी मुद्रा कहेतां मुखाकृतिना विषे पण अंतरंग निराकुल स्थिरताना लीधे सहज प्रसन्नता छवाई रहेली होय छे, अने ते साथे तथारुप निराकुल स्थिरता तरफ उपयोगनुं सहज ढळवापणुं रहेतुं होवाथी सर्वत्र ते सम दृष्टीए जुए छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते साथे निस्पृहता अने, होय निर्भयता मन स्थिर।
निडरता उदारता, क्षमावंत वळी गंभीर॥
सरलता मध्यस्थता होय, विशाल बुद्धीथी सौ जोय।
वळी एकत्वपणे के असंग, असहाईपणे रहेवानो उमंग ॥१०॥

अन्वयार्थ—वळी ते साथे निस्पृहपणुं, निर्भयपणुं, निडरपणुं, उदारपणुं, क्षमावंतपणुं, अने गंभीरपणुं आदि निर्मल अवस्था पण तेना चित्तना विषे स्थिरपणे वर्तती होय छे। वळी ते साथे सरलपणुं, मध्यस्थपणुं, अने बुद्धीनुं विशालपणुं पण होय छे, अने तेथी सर्व कोई अवलोकन तेनुं तथारुप लक्षे एटले विशाल बुद्धी के विशाल दृष्टीपुर्वक ज थतुं होय छे। वळी तेने एकत्व के असंग-पणे असहाईपणे रहेवानो पण उमंग होय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—वळी अहिं एवा ते सम्यकदृष्टी जीवना अंतर परिणामना विषे मोह जन्य आकांक्षानुं अभावपणुं होवाथी त्यां निस्पृहपणुं सहज स्थिर परिणामे वर्ततुं होय छे। ते साथे पोताने पोताना चैतन्यात्मक स्वभावनुं सर्व प्रकारे निःशंकपणुं के दृढ स्वरुप प्रतितीपणुं होवाथी त्यां सप्तात्मक भयना अभावरुप एवुं वास्तविक निर्भयपणुं वर्ततुं होय छे, अने तेम होवाथी पोते पोतानी सर्व बाह्यांतर प्रवृतिमां के परिषह उपसर्गादि जेवा विकट प्रसंगमां पण निडरताने अग्र स्थान आपी आत्मार्थ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भावने अनुकूलपणे वर्ते छे, अने ते साथे संकुचित दृष्टीनुं सर्वथा अभावपणुं होवाथी सर्वत्र ते विशेष प्रकारे उदार चित्तथी वर्ते छे। वळी ते साथे सर्वत्र मैत्री भावनुं मुख्यपणुं होवाथी सामा जीवना अनुचित कार्य के कोई दोष प्रत्ये पण त्यां पोताना विषे क्षमावंतपणुं वर्ते छे, अने ते साथे तथारुप दोष गुप्त राखवारुप एवुं गंभीरपणुं पण विशेष प्रकारे होय छे। वळी ते साथे क्वचित कोई विसर्जन उपयोगे थयेला एवा पोताना अल्प पण तत्व संबंधी दोपने ते दोष रुपे स्वीकारी तेनो नम्र भावे परिहार करवारुप एवुं पोताना विषे सरलपणुं पण परमार्थ लक्षे वर्ततुं होय छे। वळी ते साथे तेवा कोई तत्व विशेष अर्थनो वास्तविक परमार्थ पोताने ख्यालमां न आवतो होय तो तेनो योग्य निर्णय थतां पर्यंत धीरजने केळववारुप एवुं पोताना विषे मध्यस्थपणुं पण परमार्थ लक्षे वर्ततुं होय छे। वळी ते साथे तेवा कोई तत्व विशेष अर्थना निर्णयमां उपयोगने प्रेरीत करतां त्यां शब्दार्थ, नयार्थ, मतार्थ, आगमार्थ, अने भावार्थ एम अनुक्रम पुर्वक अंतर समालोचना करवारुप एवी पोताना विषे विशाल बुद्धी होय छे, अने तेथी ते द्वारा ते कोई अपेक्षा विशेषने अवलंबी सर्वत्र तथारुप लक्षे एटले विशाल बुद्धि के विशाल दृष्टीपुर्वक ज जुए छे। वळी ते साथे पोताने पोतानुं एकत्वपणुं के असंगपणुं भास्यमान थवाथी एटले निश्चय नयथी शुद्ध टंकोत्कीर्ण एवो पोतानो अखंड ज्ञायक स्वभाव अनुभवमां आववाथी ते तथारुप लक्षे पोतानी एकत्वरुप के असंग एवी अप्रमत्त स्थिरता थवारुप सद्-भावनामां उपयोगने सम्यक योगे प्रेरे छे, अने ते साथे पोताना चैतन्यात्मक स्वभावनुं निर्पेक्षपणुं होवानुं विचारी एटले स्वाधिन एवा स्वरुप परिणमनमां परनी अपेक्षा किंचित मात्र पण रहेती नथी, एम वस्तु स्वभावनो निर्णय करी, तथारुप लक्षे पोते असहाईपणे रहेवानी एटले पोते पोताने अवलंबीत थई पुर्ण स्वरुप वितरागत्व पदे समाई जवानी सद्भावनामां उपयोगने सम्यक योगे प्रेरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

उपलब्धी सम्यकत्वनी, थतां एम अनेक प्रकार।
निर्मल अवस्था गुणनी, प्रगटे अंतर एम तुं धार ॥
सम्यकत्वनुं एवुं महात्म्य, मेंसमजाव्युंकरी तारतम्य।
थई ए पंचम अवस्थानी वात, हवे छट्टी बोधुं सुण भ्रात ॥११॥

अन्वयार्थ—आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननी उपलब्धी थतां तेनी साथे अनेक प्रकारनी निर्मल गुण अवस्था प्रगटे छे, एम तुं अंतरना विषे धार। आवुं सम्यग्दर्शननुं परम महात्म्य में तने अहिं तारतम्य करी एटले विशेष पृथक्करणपुर्वक स्पष्ट करी समजाव्युं। अहिं सुधी पंचम अवस्थानी वात

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थई। हवे तने छठ्ठी अवस्था बोधुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आ उपरथी सम्यग्दर्शननुं परम महात्म्य सौ कोई आत्मार्थी जीवने समजाशे के जेनी उपलब्धी थतां, अनेक एवी निर्मल गुण अवस्थानी उपलब्धी सहज तेनी साथे थई जाय छे, के थती जाय छे, अने तेथी मोक्ष मार्गनी शरुआतमां के तेनी सर्व आत्मीक साधनामां तेनुं मुख्यपणुं होवाथी सर्व आत्मज्ञ पुरुषोए तेनुं सर्वोत्कृष्टपणुं ठाम ठाम जिनागमना विषे दर्शाव्युं छे, तेनी विशेष विशेष तत्व मिमांसा करी जे कोई जिज्ञासु जीव तेनी प्राप्तीना वास्तविक मार्गने आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक अनुसरे छे, ते अवश्य तेनी प्राप्ती करी शके छे। तथारुप एवी आ वस्तु प्राप्तीनो मार्ग अने तेनी पुर्णता मात्र एक पोताना वस्तु स्वभावमां ज अभेद परिणामरुप होवाथी कोई पण स्वरुप जिज्ञासु जीवे तथारुप एवा पोताना वस्तु स्वभावने भेद विज्ञानपुर्वक अवलंबीत थवुं ते ज तेनी प्राप्तीनो सम्यक उपाय छे।

उपरोक्त बोधना परमार्थ लक्षे स्वरुप प्राप्तीना वास्तविक ध्येयपुर्वक थयेली एवी जे स्वभाव सन्मुखता ते ज शुद्ध सम्यग्दर्शननी प्राप्तीना निश्चयात्मक हेतुरुप छे। तथारुप स्व समयने अंतर्मुख अवलंबीत थतां, त्यां जे निर्मल अवस्थानी उपलब्धीरुप एवी स्वरुप प्रतिती थाय छे, ते ज प्रतिती सम्यग्दर्शनरुप एवी स्वरुप प्राप्तीनी निर्णयात्मक छे। जीव तथारुप स्वरुपानुसंधानपुर्वक स्वरुपनी थती, के थवा योग्य एवी जे जे निर्मल अवस्थाना चिंतवनमां उपयोगने प्रेरे छे, ते ते निर्मल अवस्था रुपे ते बनी जाय छे, अर्थात तथारुप लक्षे सम्यक्त्वना स्वरुपनी चिंतवना करनार जीव सम्यक्त्व रुप ज बने छे, अप्रमत्त भावनी चिंतवना करनार जीव अप्रमत्त अवस्थाने अनुभवे छे, अने केवल्य दशानी चिंतवना करनार जीव केवल्य स्वरुपने ज पामे छे। मतलब के सम्यग्दर्शनथी सिद्ध पर्यंतनी थती के थवा योग्य एवी शुद्ध चैतन्यात्मक वस्तु स्वभावनी अवस्था विशेषनुं जे जे चिंतवन करवामां आवे छे, ते ते चिंतवनरुप निर्मल अवस्था विशेषनी ते अवश्य प्राप्ती करे छे, अर्थात ते स्वरुपे ते बनी जाय छे, अने ए ज स्व सन्मुख थयेली शुद्ध एवी द्रव्यात्मक दृष्टीनुं फल छे।

आ उपरथी सम्यग्दर्शननुं महात्म्य अने तेना धारक पुरुषनी निर्मल गुण अवस्था केवा प्रकारनी होय छे, ते सहज लक्षमां आवशे, अने ते उपरथी पोतानी जीवन प्रगतीना हेतुरुप एवा परमार्थ मार्गनो वास्तविक लक्ष पण तथारुप बोध विशेषथी थशे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं छठ्ठी अवस्थाना बोध विशेषनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

卐

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(छठ्ठी बोध अवस्था अधिकार)

छठ्ठी अवस्थाना विषे, बोध तारानी प्रभा समान ।
तेथी उज्जवळरुप अहिं, सम्यकज्ञानादि अंतर जाण ॥
तेथी सेवना तेनी नित्य, करे थवा स्वभावे स्थित ।
लावी अंतरमां उल्लास, स्वरुप प्रतितीनो ते खास ॥१॥

अन्वयार्थ—छठ्ठी अवस्थाना विषे बोध तारानी प्रभा समान एटले जेम तारानो प्रकाश रत्नना प्रकाश करतां विशेष जोरदार होवाथी विशेष तेज रुपे एक सरखो स्थिर टकी शके छे, तेम सम्यकज्ञान दर्शनादिरुप आत्म बोधनुं अस्तित्व पण अहिं पुर्व अवस्था करतां पण कांईक विशेष शुद्धता अने स्थिरतारुप परिणामे एक सरखुं टकी शके, तेवुं योग्यपणुं तेना विषे होय छे, अर्थात उपलब्धरुप थाय छे, अने तेथी अहिं तथारुप योग्यतानुसार ते परिणमन तेना अंतरना विषे उज्जवळ रुपे वर्ततुं होय छे, एम तुं जाण, अने तेथी ते स्वभाव स्थित थवा अर्थे नित्य तथारुप सेवना तथा प्रकारनी स्वरुप प्रतितीनो अंतरना विषे खास उल्लास लावीने करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जे जीवने सम्यकज्ञान दर्शनादिरुप एवी निर्मल अवस्थानी उपलब्धी थाय छे, ते जीवने तथारुप निर्मल अवस्थानुं सम्यक भान पोताने पोताना प्रत्यक्ष एवा ते स्वरुप संवेदनथी स्वभावीकज थई जाय छे, अने ते द्वारा पोताने पोतानुं एवुं ते स्वरुप संवेदनरुप प्रतितीपणुं आवतां त्यां अत्यंत उल्लासीतपणुं प्रगटी ते ज क्षणथी पोतानी विर्यात्मक रुचीनुं वलण मात्र एक स्वभाव स्थिरताना हेतुरुप एवा सन्मुखवर्ती पुरुषार्थने मुख्यपणे अवलंबीत थाय छे, अने ते स्वरुप पुर्णता पर्यंत मात्र एक पोताना सम्यक त्रयरुप एवा शुद्ध ज्ञायक स्वभावनी मुख्यतापुर्वक एक सरखो टकीने पण रहे छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे ।

प्रश्न—सम्यग्दर्शन ए श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्यायनुं सुक्ष्म परिणमन होवाथी परोक्ष एवा मती श्रुत ज्ञाननो तो ते विषय नथी, अने वर्तमानमां केवळज्ञान प्रत्यक्षरुप नथी, तो पछी तेनी उपलब्धीनुं सम्यक भान जीवने कई रीते थई शकवा योग्य छे ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर—सम्यक पदथी अलंकृत थयेल एवा ते मती श्रुतरुप ज्ञानथी ज तेनी उपलब्धीनुं सम्यक भान थई शकवा योग्य छे, अने ते समये स्व समयनुं एटले स्व तरफना ज्ञान विशेष उपयोगनुं मुख्यपणुं होवाथी ते उभय ज्ञान त्यां परोक्षरुप नहिं पण नियमा प्रत्यक्षरुप ज होय छे। मतलब के ज्यां ज्यां मती श्रुतरुप एवा ते ज्ञानोपयोगनी पर तरफ एटले शुभाशुभ उदयिक भावमां प्रवृति होय छे, त्यां त्यां मन ईंद्रियादिना निमितपणानी अपेक्षाए ते उभय ज्ञानने परोक्षरुप कहेवा योग्य छे, अने ज्यां ज्यां तथारुप ज्ञान विशेष उपयोगनी स्व तरफ एटले स्वरुप एकत्व के तेनी अंतर स्थिरतारुप प्रवृति होय छे, त्यां त्यां मन ईंद्रियादि निमितपणानुं अभावपणुं थतुं होवाथी ते अपेक्षाए ते उभय ज्ञानने प्रत्यक्षरुप कहेवा योग्य छे।

प्रश्न—जो एम ज होय तो जिनागमना विषे सम्यग्दर्शन मती श्रुत ज्ञान गोचर न होवानुं निरुपण करवानो मुळ हेतु शुं छे ?

उत्तर—तथा प्रकारना निरुपणनो मुळहेतु केवळज्ञानना जेम ते मती श्रुत ज्ञाननो प्रत्यक्ष विषय नहिं होवानी अपेक्षाए छे, पण पोताना विषे उत्पन्न थयेल एवा ते सम्यग्दर्शनने तथारुप एवा ते मती श्रुतज्ञानथी कोई पण प्रकारे जाणी न ज शकाय एम कहेवानो खास एवो शास्त्रकारनो हेतु नथी। जो एकांत तेम मानवामां आवे तो कुमति, श्रुतरुप एवा ते मिथ्याज्ञाननी निवृत्तिपुर्वक सम्यक पदथी अलंकृत थयेला एवा ते मती श्रुतज्ञाननुं के अविरती सम्यकद्दष्टी एवा चतुर्थ गुणस्थाननुं महात्म्य कांई पण प्रशंशवा योग्य रहेतुं नथी। मतलब के अज्ञानरुप तिमीर अने ज्ञानरुप प्रकाश ए बंनेनुं त्यां अन्युनाधिकपणुं ठरे छे।

उपरोक्त बोधनी तत्व मिमांसा करतां एम सिद्ध थई शकवा योग्य छे के शुद्ध क्षायिक परिणामरुप एवा केवळज्ञान स्वभावमां लक्षण लक्ष्यना भेदत्व विना स्व पर वस्तुनो निरधार युगपत थई शकवा योग्य, एवुं संपुर्ण योग्यपणुं होवा छतां वर्तमानकाळे तेनुं अभावपणुं होवाथी ते अपेक्षाए सम्यग्दर्शननुं जाणपणुं परोक्षरुप छे, अने क्षायोपशमीक परिणामरुप एवा मती श्रुत ज्ञानमां लक्षण लक्ष्यना भेदत्व पुर्वक स्व पर वस्तुनो निरधार क्रमथी थई शकवा योग्य, एवुं अल्पत्व योग्यपणुं होवा छतां वर्तमान काळे तेनुं सद्भावपणुं होवाथी ते अपेक्षाए सम्यग्दर्शननुं जाणपणुं प्रत्यक्ष रुप छे, एम परमार्थ द्दष्टीए समजवा योग्य छे।

आ उपरथी स्पष्ट ख्यालमां आवशे के सम्यकज्ञानी पुरुष, पोताने सम्यकज्ञान उत्पन्न थवानो निर्णय जेम ते सम्यकज्ञान वडे करी शके छे, तेम ते ज्ञान स्व पर प्रकाशक होवाथी अने तेनी साथे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्यग्दर्शननो अविनाभावी संबंध रहेवाथी तेनो पण ते ज समय निर्णय त्यां स्वभावीक ज थई जाय छे; एम वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य, अने तेने सम्यक प्रकारे अवधारवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये पंचात्मक ज्ञानना बोध संबंधी याचना करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, पुछे प्रश्न करी बहु मान।
पंचात्मक सु ज्ञाननुं, शुं स्वरुप कहो भगवान॥
तेना प्रत्यक्ष परोक्षरुप शुं, भेद विशेषे पुछुं हुं।
गुरुजी कहे समजावुं ते, सुण तुं सन्मुख भावे ए॥२॥

अन्वयार्थ--अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये तेमनुं बहु मान करी प्रश्न करे छे के हे भगवंत! पांच प्रकारना सम्यकज्ञाननुं शुं स्वरुप छे, ते मने कहो, अने तेना प्रत्यक्ष परोक्षरुप विशेष भेद ते शुं? अर्थात कया ज्ञानने प्रत्यक्ष के परोक्षरुप कहेवामां आवे छे, ते पण हुं आप प्रभुने पुछुं छुं, अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के ते हुं तने समजावुं छुं ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मीक साधनानी प्राथमीक भुमीका ज्ञानथी ज शरु थाय छे, अने तेथी तेनुं महत्वपणुं पण जिनागमना विषे ठाम ठाम दर्शाववामां आव्युं छे, अने ते अनुसार आजे जैन दर्शनना विषे तेवा अल्प जीवो तेनी उपासना पण करे छे, तेम छतां अंश मात्र पण तेओ आत्मार्थ हेतुभुत एवा परमार्थ मार्गनी अंतरंग सन्मुखताने पाम्या होय के पामता होय तेम देखातुं नथी, तेनुं मुख्य कारण ज्ञानना वास्तविक स्वरुपनुं पोताना विषे अबोधपणुं होवानुं ज छे। तथा प्रकारनी अबोधतानो विशेष प्रकारे परिहार उपरोक्त सुसाधकने ज्ञान संबंधीना परमार्थ बोधनी विशेष सन्मुखताना बळे होवा छतां के थवा छतां पण ते विशेष प्रकारे उपयोगनी अंतरंग सन्मुखता पुर्वक तथारुप एवा ते ज्ञान संबंधीना विचारने मुख्य करी पोतानी विशेष समाधानी अर्थे श्री सद्गुरु सन्मुख ते संबंधी प्रश्न उपस्थित करे छे। एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

मुख्यपणे ज्ञान गुणनी, अवस्था अष्ट प्रकार।
तेमां पंचात्मक ज्ञान ने, त्रण अज्ञान एम तु धार॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेमां मती श्रुत आदिना ज्ञान, सांव्यवहारीक प्रत्यक्ष जाण ।
अवधि मनःपर्यय विकल प्रत्यक्ष, सकल प्रत्यक्ष केवळ ले लक्ष ॥३॥

अन्वयार्थ—ज्ञान गुणनी अवस्थाना मुख्यपणे पांच ज्ञान अने त्रण अज्ञान एम एकंदर आठ प्रकार छे, एम तुं धार, तेमां मती श्रुत एवां जे आदिना बे ज्ञान ते सांव्यवहारीक प्रत्यक्ष छे, एम तुं जाण, अने अवधि मनःपर्यय ए विकल प्रत्यक्ष अने केवळज्ञान सकल प्रत्यक्ष छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी तेने लक्षमां ले ।

विशेषार्थ—ज्ञानादि गुण समुदायनो धारक एवो जे गुणी आत्मा तेमां सामान्यपणे अनेक गुणो रहेला छे, अने विशेषपणे मात्र एक ज्ञान गुण छे, ते ज्ञान गुण स्व पर प्रकाशक होवाथी तेमां स्व पर स्वरुपने के वस्तु मात्रने जाणवानुं सामर्थ्य स्वभावीक ज शक्ति विशेष रुपे रहेलुं छे, अने तेम होवाथी वस्तु मात्रनो निर्णय पण ते द्वारा ज थई शके छे । तथारुप ज्ञान गुणनी सम्यक-ज्ञाननी अपेक्षाए पांच, अने मिथ्याज्ञाननी अपेक्षाए त्रण एम एकंदर आठ अवस्थाओ छे । सम्यक-ज्ञानमां मती, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय अने केवळ ए पांचनो समावेश थाय छे, अने मिथ्याज्ञानमां कुमती, कुश्रुत, अने विभंग ए त्रणनो समावेश थाय छे ।

उपरोक्त पांच ज्ञानमां आदिना चार ज्ञान क्षयोपशम लब्धीरुप होवाथी ते जीवनी अपुर्ण अवस्थामां ज होय छे, अने अंतनुं केवळज्ञान क्षायिक लब्धीरुप होवाथी ते जीवनी पुर्ण अवस्थामां ज प्रगटे छे । आम होवाथी मती श्रुतरुप एवा आदिना बे ज्ञानथी थता पदार्थ विषयमां मन अने ईंद्रियोनी अपेक्षा रहे छे, अने ते वडे ते रुपी पदार्थने एकदेश स्पष्ट जाणे छे, अने तेथी तेने सांव्यवहारीक प्रत्यक्ष कहेवामां आवे छे, अने अवधि मनःपर्यय ए बे ज्ञानथी थता पदार्थ विषयमां तथारुप ज्ञानानी जाणवारुप शक्तिनी योग्यतानुसार ते मन अने ईंद्रियोनी अपेक्षा विना, अमुक मर्यादित प्रमाणमां रुपी पदार्थने स्पष्ट जाणे छे, अने तेथी तेने विकल परमार्थीक प्रत्यक्ष कहेवामां अवे छे, अने केवळ—ज्ञानमां त्रीकाळवर्ती एवा समस्त पदार्थोने युगपत स्पष्ट जाणवारुप शक्ति विशेषनुं सर्वथा प्रगटपणुं होवाथी त्यां मन अने ईंद्रियोनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी, अने तेथी तेने सकल पर—मार्थीक प्रत्यक्ष कहेवामां आवे छे ।

उपरोक्त पांच ज्ञानमां मती श्रुतरुप एवा आदिना बे ज्ञाननुं आत्मीक साधनामां मुख्यपणुं होवाथी अहिं तेनुं परमार्थ लक्षे विशेष प्रकारे निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मतीज्ञान

शुद्ध चैतन्य धन स्वभावना वास्तविक बोधपुर्वक त्रयात्मकरुप एवा मतीज्ञाननुं एटले मतीज्ञानरुप लब्धी, भावना अने उपयोगनुं स्वाश्रीत एवुं सन्मुखवर्ती वलण दर्शनोपयोगपुर्वक थवुं ते।

श्रुतज्ञान

मतीज्ञान पुर्वक जाणेला एवा चैतन्यात्मक बोधना विशेष अंतर्मुख चिंतवनमां के तथारुप लक्षे अंतर स्थिरता करवामां त्रयात्मकरुप एवा श्रुत ज्ञाननुं एटले श्रुतज्ञानरुप लब्धी, भावना, अने उपयोगनुं स्वाश्रीत एवुं सन्मुखवर्ती वलण थवुं ते।

उपरोक्त लब्धी, भावना, अने उपयोगना स्पष्टार्थ बोधने विचारीए तो लब्धी एटले जीवना पुरुषार्थ बळे मतीज्ञानना उघाडमां मतीज्ञानावरण कर्मनो अने श्रुतज्ञानना उघाडमां श्रुतज्ञानावरण कर्मनो थयेलो एवो जे जीवनो ज्ञान विशेष क्षयोपशम तेनुं चैतन्यात्मक बोधना अंतर्मुख लक्षे स्व तरफ ढळवुं एटले शुद्धोपलब्धीरुप एवुं तेनुं स्व सम्मुख परिणमन थवुं ते। भावना एटले ते लब्धीरुप शक्तिनुं निरंतर ते अनुसार स्वभाव स्थिरता थवारुप एवुं सन्मुखवर्ती वलण रहेवुं ते, अने उपयोग एटले तथारुप लक्षे अंतर्मुख जोडाणमां उपयोगनुं प्रेरीत थवुं ते। एम लब्धी, भावना, अने उपयोगना स्पष्टार्थ बोधनो परमार्थ छे।

आ उपरथी समजाशे के शुद्ध चैतन्य घन स्वभावना वास्तविक बोधरुप एवुं ज्यां सम्यकरुप शुद्ध परिणमन वर्ते छे, त्यां त्रयात्मकरुप एवा ते मतीश्रुत ज्ञाननुं एटले मतीश्रुत ज्ञानरुप लब्धी, भावना, अने उपयोगनुं सन्मुखवर्ती वलण होय छे, अने ज्यां तथारुप स्वभावना अवास्तविक बोधरुप एवुं ज्यां असम्यकरुप अशुद्ध परिणमन वर्ते छे, त्यां मती श्रुत ज्ञानरुप एवी ते उभयात्मक लब्धीनुं विमुखवर्ती वलण रहेवाथी स्व प्रत्येनी भावना उपयोगनुं सर्वथा अभावपणुं होय छे, अने तेथी परमार्थ दृष्टीए तेने मती श्रुत अज्ञान ज कहेवा योग्य छे।

आ प्रमाणे पंचात्मक ज्ञानना परमार्थ बोधने आत्मार्थी जीवे पुनः पुनः विचारवा योग्य छे, अने तेमां मतीश्रुतरुप एवा जे आदिना बे ज्ञान ते कुमती श्रुतरुप अज्ञानभावनी निवृत्तिना अने आत्मार्थ भावनी सन्मुखताना मुळ हेतुरुप होवाथी तेनी अंतर्मुख साधनाने सम्यक योगे अवलंबवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये मतीश्रुतरुप एवा ते बंने ज्ञाननी अंतर्मुख साधनाना सम्यक उपायनी याचना करे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पुछे एम।
मती श्रुत बे ज्ञाननी, थाय अंतर साधना केम॥
लक्षण भेदे तेनो शुं, होय अनुक्रम पुछुं हुं।
गुरुजी कहे सांभळ भ्रात, लक्षण भेदे कहुं ते वात॥४॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये वंदन करी एम पुछे छे, के हे भगवंत! मती श्रुतरुप एवा ते बंने ज्ञाननी अंतर्मुख साधना केम थाय? अने तेनो लक्षण भेदे शुं अनुक्रम होय? ते हुं आप प्रभुने पुछुं छुं। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के हे भ्रात! ते वात हुं तने लक्षण भेदे कहुं छुं, ते तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—मतीश्रुतरुप ए एक ज ज्ञान गुणनी क्षयोपशम लब्धीरुप एवी बे जुदी शक्तिओ छे, अने जुदी शक्ति होवाथी बंनेनी परिणमनशील अवस्थाओनुं पण भेदत्वपणुं पोत पोताना कारणे स्वभावीक ज रहेलुं छे, तेनी अंतर्मुख साधनाना मुख्यत्वे करी बे विभाग थई शके छे, एक मती श्रुत ज्ञाननुं सम्यकरुप परिणमन थवारुप, अने बीजी ते अनुसार तेनी ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरता थवारुप। आवा प्रकारनी अंतर्मुख साधनामां उपरोक्त बंने लब्धीओ परस्पर अविनाभावी संबंधरुपे टकीने पोत पोतानी परिवर्तनशील अवस्थाओ पोत पोताना कारणे क्रमथी करे छे, ते क्रम जीवनी अंतर्मुख साधनामां लक्षण भेदे केवा प्रकारे होय छे, ते एक महत्वनो प्रश्न उपरोक्त साधकने उपस्थित थतां, ते पोतानी विशेष आत्मार्थ सन्मुखता अर्थे ते संबंधीनां वास्तविक बोधनी श्री सद्गुरु प्रत्ये याचना करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

अवग्रहादि मतीज्ञानना, चार भेदने अवलंबी कोय।
स्व सन्मुख विचारणा, करी निर्णय त्यां स्वनो होय॥
ते पछी करी श्रुतज्ञानने मुख्य, थाय ते विशेष अंतर्मुख।
त्यां भेदविज्ञानथी साधे ते, सम्यकत्व ने स्व स्थिरता ए॥५॥

अन्वयार्थ— प्रथम जीवे मतीज्ञानना अवग्रहादि चार भेदने अनुक्रमे अवलंबी अने त्यां स्वसन्मुख विचारणाने मुख्य करी पोतानी चैतन्य सत्ता होवा संबंधीनो निर्णय करवा योग्य छे, अने त्यार बाद त्यां श्रुतज्ञानना उपयोगने मुख्य करी, तेने विशेष अंतर्मुख प्रेरी अने तथारुप श्रुत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेष उपयोगना बळे त्यां भेदविज्ञान उत्पन्न करी ते द्वारा ते शुद्ध सम्यग्दर्शनने अने ते अनुसार स्वभाव स्थिरताने अनुक्रमे साधे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्म जिज्ञासु जीवे पोतानी प्राथमीक भुमीकामां सत्संग योगे संप्राप्त थयेला एवा आत्मार्थ बोधना अंतर्मुख सिंचन अर्थे मतीज्ञानना अवग्रहादि चार भेदने अनुक्रमे अवलंबी पोताना ज्ञानोपयोगने स्व सन्मुख विचारणामां प्रेरीत करवा योग्य छे, तेनो अनुक्रम निचे प्रमाणे छे।

अवग्रह

अनुत्पन्न अने अमिलन एवी पोतानी चैतन्य सत्ता होवा संबंधीना बोध विचारमां उपयोगने प्रेरीत करवो ते।

ईहा

तथारुप बोध विचारनी वर्द्धमानतापुर्वक तेना वास्तविक निर्णयमां उपयोगनुं सन्मुखवर्तीपणुं करवुं ते।

अवाय

युक्ति अनुमानादिना अवलंबनपुर्वक पोतानी चैतन्य सत्ता होवा संबंधीनो वास्तविक निर्णय पोते पोताना ज्ञानथी करवो ते।

धारणा

पोते निर्णय करेला एवा पोतानी चैतन्य सत्ता होवा संबंधीना बोधने अस्खलित स्मृति रुपे धारण करी राखवो ते।

अहिं सुधी थयेली सामान्यरुप एवी स्थुल बोधनी विचारणामां, के ते द्वारा थयेला स्व संबंधीना निर्णयमां मात्र एक मतीज्ञाननी ज अपेक्षा रहे छे, अने तेथी तेना निमितभुत एवी मन ईंद्रियोनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अहिं अवश्य होय छे। त्यार बाद ज्यारे ते साधक जीव तथारुप वस्तु स्वभावना सामान्य विशेषात्मक धर्मनी अंतर्मुख विचारणाने मात्र एक श्रुत विशेष उपयोगनी कहेतां भाव श्रुतज्ञाननी प्रधानरुप दृष्टी करी तेने भेदविज्ञानपुर्वक अवलंबीत थाय छे, अने ते द्वारा पोताना लक्षने क्रमे क्रमे स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करे छे, त्यारे त्यां स्व तरफना ज्ञानोपयोगनी अत्यंत विशुद्धीना बळे अंतरंगना विषे रहेला एवा मन योग संबंधनी पृथक्त्वापुर्वक रागादि भावनी अंतरसंधीनुं क्रमे क्रमे अभावपणुं थई जाय छे, अने तेम थतां अहिं ते साधक जीव पोते पोताना विषे स्व संवेदनरुप एवा सुक्ष्म बोधनी अंतर्मुख स्पर्शणाने एटले अखंड अभेद एवा ज्ञायकरुप शुद्ध स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताने पामे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—मतीश्रुतरुप ए एक ज ज्ञान गुणनी बंने लब्धीओ परस्पर अविनाभावी संबंध रुपे होवा छतां अवग्रहादि चार भेदमां मात्र मतीज्ञाननुं अने त्यार बाद श्रुतज्ञाननुं एम एक ज पदार्थ विषयमां बंनेनुं भेद अवस्था रुपे परिणमन थवानो मुळ हेतु शुं छे ?

उत्तर—तेनो मुळ हेतु पोत पोतानी कार्यात्मक शक्तिमां रहेला भेदत्वपणानुं ज छे, अने तेथी मती श्रुतरुप एवी बंने लब्धीओ परस्पर अविनाभावी संबंध रुपे टकीने, पोत पोतानी कार्यात्मक शक्तिनी योग्यतानुसार पोत पोताना कारणे भेद अवस्था रुपे परिणमन करे छे।

आ उपरथी तत्व शोधक जीवने समजाशे के पदार्थ विषयमां मती श्रुतरुप एवी ज्ञान गुणनी बंने अवस्थाओनुं परस्पर संबंधपणुं होवाथी जो के बंनेनी अपेक्षा रहे छे, परंतु ते बंने अवस्थाओनुं भेदरुप एवुं स्वतंत्र परिणमन होवाथी अने ते साथे पदार्थ विषयमां पण भेदाभेद के स्थुल सुक्ष्म दृष्टीए तेना अनेक सामान्य विशेषात्मक धर्मनी तारतम्यता रहेती होवाथी कोई पण पदार्थ विषयमां ते पोत पोतानी भेदरुप अवस्थाने अवलंबीने ज पोत पोतानुं स्वतंत्र कार्य क्रमथी करे छे, अने तेम होवाथी स्व पर एवा कोई पण पदार्थ विषयमां, विषय करनार व्यक्तिना उपयोगनी तारतम्यानुसार ज्ञान गुणनी एवी ते बंने अवस्थाओनुं मुख्य गौणपणुं त्यां स्वभावीक ज होय छे।

आ उपरथी अवग्रहादि चार भेदमां मतीज्ञाननुं मुख्यपणुं होवानुं मुळ कारण समजाशे, के त्यां मतीज्ञानना विषयभुत एवी मात्र एक ज चैतन्य सत्ता होवा संबंधीनी विचारणानुं के तेनुं त्रीकाळवर्ती पणुं होवा संबंधीना निर्णयनुं ज मुख्यपणुं छे, अने तेथी त्यां भेदाभेद के स्थुल सुक्ष्म दृष्टीनी, के चैतन्यात्मक वस्तुना सामान्य विशेषात्मक धर्मनी, सर्व अपेक्षानुं अभावपणुं होवाथी तथारुप बोध विशेषना निमितभुत एवा श्रुतज्ञाननुं अभावपणुं पण त्यां स्वभावीक ज होय छे, त्यार बाद ज्यारे ते साधक जीव मतीज्ञानना विषयभुत (वाचक शब्दरुप एवा आत्माना सामान्य बोधने) पदार्थने मतीज्ञान पुर्वक जाणी, एटले चैतन्य सत्ता होवा संबंधीनो वास्तविक निर्णय करी, पुनः तेनी उत्तर तर्कणारुप एवा स्व संबंधीना विशेष निर्णयमां भेदाभेद के स्थुल सुक्ष्म दृष्टीनी, के वस्तुना सामान्य विशेषात्मक धर्मनी, अंतर सन्मुखता पुर्वक योजाय छे, त्यारे त्यां ज्ञान गुणनी मतीज्ञानरुप अवस्थानुं अभावपणुं थई ते जग्याए श्रुत विशेष कहेतां भाव श्रुतज्ञानरुप अवस्थानुं (वाचक शब्दरुप एवा आत्माना सामान्य बोधथी वाच्य एवी वस्तुनो विशेष बोध थवो ते) उपलब्धीपणुं थाय छे, अने ते मतीज्ञान करतां अधिक विशुद्ध होवाथी अने क्रमे क्रमे ते विशुद्धीनुं स्व सन्मुख विचार श्रेणीना बळे वर्द्धमानपणुं थवाथी ते ज सम्यक्ज्ञान दर्शनादिनी उत्पत्तिना, के स्व संवेदनरुप एवी स्वभाव स्थिरताना हेतुरुप पण बने छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ प्रमाणे मती श्रुत ज्ञाननुं सम्यकरुप परणिमन थवुं ते मती श्रुत ज्ञाननी अंतर्मुख साधनानो पहेलो प्रकार छे, अने ते सम्यग्दर्शननी उपलब्धी पर्यंत टकीने रहे छे, अने त्यार बाद तथारुप साधनानुं परिवर्तन थई बीजी अंतर्मुख साधनानी शरुआत थाय छे, अने ते ज्ञानादि सम्यक त्रयनी ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरता थवारुप होवाथी ते स्वरुप पुर्णता पर्यंत एक सरखी हयाति धरावे छे, एम बंने अंतर्मुख साधनाना परमार्थने आत्मार्थी जीवे विचारवा योग्य छे, अने पोतानी प्राथमीक भुमीकामां पहेली अंतर्मुख साधनाने, ते बीजी अंतर्मुख साधनानी सिद्धीना हेतुरुप होवाथी तेने सम्यक योगे अवलंबवा योग्य छे।

उपरोक्त बोधनी तत्व मिमांसा करतां आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाशे के आत्मीक साधनामां ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप एवी शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभाव स्थिरतानुं ज मुख्यपणुं छे, अने तेनी उपलब्धीमां ज्ञान गुणनी मती श्रुतरुप एवी बंने अवस्थाओनुं सम्यकरुप शुद्ध परिणमन थवुं ते छे, अने तेनी सिद्धी मतीज्ञानपुर्वक भाव श्रुतज्ञाननी अंतर्मुख विचार श्रेणीने अवलंबवाथी ज थाय छे, अने तेथी मती श्रुतरुप एवी ज्ञान गुणनी बंने अवस्थाओमां दर्शन विशुद्धीना मुळ हेतुभुत मात्र एक भाव श्रुतज्ञाननी अवस्था विशेषनुं ज मुख्यपणुं छे, के जे वडे वस्तु स्वभावनो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञानथी थई उपयोग सहज स्वभाव स्थिरताने पामे छे, अने तेथी आत्मार्थी जीवे सम्यक्त्वादि गुण विशेष परिणमनमां श्रुतज्ञानने प्रधानरुप गणी तेनी उपलब्धोना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमां सम्यक योगे योजावा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तथारुप लक्षे साधकनी साधनात्मक प्रवृति संबंधी आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

दृढपणुं स्वभावनुं, अहिं थाय वृद्धीगत जेम।
ज्ञानादि स्व स्थिरता, थवा उल्लसे विर्य त्यां तेम ॥
ज्ञप्ति क्रिया तेथी मुख्य, साधकने होय अंतर्मुख।
ते साथे संयम देशे धार, परमार्थरुप जाण ते व्यवहार ॥५॥

अन्वयार्थ—जेम जेम अहिं ते सम्यकदृष्टी जीवने पोताना स्वभावनुं दृढत्वपणुं वर्द्धमानताने पामतुं जाय छे, तेम तेम ज्ञानादि सम्यकरुप स्वभाव स्थिरता थवाना लक्षे पोतानी विर्यात्मक रुचीनुं वलण स्व सन्मुख उल्लसतुं जाय छे, अने तेथी अहिं ते साधकनो तथारुप अंतर्मुख साधनाना विषे ज्ञप्तिरुप एवी ज्ञान क्रिया मुख्यपणे वर्तती होय छे, अने ते साथे समिति गुप्तिरुप एवुं देश चारित्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पण तेने तथारुप लक्षे होय छे, अने तेथी तेने परमार्थरुप व्यवहारना नामथी संबोधवामां आवे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण ।

विशेषार्थ—जे जीवने सम्यग्दर्शन थाय छे, तेनुं वास्तविक फल वितरागपणुं होवाथी जेम जेम तेने पोताना स्वभावनुं दृढत्त्वपणुं वर्द्धमानताने पामतुं जाय छे, तेम तेम ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप एवा पोताना चैतन्यात्मक स्वभावना विषे पोतानी अंतर्मुख स्थिरता थवा अर्थे पोतानी विर्यात्मक रुचीनुं वलण सहज सन्मुख भावे उल्लसतुं जाय छे, अने तेथी अहिं ज्ञप्तिरुप क्रियानुं मुख्यपणुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने ते साथे तथारुप एवी ते ज्ञप्तिरुप क्रियानो विशुद्धीना बळे अविरतीरुप एवा अप्रत्याख्यान कषायोदय जन्य रागादि भावोनुं क्षायोपशमीक भावे निर्जरवापणुं थवाथी ते स्वरुप साधक जीव बाह्य देशव्रतरुप संयमने पण पामे छे, जेमां समिति गुप्तिरुप एवी शुभाचरण सेवनानो समावेश थई जाय छे ।

प्रश्न—समिति अने गुप्ति ए बंनेना एकंदर केटला प्रकार छे, अने ते व्यवहार सेवनानो आदर सम्यकदृष्टी जीव केवा प्रकारे करे छे ?

उत्तर—समितिना एकंदर पांच प्रकार छे, अने गुप्तिना नास्तिरुप निमितना अभावनी अपेक्षाए तेना व्यवहार नयथी त्रण प्रकार छे, अने अस्तिरुप स्वभाव स्थिरतानी के वितराग भावनी अपेक्षाए तेनो निश्चय नयथी एक ज प्रकार छे । तथारुप व्यवहार सेवनाना आदरमां सम्यकदृष्टी जीवनो मुख्य एवो अंतर्मुख लक्ष होवाथी ते तथारुप लक्षे तेनो आदर मात्र ज्ञाता भावे करे छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे ।

ईर्या समिति

शरिराश्रीत थती एवी तेनी हलन चलनरुप क्रियामां, ते क्रियाथी भिन्न एवा पोताना ज्ञायक स्वभावरुप शुद्धोपयोगने अप्रमत्त योगनी सम्यक सावधानीपुर्वक टकावी राखवो ते ।

भाषा समिति

शरिराश्रीत थती एवी हित मिष्ट आवश्यक वाणीरुप क्रियामां, ते क्रियाथी भिन्न एवा पोताना ज्ञायक स्वभावरुप शुद्धोपयोगने अप्रमत्त योगनी सम्यक सावधानीपुर्वक टकावी राखवो ते ।

एषणा समिति

शरिराश्रीत थती एवी संयम निर्वाहना हेतुरुप शुद्ध आहारादि क्रियामां, ते क्रियाथी भिन्न एवा पोताना ज्ञायक स्वभावरुप शुद्धोपयोगने अप्रमत्त योगनी सम्यक सावधानीपुर्वक टकावी राखवो ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदान निक्षेपण समिति

शरिराश्रीत थती एवी अन्य अनेक वस्तुओने लेवा मुकवारुप क्रियामां, ते क्रियाथी भिन्न एवा पोताना ज्ञायक स्वभावरुप शुद्धोपयोगने अप्रमत्त योगनी सम्यक सावधानीपुर्वक टकावी राखवो ते ।

उत्सर्ग समिति

शरिराश्रीत थती एवी मलादि परित्यागरुप क्रियामां, ते क्रियाथी भिन्न एवा पोताना ज्ञायक स्वभावरुप शुद्धोपयोगने अप्रमत्त योगनी सम्यक सावधानीपुर्वक टकावी राखवो ते ।

आ प्रमाणे पंचात्मक समितितुं स्वरुप छे, अने ते देश के सर्व संयमना धारक एवा सम्यक दृष्टी जीवने ज सम्यक प्रकारे होय छे । तथा प्रकारनी समितिरुप व्यवहार प्रवृत्तिमां एवा ते सम्यक दृष्टी जीवनो अंतर्मुख लक्ष प्रधानरुप होवाथी त्यां तथारुप लक्षना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार गुप्तितुं होवुं पण अनिवार्यरुप छे, अर्थात ते पण त्यां होय छे । तथारुप गुप्ति शब्दना अर्थनो परमार्थ विचारीए तो ज्यां ज्यां जे जे समये मन वचन के काय साथे जीवना उपयोगनी जोडाण रुप प्रवृत्तितुं मुख्यपणुं होय छे, त्यां त्यां तेने मन योग. वचन योग, के काय योग कहे छे, अने ज्यां ज्यां तथारुप जोडाण प्रवृत्तितुं स्वभाव लक्षे अभावपणुं एटले योगनो निग्रह थाय छे, त्यां त्यां तेने अनुक्रमे मन गुप्ति ,वचन गुप्ति, के काय गुप्तिना नामथी संबोधवामां आवे छे ।

प्रश्न—मन वचन काय साथे जोडाण प्रवृत्तिना अभावरुप एवो योगनो निग्रह तो स्वरुप पुर्ण एवा श्री जिनेश्वर देवने ज अयोगी गुणस्थाने थाय छे, तो पछी अपुर्ण अवस्थामां तथा प्रकारनो निग्रह थई ते साधकतुं निश्चय गुप्ति रुपे परिणमवापणुं ते शी रीते थई शके ?

उत्तर—अयोगी गुणस्थानना विषे जे अयोगीपणुं प्रगटे छे, तेने योगना निग्रहरुप गुप्ति कहेवामां आवती नथी, पण योगनी परिस्पंदनरुप क्रियानुं अटकवुं एटले आत्मप्रदेशोनुं अकंपरुप के अचलरुप थवुं ते अर्थथी संबोधवामां आवे छे, अने तेथी गुप्ति शब्दना अर्थ साथे तेनुं सर्वथा असंबंधपणुं होवुं घटे छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे ।

प्रश्न—समिति अने गुप्ति ए बंनेमां तत्वदृष्टीए शुं तफावत रहेलो छे, अने ते कये कये गुणस्थानके होय छे ?

उत्तर—समिति अने गुप्ति ए बंनेमां तत्वदृष्टीए रहेला तफावततुं स्वरुप, अने तेना गुणस्थानकनो अनुक्रम निचे प्रमाणे छे—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१—समितिमां व्यवहार प्रवृत्तिनुं मुख्यपणुं छे, त्यारे गुप्तिमां तथारुप व्यहार प्रवृत्तिना निरोधनुं मुख्यपणुं छे।

२—समितिमां शुभोपयोगनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी त्यां बंधनी अपेक्षा अवश्य रहे छे, त्यारे गुप्तिमां शुद्धोपयोगनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य संवर निर्जराना हेतुरुप बने छे।

३—समितिमां पराश्रीत भावनुं मुख्यपणुं रहेवाथी त्यां निमित, पर्याय के भेदरुप व्यवहारनी हाजरी नियमा होय छे, त्यारे गुप्तिमां स्वाश्रीतपणुं मुख्यरुप होवाथी त्यां निमित, पर्याय के भेदरुप व्यवहारनुं सर्वथा अभावपणुं थई जाय छे।

४—समितिमां शुभोपयोगनी मुख्यताए पांचमुं अने छठ्ठुं ए बे गुणस्थानकोनो समावेश थाय छे, त्यारे गुप्तिमां शुद्धोपयोगनी मुख्यताए सातमाथी बारमा पर्यंतना छ अने गौणताए चोथाथी छठ्ठा पर्यंतना त्रण एम एकंदर नव गुणस्थानकोनो समावेश थाय छे।

५—समितिमां व्यवहार नयनुं मुख्यपणुं होवाथी त्यां तथारुप समितिना पांच प्रकारनो समावेश थाय छे, त्यारे गुप्तिमां निश्चय नयनुं मुख्यपणुं होवाथी तेमां निश्चय गुप्तिरुप एवा एक ज प्रकारनो समावेश थाय छे।

आ प्रमाणे समिति अने गुप्ति ए बंनेमां तत्व दृष्टीए रहेला तफावतनुं स्वरुप छे, ते उपरथी तत्व शोधक जीवने स्पष्ट समजाशे के जे जीवने सम्यग्दर्शननी उपलब्धी थाय छे, त्यां ज समिति गुप्तिनुं अस्तित्व सम्यक प्रकारे होय छे, अने त्यां ज क्रमे करी पुर्ण स्वरुप वितरागत्वपणुं ते सम्यग्दर्शनना वास्तविक फलरुप होवाथी प्रगटे छे। आम वस्तुस्थिति होवाथी ज्यां ज्यां जेटले अंशे वितरागपणुं होय छे, त्यां त्यां तेटले अंशे गुप्तिनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने ते अपेक्षाए तेने निश्चय गुप्ति के स्वरुप गुप्तिना नामथी ते एक ज प्रकाररुप होवानुं संबोधवामां आव्युं छे, ते सिवाय गुप्तिना त्रण प्रकार जे व्यवहार नयाश्रीत छे, ते निमितरुप कथन होवाथी स्वरुप साधक जीवे मात्र तेने अनेकांत दृष्टीए जाणवा योग्य छे, कारण के मन, वचन, कायरुप एवी ते पर जन्य क्रिया स्वमां नास्तिरुप होवाथी ते कोई पण प्रकारे जीवना आधिन नथी, अने तेथी ते क्रिया साथे बंध मोक्षनी अपेक्षा पण रहेती नथी, एम सम्यकदृष्टी जीवे स्वभाव लक्षे विचारी मात्र एक निश्चय गुप्तिरुप एवा परम शुद्ध वितराग भावने ज संवर निर्जराना के भाव मोक्ष मार्गना हेतुरुप गणी तेनी प्राप्तीना सन्मुखवर्ती साधनने निश्चय व्यवहाररुप ए उभयात्मक नयना वास्तविक बोधपुर्वक अवलंबवा योग्य छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आवा प्रकारनुं बोध विशेष परिणमन उपरोक्त एवा ते सुसाधकने होवाथी ते निश्चय व्यवहाररुप एवी पोतानी बाह्यांतर साधनामां एकांत अनेकांत अने हेयोपादेयना परमार्थने समजी ते अनुसार ते मात्र एक पोतानी शुद्ध आत्मार्थ साधनाने ज अवलंबे छे, अने तेथी त्यां शुद्धनयनुं उपादेयपणुं अने तेनी अंतरंग मुख्यतापुर्वक थती एवी जे शुभोपयोगरुप बाह्य सेवना तेमां हेय बुद्धीपणुं अने तेम होवाथी ते भावनुं अकर्तापणुं एम अंतरंग श्रद्धानना विषे वर्ततुं होय छे, अने तेथी उत्तरोत्तर ते साधक तथारुप भेदविज्ञानना बळे शुद्ध सम्यक रत्नत्रयात्मक एवी ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरतानुं वर्द्धमानपणुं करी केवळ स्वरुपने पामे छे, अने तेथी शुद्धना लक्षे थती एवी जे शुभोपयोगरुप व्यवहार सेवना, तेने ज परमार्थरुप एवा सद्भुत व्यवहारना नामथी संबोधवामां आवे छे ।

प्रश्न—सद्भुत अने असद्भुत ए उभयात्मक व्यवहारमां तत्व-दृष्टीए शुं तफावत छे, अने तेमां हेयोपादेयनो शुं परमार्थ रहेलो छे ?

उत्तर—शुद्धात्म स्वरुपना श्रद्धान, ज्ञान, आचरणरुप एवी जे रत्नत्रयनी स्वभाव परिणामरुप सेवना, ते निश्चयनयने अवलंबीत होवाथी तेने परमार्थरुप एवा सद्भुत व्यवहारना नामथी संबोधवामां आवे छे, अने ते मोक्षमार्गमां उपादेयरुप एटले आदरवा योग्य छे, अने व्रत महाव्रतादि के सुदेवादिनी भक्ति आदिरुप एवी शुभ विकल्पात्मक रत्नत्रयनी विभाव परिणामरुप सेवना, ते व्यवहारनयने अवलंबीत होवाथी तेने अपरमार्थरुप एवा असद्भुत व्यवहारना नामथी संबोधवामां आवे छे, अने ते मोक्षमार्गमां हेयरुप एटले त्यागवा योग्य छे, एम उभयात्मक व्यवहार सेवनानी वास्तविक समजपुर्वक अने ते अनुसार हेयोपादेयनी पृथकताना अंतरंग लक्षपुर्वक स्वरुप-साधक एवो ते सम्यकदृष्टी जीव ते पोते पोतानी स्वभावाश्रीत दृष्टीना बळे निमिताश्रीत एवा सर्व शुभाशुभ भावोनो परित्यागी थाय छे, अने तेथी शुभोपयोगरुप एवी असद्भुत व्यवहार सेवनानो आदर थवा छतां, के स्थुल दृष्टीए तेम देखावा छतां, पण ते भावोनुं अकर्तापणुं पोतानी अंतरंग श्रद्धानमां रहेवाथी तत्व-दृष्टीए तेने शुद्धोपयोगरुप एवी सद्भुत व्यवहार सेवनानो ज कर्ता के तेनो उपासक कहेवा योग्य छे, अने ते ज सद् असद्रुप एवा उभयात्मक व्यवहारना वास्तविक बोध परमार्थनुं फल छे ।

आ उपरथी लक्षमां आवशे के जे साधक जीव शुद्धनयना अवलंबनपुर्वक शुभोपयोगरुप एवी बाह्याचरण सेवनानो आदर अकर्ताभावे एटले ते भावोमां पोताना स्वामित्वभावनी नकार-बुद्धीपुर्वक करे छे, त्यां ज आत्मार्थपणुं घटे छे, अने तेने ज सद्व्यवहारना नामथी संबोधवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये निश्चय व्यवहारनयना वास्तविक बोधनी याचना करे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पुछे हे नाथ ।
नय निश्चय व्यवहारनो, मने समजावो परमार्थ ॥
एकांत ने अनेकांत शुं, ते पण पुछुं आपने हुं ।
गुरुजी कहे सुण दई ध्यान, ते समजावुं करी विज्ञान ॥७॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये वंदन करी पुछे छे के हे नाथ ! निश्चय अने व्यवहार ए उभय नयनो परमार्थ एटले तेनुं वास्तविक स्वरुप शुं ? ते मने कृपा करी समजावो, अने ते साथे एकांत अने अनेकांत ते शुं ? ते पण हुं आप प्रभुने पुछुं छुं । अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के हे शीष्य तथारुप बोधनुं विज्ञान करी ते हुं तने समजावुं छुं, ते तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ— निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयना वास्तविक बोध परमार्थनुं ज्यां केवळ अबोधपणुं वर्ते छे त्यां आत्मार्थ भावनुं अस्तित्व अंशमात्र पण होतुं नथी, एम जे जीवने आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक समजाय छे, ते ज तथारुप बोध प्राप्तीनी वास्तविक जिज्ञासा उत्पन्न करी, ते अर्थे प्रत्यक्ष एवा कोई सत्संगनी सन्मुखवर्ती उपासना करे छे। आवा प्रकारना बोध परमार्थनुं अंतर्मुख सिंचन उपरोक्त सुसाधकने आत्मार्थ लक्षपुर्वक होवा छतां हजु पण पोताना विषे तथारुप बोधनी उणप समजी ते पोतानी विशेष आत्मार्थ सन्मुखतापुर्वक ते संबंधी सद्गुरु प्रत्ये याचना करे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

निश्चयनय स्वाश्रीतरुप, पराश्रीतरुप व्यवहार ।
तेथी उभयात्मक नयो, प्रतिपक्षी परस्पर धार ॥
निश्चयथी परमार्थ एक, व्यवहारथी अन्य रुपे अनेक ।
तेथी ते नयथी स्वीकार, निश्चयथी तेनो परिहार ॥८॥

अन्वयार्थ—निश्चयनय ए स्वाश्रीतरुप छे, अने व्यवहारनय ए पराश्रीतरुप छे, अने अने तेथी उभयात्मक नयनुं परस्पर प्रतिपक्षीपणुं छे, एम तुं धार, अने तेम होवाथी निश्चयथी वस्तुनो परमार्थ त्रीकाळ एकरुप छे, त्यारे व्यवहारथी तेनुं अनेक एवुं अन्य रुपे निरुपण होय छे,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अने तेथी ते नयथी थयेलो स्वीकार तेनो निश्चयनय सर्व प्रकारे परिहार करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—ज्यां ज्ञानादि उपयोगनुं स्वभावाश्रीत एवुं शुद्ध परिणमन वर्ते छे, ते निश्चय नयनुं स्वरुप छे, अने ज्यां तथारुप उपयोगनुं पराश्रीत एवुं अशुद्ध परिणमन वर्ते छे, ते व्यवहार नयनुं स्वरुप छे। आवा प्रकारनुं भेदत्वपणुं होवाथी ते उभयात्मक नयोनुं परस्पर प्रतिपक्षीपणुं छे, अने तेम होवाथी निश्चयनयथी परमार्थरुप एवा वस्तु-स्वभावनुं निरुपण त्रीकाळ एकरुपे अवस्थित होय छे, त्यारे व्यवहारनयथी तेनुं निरुपण अन्यरुपे एटले पर निमितजन्य भावना उपचारपणे अनेक प्रकारना दृष्टीभेद कथनथी करवामां आवे छे, अने तेथी तथारुप नयथी थयेलो स्वीकार तेनो निश्चयनय सर्व प्रकारे परिहार करे छे, एटले असत्यार्थरुपे होवानुं दर्शावे छे। तथारुप बोधना विशेप अंतर्मुख सिंचन अर्थे अहिं तेना लक्षणभेदे रहेला तफावतनुं विशेष प्रकारे स्पष्टीकरण करवामां आवे छे।

१—निश्चयनय वस्तुना यथार्थ स्वरुपने ग्रहण करी तेमां पोतानुं एकत्वपणुं प्रदर्शीत करतो होवाथी ते सर्व प्रकारे शुद्धरुप छे, त्यारे व्यवहारनय वस्तुना यथार्थ स्वरुपने अयथार्थरुपे एटले तेने कोई बीजा स्वरुपे ग्रहण करी ते भिन्न द्रव्यमां पोतानुं एकत्वपणुं प्रदर्शीत करतो होवाथी ते सर्व प्रकारे अशुद्धरुप छे।

२—निश्चयनय अनेकांतरुप होवाथी त्यां शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी पर निमित जन्य अशुद्धतानुं मात्र ज्ञायकरुपे जाणवापणुं रहे छे, त्यारे व्यवहारनय एकांतरुप होवाथी त्यां शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी पर निमितजन्य अशुद्धतानुं स्वामित्वभावपुर्वक कर्ता-भोक्तापणुं स्वीकारवामां आवे छे।

३—निश्चयनय पोताना स्वभावीक भावने अवलंबतो होवाथी ते लक्षे अवस्थाजन्य अशुभ राग भावना परित्यागरुप प्रत्याख्यानना विकल्पमां वच्चे शुभ रागभाव आववा छतां स्वभाव अपेक्षा ते पण नास्तिरुप भावनुं हेयरुप नकारपणुं अंतर श्रद्धानमां होवाथी तेनुं पण मात्र ज्ञायकरुपे जाणवापणुं ज रहे छे, त्यारे व्यवहारनय पराश्रीत औपाधिक भावने अवलंबतो होवाथी ते लक्षे अवस्थाजन्य अशुभत्व रागभावना परित्यागरुप प्रत्याख्यानना विकल्पमां वच्चे आवेला एवा शुभ रागभावनुं एकांत उपादेयरुप हकारपणुं मान्यतामां होवाथी तेनुं कर्ताभावे स्वामित्वपणुं स्वीकारे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४—निश्चयनय पोताना स्वभावीक भावने पोतापणे स्वीकारतो होवाथी अने ते लक्षे शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी मलीन के निर्मल उभय बंधोत्पादक विकारजन्य पर्यायना अस्वीकार-पुर्वक उपयोगनी स्व-लक्षे स्थिरता रहेवाथी शुभाशुभ एवा ते उभय भावोनुं शुद्ध-संवरभाव पुर्वक अबंध परिणामे निर्जरवापणुं अने स्व-लक्षे क्रमबद्ध एवी अविकारजन्य निर्मल पर्यायनुं उत्पादकपणुं भावमोक्षमार्गनी सम्यक् स्थिरतापुर्वक थाय छे, त्यारे व्यवहारनय पराश्रीत औपाधिक भावने पोतापणे स्वीकारतो होवाथी अने ते लक्षे शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी मलीन के निर्मल उभय बंधोत्पादक विकारजन्य पर्यायना स्वीकारपुर्वक उपयोगनी पर लक्षे स्थिरता रहेवाथी शुभाशुभ एवा ते उभय भावोनुं एकांत आश्रव भावपुर्वक बंध परिणामीपणुं अने पर लक्षे क्रमबद्ध एवी विकारजन्य मलीन पर्यायनुं उत्पादकपणुं भावसंसारनी वर्द्धमानतापुर्वक थाय छे ।

५—आ प्रमाणे उभय नयमां लक्षणभेदे पुर्व पश्चिम जेटलुं अंतर रहेलुं छे, अने तेथी निश्चयनयने अवलंबनार जीव शुद्ध सम्यकदृष्टी, अनेकांत सेवी, अने शुद्ध-स्वभावमां धर्मना अस्तित्वने श्रद्धनारो होय छे, त्यारे व्यवहारनयने अवलंबनार जीव मिथ्यादृष्टी, एकांत सेवी, अने पुण्यथी धर्म थाय एवी मिथ्या मान्यताने दृढ करनारो होय छे !

६—निश्चयनयने अवलंबनार जीव अंतरात्म भावपुर्वक आत्मार्थ भावनो साधक अने त्रयात्मक शल्यना अभावपुर्वक पुण्य पापना विकारजन्य भावने अने तेना संयोगजन्य उदयने मात्र ज्ञायकरुपे जाणनारो होय छे, त्यारे व्यवहारनयने अवलंबनार जीव बहिरात्मभावपुर्वक मतार्थभावनो उपासक, अने त्रयात्मक शल्यनी मलीनतापुर्वक पुण्य पापना विकारजन्य भावने अने तेना संयोगजन्य उदयने स्वामित्वभावपुर्वक कर्ता-भोक्तापणे सेवनारो होय छे ।

७—निश्चयनयने अवलंबनार जीवने निमित उपादाननी अनुकूल संधीना, अने कार्यकारण भावनो अभिन्नताना वास्तविक बोधनुं सम्यक् भान होवाथी अने ते अनुसार कार्यरुची एवा उपादान कारणनी अंतरंग तैयारी वखते बाह्य निमित कारणनी मात्र औदासीन हाजरी होय, एम स्व-तरफनुं वजन अंतरंग श्रद्धानमां रहेवाथी ते उपादान कारणनी सन्मुखतापुर्वक स्व-लक्षे रही पोताना अंतरंग स्वतंत्र पुरुषार्थना वेगनो पोषक बने छे, अने परिणामे स्व-कार्यनी सिद्धीने पामे छे, त्यारे व्यवहारनयने अवलंबनार जीवने निमित उपादाननी संधीना, अने कार्य-कारण भावनी अभिन्नताना, वास्तविक बोधनुं एकांत मुढत्वपणुं होवाथी अने ते अनुसार कार्यरुची एवा उपादान कारणनी अंतरंग तैयारीनी बेभानतापुर्वक शरिरादि एवी बाह्य अनुकूल सामग्रीथी के

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देव गुर्वादिक निमित कारणना योगथी उत्तरोत्तर पुण्य, पुण्यथी धर्म, अने धर्मथी निर्जरादि थई मोक्ष प्राप्तीरुप एवी स्वकार्यनी सिद्धी थाय, एम पर तरफनुं वजन अंतरंग मान्यतामां रहेवाथी ते उपादान कारणनी विमुखतापुर्वक पर लक्षे रही पोताना अंतरंग स्वतंत्र पुरुषार्थना वेगनो घातक बने छे, अने परिणामे स्व-कार्यनी असिद्धीने पामे छे ।

आ प्रमाणे निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयोमां लक्षणभेदे रहेला तफावतनुं स्वरुप छे, अने ते अनुसार तेने आचरनार जीवमां लक्षणभेदे तफावतनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते पण अवश्य होय छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनु-संधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

तेथी निश्चयनयनो, बोध सत्यार्थ सर्व प्रकार ।
निरुपण व्यवहारनुं, वस्तु दृष्टीए अन्यथा धार ॥
विचारी एम अंतर जे, श्रद्धानमां करे व्यवहार हेय ।
तो साधे शुद्ध स्वभावने ते, निश्चय मुख्य करीने ए ॥९॥

अन्वयार्थ—तेथी निश्चयनयना बोधने सर्व प्रकारे सत्यार्थरुप, अने उपचाररुप एवा व्यवहार निरुपणने अन्यथारुप कहेतां असत्यार्थरुप एम तुं वस्तु-दृष्टीए धार, अने तथारुप-दृष्टीए एम ते बंने नयना बोधने जे जीव अंतरना विषे विचारी पोतानी श्रद्धानमां व्यवहारनयनो आदर थवा छतां, निश्चयथी हेयरुप गणी तेनो अस्वीकार करे छे, ते निश्चयनयनी मुख्यतापुर्वक पोताना शुद्ध स्वभावने साधे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयना बोधने वस्तु-दृष्टीए विचारतां आत्मार्थी जीवने समजाशे के निश्चयनय ए ज मात्र एक आत्मार्थ साधनामां मुख्यरुप छे, अने मुख्यरुप होवाथी स्वरुपपुर्णता पर्यंत निश्चय व्यवहाररुप एवी बाह्यांतर सर्व साधनामां मात्र एक तेनुं ज उपादेय बुद्धीपुर्वक आदरवापणुं रहे छे । तथारुप नयना वास्तविक बोधपुर्वक तेने अव-लंबीत थवाथी पर द्रव्य अने पर निमितजन्य एवा शुभाशुभ रागादि भावोमां जीवनी अनादिकाळथी वर्ती रहेली एवी जे एकत्व बुद्धीरुप श्रद्धाननुं विपर्यात्मकपणुं तेनुं स्व-पर भेदविज्ञानपुर्वक सर्व प्रकारे अभावपणुं थई जाय छे, अने तेम थतां त्यां अबद्धस्पृष्ट एवा अखंड ध्रुवात्मक पदनुं, के शुद्ध अने पुर्ण एवा पोताना ज्ञायकरुप स्वभावनुं स्व-संवेदनरुप एवुं स्वानुभवपणुं शुद्धोपलब्धीपुर्वक प्रगटे छे,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अने क्रमे करी तथारुप नयनी मुख्यतापुर्वक थती एवी ते अंतर्मुख साधनाना बळे शुद्ध ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरतानुं वर्द्धमानपणुं थई जीव स्वरुपपुर्णताने पण पामे छे ।

प्रश्न—कार्यकारणभावना सिद्धांतिक नियमनो दृष्टीए निश्चय साथे तेना संबंधरुप व्यवहारनुं होवुं पण अनिवार्यरुप छे, तेम छतां अहिं वस्तु-धर्मनी प्राप्तीमां के तेनी पुर्णतारुप सिद्धीमां मात्र एक निश्चयनयने ज उपादेयरुप गणी, तेनुं एकांत मुख्यपणुं दर्शाववामां आव्युं छे, तेनो मुळ हेतु शुं छे ?

उत्तर—वस्तु-धर्मने विचारीए तो तेमां कार्यकारणभावनुं अभिन्नपणुं स्वभावीक ज रहेलुं छे, अने तेम होवाथी बंनेनुं सजातीपणुं होवुं पण अनिवार्यरुप छे, अने तेथी निश्चयरुप एवा स्व-धर्मनी प्राप्तीमां के तेनी पुर्णतारुप सिद्धीमां निश्चयरुप एवा स्व तरफ ढळेला ज्ञान साथे ज्ञानरुप व्यवहारनुं के तथारुप एवी ते ज्ञानरुप क्रियानुं अभिन्नपणुं होवाथी बंनेनुं सजातीपणुं पण स्वभावीक ज सिद्ध थाय छे, जेम के हुं शुद्ध ज्ञायकरुप एवो स्वभाव परिणामी आत्मा छुं, तेनुं नाम निश्चय, अने ते अनुसार अंतरंगना विषे ज्ञानादि सम्यक त्रयनी स्थिरता थवारुप के ते अर्थे भेदविज्ञानने अवलंबवा-रुप के ते पुर्वक शुभाशुभ रागादि भावनी सुक्ष्म एवी अंतरसंधीने छेदवारुप, एवा सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमां योजावुं तेनुं नाम व्यवहार, एम निश्चयरुप ज्ञान साथे ज्ञानरुप व्यवहारनुं के तथारुप ज्ञान-क्रियानुं कार्यकारणभावरुप अभिन्नपणुं सजाती स्वरुपे स्वभावीक ज रहेलुं छे, अने ते ज ज्ञानादि सम्यक त्रयनी अभेद स्थिरतारुप एवा भावमोक्षमार्गनी प्राप्तीनो अने ते द्वारा क्रमबद्ध विशुद्ध पर्यायनी अंतरंग श्रेणीपुर्वक केवळज्ञानरुप संपुर्ण वितरागत्वने पामवानो सम्यक् उपाय छे ।

आ उपरथी समजाशे के वस्तुमात्र स्वतंत्ररुप होवाथी, अने ते अनुसार तेनो प्रदेशभेद अने द्रव्यत्वगुणनुं परिणमनभेद रहेवाथी, तेना कार्य-कारणभावनुं अभिन्नपणुं पोत पोताना स्वभावाश्रीत सजाती स्वरुपे स्वभावीक ज रहेलुं छे, अने तेथी प्रत्येक प्रत्येक वस्तुनी कार्य-सिद्धी तेना अभिन्नरुप एवा सजाती कारणथी ज थाय छे, ए कार्य-कारणभावना स्वभावीक नियमनुं उल्लंघन करी, ते अर्थे प्रतिकुल पुरुषार्थ के उपाय योजवामां आवे, अर्थात निश्चयरुप एवा स्व-कार्यनी सिद्धीमां तेना कारणरुप एवो जे परमार्थरुप व्यवहार तेनाथी उपेक्षीत थई ते अर्थे अपरमार्थरुप एवा पराश्रीत व्यवहारनी एकांत मुढताने अवलंबी त्याग वैरागरुप एवां बाह्याचरण साधनो सेववामां आवे, अने ते शुभोपयोगरुप विजाती तत्वोथी निश्चयरुप एवा स्व-धर्मनी के मोक्षमार्गनी प्राप्तीरुप एवी स्व-कार्य सिद्धी इच्छवामां आवे, तो ते सिद्धी पश्चिमने पुर्व मानी गमन करवाना जेम सर्व प्रकारे असिद्धरुप अर्थात निरर्थकरुप ठरे छे। मतलब के ते व्यवहार कार्यसिद्धीना साधकरुप नहिं पण बाधकरुप छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—तथारुप व्यवहार स्वकार्य सिद्धीना बाधकरुप होय, तो जिनागमना विषे तथारुप नयनी मुख्यतापुर्वकनुं कथन अनेक स्थळे जोवामां आवे छे, तेनुं मुळ कारण शुं ? अने त्यां निश्चय नयनी सिद्धीनो उपाय शुं ?

उत्तर—जिनागमना विषे व्यवहारनयनी मुख्यतापुर्वकना कथननो मुळ हेतु व्यवहारनयना विषयभुत एवा पर द्रव्य अने पर निमितजन्य शुभाशुभ रागादि भावो तेनुं आ जीवने मात्र ज्ञान कराववा अर्थे छे, अने तथारुप ज्ञान करवामां स्वपर प्रकाशक एवा ज्ञान गुणनुं मुख्यपणुं होवाथी अने स्वनी अपेक्षाए तेनुं गुणी एवा आत्मा साथे त्रीकाळ एकत्वपणुं रहेवाथी त्यां निश्चयनयनुं मुख्यपणुं होवुं ए स्वभावीक ज सिद्ध थाय छे, अने तेथी तथारुप लक्षे त्यां वर्तवुं ए ज तेनी सिद्धीनो सम्यक उपाय छे।

आ उपरथी समजाशे के स्व-सिद्धीना हेतुरुप एवी सर्व आत्मार्थ साधनामां निश्चयनयनी मुख्यतापुर्वक व्यवहारनयनुं गौणपणे संबंधविशेषरुपे होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने तेथी जिनागमना विषे तथारुप नय विभागना परस्पर भेदरुप कथननी सिद्धी अर्थे कोई स्थळे निश्चयनयनी मुख्यतापुर्वक कथन करवामां आव्युं होय, अने कोई स्थळे व्यवहारनयनी मुख्यतापुर्वक कथन होय, पण ते बंने द्दष्टी-भेदरुप कथनना, परमार्थ हेतुने विचारीए तो ते ए ज के निश्चय अने व्यवहार ए बंने नयो जाणवा योग्य छे, पण स्व-सिद्धी के शुद्धता अर्थे के स्व-धर्मनी उपलब्धी अर्थे आश्रय करवा योग्य तो त्रणे काळना विषे मात्र एक निश्चयनयनुं ज मुख्यपणुं छे, एम वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य छे।

उपरोक्त बोधथी एम अवधारवा योग्य छे के जे जीवना आत्म-परिणामना विषे मात्र एक निश्चयनयनुं ज मुख्यपणुं वर्ते छे, तेने ज आत्मार्थ-साधक कहेवा योग्य छे, अने त्यां ज व्यवहार-नयनो आदर थवा छतां, पण ते प्रत्ये पोतानी अनादरणीय द्दष्टी अंतर-श्रद्धानना विषे होवाथी क्रमे करी तेनुं अभावपणुं पण पुर्ण स्वभाव स्थिरताना बळे थवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

उभय नयना बोधनो, करी साधक मन विचार।
वर्ते अवलंबी शुद्धने, तेनुं नाम अनेकांत धार॥
ते वण केवळ व्यवहार लक्ष, के निश्चयनो ग्रहीने पक्ष।
वर्ते अंतरमां बेभान, एकांत नय तुं तेने जाण॥१०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वयार्थ—उपरोक्त बंने नयना बोधनो जे कोई साधक जीव मनना विषे विचार करी पोते पोताना शुद्ध एवा निश्चयनयने अवलंबीत थई तथारुप लक्षे वर्ते छे, तेनुं नाम अनेकांत एम तुं धार, अने ते विना क्रिया-जडत्वरुप एवा केवळ व्यवहार तरफना लक्षने के शुष्क-ज्ञाननी प्रधानतारुप एवा निश्चयनयना पक्षने ग्रहीने जे अंतरना विषे बेभानपणे वर्ते छे, तेने तुं एकांतनयनुं स्वरुप जाण, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयना बोध परमार्थने जे कोई सुसाधक जीव वस्तु-दृष्टोना प्रधान लक्षे जाणे छे, एटले तथारुप लक्षे तेनो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञानथी करे छे, ते पोतानी अंतर्मुख साधनामां मात्र एक निश्चयनयने मुख्य करी (निश्चयनयना विषयभुत एवा अखंड-आत्मद्रव्य स्वभावमां गुणगुणीनी एकतारुप स्थिरता शुद्ध ज्ञायकभावे करवी ते) तेने अवलंबीत थाय छे, अने तेथी त्यां व्यवहारनयाश्रीत थती एवी शुभोपयोगरुप उपचरित सेवनानुं के व्यवहारनयना विषयभुत एवा परद्रव्य के पर निमितजन्य शुभाशुभ रागादि भावोनुं के स्व द्रव्यनी अपुर्ण अवस्थानुं मात्र ज्ञाता-भावे जाणवापणुं ज रहे छे, अने तेने ज अनेकांतरुप सेवनाना नामथी संबोधवामा आवे छे, ते सिवाय जे कोई साधक जीव तथारुप नयना वास्तविक बोध परमार्थथी परांग-मुख थई मात्र क्रिया-जडत्वरुप एवा एकांत व्यवहारनयने अवलंबीत थाय छे, के शुष्क-ज्ञाननी प्रधानतारुप एवा निश्चयनयना पक्षने ग्रही अंतरना विषे बेभानतापुर्वक वर्ते छे, तेने एकांतनयना नामथी संबोधवामां आवे छे।

आ उपरथी समजाशे के निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयनुं जे साधक जीवने सम्यक्-भान वर्ते छे, ते ज एकांत अनेकांतना वास्तविक बोध परमार्थने समजे छे, अने ते अनुसार ते निश्चय-नयनी मुख्यता पुर्वक थती एवी पोतानी अंतर्मुख साधनात्मक दशामां व्यवहारनयना विषयभुत एवा शुभाशुभ रागादि भावनुं अस्तित्व उदयरुप होवा छतां के थवा छतां पण मात्र तेनो ज्ञाता-भावे स्वीकार करी पोतानी अनेकांत दृष्टोनी ज सिद्धी करे छे, अने ते निश्चयात्मक एवा सम्यकएकांतना हेतुरुप होवाथी क्रमे करी ते द्वारा शुद्ध ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरतानुं वर्द्धमानपणुं करी पुर्ण स्वरुप वितरागत्वने पण पामे छे।

आ प्रमाणे निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयना बोध परमार्थने विचारी जे कोई साधक जीव तेनो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञानथी करशे ते शुद्ध स्वभावथी भिन्न लक्षणरुप एवा व्यवहारनयना विषयभुत सर्व शुभाशुभ भावो प्रत्येनी मोहजन्य आकांक्षानो परिहार करी मात्र एक निश्चयनयनी मुख्यताने एटले तेना विषयभुत एवा शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावने सम्यक् योगे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवलंबीत थशे, अने ते द्वारा ते स्वसिद्धीने पण पामशे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे।
हवे अहिं तथारुप लक्षे साधकनी साधनात्मक प्रवृति संबंधी आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते साथे विशेषे अहिं, भावे भावना एम ते नित्य।
बाह्यांतर निग्रंथदशा, ग्रही पुर्ण पदे थउं स्थित॥
ते लक्षे मुनीलींगनी आंय, भावना वर्ते अंतर मांय।
क्रमे तेनो थई स्वीकार, साधे स्वरुपने ते अनुसार॥११॥

अन्वयार्थ—ते लक्षे अहिं ते साधक जीव बाह्यांतर हुं निग्रंथदशानो स्वीकार करी पुर्ण एवा वितरागत्व पदे स्थित थउं, एम ते विशेष प्रकारे स्वरुप-भावना भावे छे, अने ते लक्षे अहिं तेना अंतर परिणामना विषे मुनीलींगनो भावना पण वर्ते छे, अने ते अनुसार क्रमे तेनो स्वीकार थई ते पोताना स्वरुपने तथा प्रकारे साधे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे जीवने सम्यग्दर्शन थाय छे, तेनुं वास्तविक फल वितरागपणुं होवाथी ते पोताना अंतर परिणामना विषे मुख्यपणे ते ज ध्येयने अवलंबीत होय छे, अने तथारुप ध्येयनी सिद्धीनो वास्तविक उपाय पोते पोताना ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप एवा शुद्ध ज्ञायक स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताने अवलंबीत थवुं ते होवाथी ते पोतानी बाह्यांतर सर्व साधनात्मक प्रवृतिमां मात्र एक पोताना वस्तु-स्वभावने ज मुख्य करी तेना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमां पोतानी विर्यात्मक रुचीना वलणने सम्यक् योगे प्रेरे छे। आवा प्रकारना परमार्थ लक्षने अवलंबीत थयेला उपरोक्त एवा ते स्वरुप-साधक-जीवने पर तरफनी विशेष औदासीनता थतां, ते पोताना मुळ एवा वितराग-चारित्रनी अंतरसिद्धीना हेतुलक्षने मुख्य करी, ते अर्थे बाह्यांतर निग्रन्थदशानी कहेतां मुनीलींगनी भावनानो विकल्प उपस्थित करे छे, अने ते भावनानुं तथारुप लक्षे वर्द्धमानपणुं करी क्रमे ते तेनो स्वीकार पण करे छे, अर्थात् परम उज्जवळ एवी बाह्यांतर निग्रन्थदशाने पामे छे।

प्रश्न—निग्रंथदशानुं वास्तविक स्वरुप जैनत्व-दृष्टीए शुं छे ? अने तथारुप चारित्रनी सिद्धीमां मुख्यपणे कया गुणनी अने कया उदयजन्य दोषना अभावनी अपेक्षा रहे छे ?

उत्तर—जैनत्व-दृष्टीए निग्रंथदशानुं वास्तविक स्वरुप विचारीए तो श्रद्धारुप परणतिनी अपेक्षाए चतुर्दश अभ्यंतर परिग्रहथी अने आचरणरुप परणतिनी अपेक्षाए शरिराश्रीत सर्व वस्त्रना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अभावपुर्वक दश प्रकारना बाह्य परिग्रहथी जे सर्व प्रकारे रहीत छे, ते ज निग्रंथदशानुं वास्तविक स्वरुप छे, अने तेनी सिद्धी थवामां मुख्यपणे ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप एवी निर्मल गुण अवस्था विशेषनी, अने चारित्रमोहनीयना चार चतुष्टय पैकी आदिना त्रण चतुष्टयरुप एवी मलीन उदयजन्य दोष अवस्था विशेषना अभावनी अपेक्षा अवश्य रहे छे। मतलब के ते विना कोई पण प्रकारे निग्रंथ दशा सिद्ध थई शकवा योग्य नथी।

आ उपरथी निग्रंथ शब्दना अर्थमां रहेला एवा तेना मुळ परमार्थने जैनत्व-दृष्टीए विचारीए तो स्पष्ट समजाशे के निग्रन्थ एटले बाह्यांतर जेनी रागद्वेषरुपी ग्रन्थी भेदाई गई छे, शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावमां जेणे पोतानी संपुर्ण अपर्णतानो निश्चयात्मक ध्येय स्थिर कर्यो छे, परद्रव्य अने पर निमितजन्य एवा सर्व शुभाशुभ भावोमां जेनो उपयोग मात्र ज्ञायकभावे वर्ते छे, बाह्यांतर परिग्रहथी जे सर्व प्रकारे शुन्य छे, जिनाशय-सत्श्रुत जेनुं सम्यक्-नेत्र छे, सुक्ष्मबंध-पर्यायजन्य भावोने छेदवानुं प्रज्ञा जेनुं शस्त्र छे, स्याद्वाद-शैलीना अंतर-लक्षपुर्वक सापेक्ष जेनुं कथन छे, सर्व प्रकारनी भोगजन्य आकांक्षाथी रहीत एवुं निस्पृह जेनुं वर्तन छे, अने अनेकांत-दृष्टीना वास्तविक न्यायनी अंतर संधीपुर्वक सम्यक्एकांत एवुं गुप्त जेनुं आचरण छे, एवा परमशुद्ध ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप स्वभाव धर्मना आराधक पुरुषने ज निग्रन्थ के निग्रन्थदशाना धारक एवा परम गुणातीशयरुप नामथी संबोधवा योग्य छे, अने ए ज जैनत्व-दृष्टीए प्रतिपादन थयेला बोधनुं परम एवुं आ कथन छे।

प्रश्न—आवा प्रकारनी निग्रंथदशानी साधनामां दश प्रकारना बाह्य-परिग्रहना त्यागनी अपेक्षा अवश्य रहे छे, पण ते साथे सर्व वस्त्रना त्यागरुप एवी शरिरनी बाह्य नग्न दिगम्बर-अवस्था होवी ज जोइए एम एकांत प्रतिपादन करवानुं अहिं शुं प्रयोजन छे, अने ते जैनत्व-दृष्टीए सिद्ध कई रीते थई शकवा योग्य छे ?

उत्तर—जैनत्व-दृष्टीए बाह्य भोगजन्य एवी जे जे वस्तुओ पोताने ते इष्टरुप होवानी बुद्धी पुर्वक संयोगरुपे टकेली छे, ते ते वस्तुओ प्रत्ये अभ्यंतर पोताने रागरुप मुर्छानुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने तेथी ते रागरुप मुर्छाने अनुकूल एवी ते बाह्य भोगजन्य वस्तुओने परिग्रह ए नामथी ओळखवामां आवे छे, जेमां दश प्रकारना बाह्य परिग्रहनी साथे शरिराश्रीत वस्त्रादिनो पण समावेश थई जाय छे। आम वस्तु-स्थिति होवाथी निग्रंथदशानी सिद्धी पण तथारुप एवी ते जैनत्व-दृष्टीए तथारुप रागभावनी सम्यक् निवृतिपुर्वक समस्त एवा ते बाह्य परिग्रहना त्यागथी ज थाय छे। मतलब के ते विना निग्रंथ-दशा कोई पण प्रकारे सिद्ध थई शकवा योग्य नथी, एम उपरोक्त दृष्टीए वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—जो एम ज होय तो जिनागमना विषे मुर्छाने ज परिग्रह ए नामथी संबोधवामां आवे छे, अने ते दृष्टीए मुर्छा रहीतपणे रखाती एवी बाह्य वस्तुओ विद्यमान छतां, त्यां स्वभावीक ज अपरिग्रह-पणुं ठरे छे, तेनुं केम ?

उत्तर—अभ्यंतर रागरुप मुर्छानुं सर्वथा अभावपणुं होय, अने पोताने अनुकूल एवी बाह्य वस्तुओ संयोगरुपे टकेली होय, एम जैनत्व-दृष्टीए कोई पण प्रकारे सिद्ध थई शकवा योग्य नथी, अने तेथी जिनागमनो ते अर्थ यथार्थ पण नथी। यथार्थ अर्थ शुं छे ? तेनी तत्व-मिमांसा करीए तो सम्यक्दृष्टी जीवना सम्यक्त्वनुं महात्म्य दर्शाववा अर्थे तेनो यथार्थ अर्थ एम सुचन करे छे, के श्रद्धा-रुप परणतिनी अपेक्षाए सम्यक्दृष्टी जीवने बाह्य वस्तुओ प्रत्ये बुद्धीपुर्वक रागरुप मुर्छानुं अभावपणुं होवाथी ते अपेक्षाए त्यां बाह्य वस्तुओ विद्यमान छतां अपरिग्रहपणुं कह्युं छे, अने आचरणरुप पर-णतिनी अपेक्षाए नैमितिक भावरुप एवी पोतानी रागरुप मुर्छाने अनुकूल बाह्य वस्तुओ संयोगरुपे टकेली होवाथी ते अपेक्षाए त्यां परिग्रहपणुं कह्युं छे, एम उभयात्मक दृष्टीए जिनागमना ते अर्थने समजवा योग्य छे। आवा प्रकारनी उभयात्मक दृष्टीनो बोध जे कोई स्वरुप-साधक-जीवने वर्ते छे, ते निग्रंथदशाना वास्तविक स्वरुपने, अने तेनी सिद्धीना सम्यक् उपायने सम्यक् प्रकारे जाणे छे, अने ते अनुसार सम्यक् प्रकारे तेनो आदर पण करे छे।

प्रश्न—तथा प्रकारनी निग्रंथदशानी सिद्धी अर्थे थतो एवो जे शुभोपयोगरुप पंच-महाव्रता-दिनो आदर तेने निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रना हेतुरुप कही शकाय के केम ? जो कही शकाय तो शुभोपयोगरुप एवा ते परावलंबनी साधनथी शुद्धोपयोगरुप एवा वितराग-चारित्रनी प्राप्ती अने पुर्णतारुप सिद्धी असिद्धरुप ठरे छे, अने तेम न कही शकाय तो तथारुप हेतु-सिद्धी अर्थे अपातो एवो जे जिनागमनो उपदेश अने ते अनुसार तेनो करातो आदर तेनुं अन्यथापणुं के निष्फलपणुं ठरे छे, तेनुं केम ?

उत्तर—वस्तुनो परमार्थ विचारीए तो निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी सिद्धी निश्चयरुप एवा आत्माना शुद्ध स्वभावने अवलंबवाथी ज थाय छे, अने तेनी पुर्णता पण ते द्वारा ज पमाय छे, अने तेथी निग्रन्थ-दशानी प्राप्तीमां थतो एवो जे शुभोपयोगरुप पंच-महाव्रतादिनो आदर तेनुं निश्चय-रुप एवा वितराग-चारित्र साथे स्वभाव अपेक्षा विजातीपणुं होवाथी तेने तथारुप चारित्रनी उपलब्धीना हेतुरुप कही शकवा योग्य नथी। आम वस्तु-स्थिति होवा छतां निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनो सिद्धी अर्थे तथारुप चारित्रनी पुर्वे एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवने निग्रन्थदशानी भावनारुप एवा शुभ विकल्पनुं उपस्थितपणुं थाय छे, अने त्यार बाद तथारुप हेतु-सिद्धी अर्थे पंच-महाव्रतादि एवा शुभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विकल्परुप व्यवहार साधननो आदर पण करवामां आवे छे; तेम छतां अस्तिरुप स्वभावमां ते भाव नास्तिरुप होवाथी तथारुप शुभ विकल्पना आश्रये निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी प्राप्ती के तेनी पुर्णतारुप सिद्धी थती नथी, अने ए ज वस्तुनो स्वभाव पोतानुं स्वाश्रीतपणुं सिद्ध करे छे ।

आम वस्तु-स्थिति होवा छतां निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी सिद्धी अर्थे पंच-महाव्रतादि एवां ते शुभ साधननां ग्रहणनो जिनागमना विषे जे उपदेश कर्यो छे, ते कारणमां कार्यना उपचार हेतुनी सिद्धी अर्थे नथी, पण कार्य सिद्ध थये (थया बाद) तेमां कारणत्वनी उपचाररुप सिद्धी नियमा थती होवानुं दर्शाववा अर्थे छे, अने तेथी तथारुप उपदेशनुं अन्यथापणुं के ते अनुसार तेना करातां आदरनुं निष्फलपणुं एम एकांत समजवा योग्य नथी, पण अनेकांत-द्दष्टीए तेना परमार्थने अवधारवा योग्य छे, ते एवी रीते के जे कोई स्वरुप-साधक-जीवने तथा प्रकारना बोधनुं वास्तविक भान अने ते अनुसार निश्चय व्यवहाररुप एवा मोक्षमार्गनुं अनेकांतरुप आचरण वर्ते छे, ते तथारुप भिन्नाभिन्न साध्य-साधन-भावना सम्यक् भानपुर्वक पोते पोताना उपादान कारणने अवलंबी निश्चय मोक्ष-मार्ग-रुप एवा शुद्ध रत्नत्रयात्मक भावोमां ज परिणमे छे, अने ते द्वारा मात्र एक पोताना वितराग-चारित्र-रुप स्वभाव स्थिरतानी ज पुर्णतारुप सिद्धी करे छे । आवा प्रकारनुं ज्यां अनेकांतरुप आचरण वर्ते छे, त्यां निमित कारणनी अपेक्षाए शुभोपयोगरुप एवा ते व्यवहार प्रवर्तनने साधन कहेवा योग्य छे । मतलब के उभय नयना बोधपुर्वक थती साधनानुं यथार्थपणुं छे, अने तेना अभावे अन्यथापणुं छे, एम उपरोक्त बोधथी समजवा योग्य छे ।

आ उपरथी तत्व-शोधक जीव विचारशे तो स्पष्ट समजाशे के जे साधक जीव शुद्धनयना अव-लंबनपुर्वक शुभोपयोगरुप एवी बाह्य व्यवहार साधनानो आदर अकर्ताभावे एटले ते भावोमां पोताना स्वामित्वभावनी नकार-बुद्धीपुर्वक करे छे, त्यां ज सम्यक्द्दष्टीपणुं के शुद्ध आत्मार्थपणुं होवुं घटे छे, अने त्यां ज निमित उपादाननी संधीपुर्वक निश्चय व्यवहाररुप मोक्ष-मार्गनी सिद्धी सम्यक् प्रकारे थई शकवा योग्य छे, एम आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक समजवा योग्य छे ।

प्रश्न—निग्रन्थदशानी प्राप्तीना समये पंच-महाव्रतादि शुभ विकल्पनो आदर थवा छतां जेम तेना आश्रये वितराग-चारित्रनी उपलब्धी थई शकवा योग्य नथी, तेम शरिराश्रीत वस्त्रादिनो त्याग के ते प्रयकरुप थवामां, तथारुप विकल्पनुं तेने आश्रयपणुं छे के केम ? जो छे तो वस्तुनुं पराश्रीतपणुं जैनतत्व-द्दष्टीए असिद्धरुप ठरे छे, अने नथी तो तेनुं कर्तापणुं कोने आश्रये रहेलुं छे ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर—निग्रंथदशानी प्राप्तीना समये पंच-महाव्रतादि शुभ विकल्पनो आदर थवा छतां जेम तेना आश्रये वितराग-चारित्रनी उपलब्धी थई शकवा योग्य नथी, तेम वस्तु-मात्रनुं सदा स्वाश्रीत-पणुं होवाथी तेना आश्रये शरीराश्रीत वस्त्रादिनो त्याग के ते पृथकरुप पण थई शकवा योग्य नथी, अने तेथी तेनुं कर्तापणुं तेना आश्रये एटले ते समये पृथकरुप थवा योग्य एवा ते वस्त्रादिने ज अवलंबीने रहेलुं छे। अहिं ते संबंधी जीव अने पुद्गल कर्मना परस्पर निमित-नैमितिक संबंधने मुख्य करी तेना स्पष्टार्थ बोधनुं निरुपण करवामां आवे छे।

वस्तुना परमार्थने विचारीए तो जीव अने पुद्गल कर्म, ए बंनेनी थती एवी जे परिवर्तनशील अवस्था तेनुं परस्पर निमित-नैमितिकपणुं छे, अने तेम होवाथी जीवनी रागादि-भावरुप एवी एक समयवर्ती अशुद्ध अवस्थाना समये तेना निमितभुत एवा द्रव्य-कषायोनुं पुद्गल-कर्मना विपे उदयरुपे होवुं एम स्वभावीक ज होय छे। आवा प्रकारना निमित-नैमितिक संबंधनुं सम्यक् प्रकारे जाणपणुं जे जीवने सम्यग्दर्शनना बळे प्रगटे छे, ते जीव सम्यग्दर्शननुं वास्तविक फल वितरागपणुं होवाथी जेम जेम ते तथारुप ध्येयने एटले पोताना अस्तिरुप एवा वितराग-स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताने अवलंबतो जाय छे, तेम तेम तथारुप शुद्ध अवस्थाना बळे स्वमां नास्तिरुप एवी रागादि-भावरुप अशुद्धतानुं क्रमे करी अभावपणुं थतुं जाय छे, अने तेम थतां ते रागादि-भावना निमितभुत एवा जे चारित्रमोहनीयना बीजा अने त्रीजा चतुष्टयरुप उदयजन्य कषायो तेनुं पुद्गल-कर्मना विपे क्षायोप-शमीकभावे तेना पोताना कारणे अभावपणुं थई जाय छे, के थतुं जाय छे, अने तेम थतां तेना निमितभुत एवा शरिराश्रीत वस्त्रादिनुं पृथकपणुं पण तेना पोताना कारणे निग्रन्थदशानी प्राप्तीना समये त्यां स्वभावीक ज थई जाय छे, अने तेथी जीवना तथारुप विकल्प साथे पृथकरुप थवा योग्य एवा शरिराश्रीत वस्त्रादिनुं कोई पण प्रकारे संबंधपणुं नथी, पण पुद्गलकर्म साथे परस्पर तेनुं मात्र निमित-नैमितिकपणुं छे, एम जैनत्वद्दष्टीए वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य छे।

आ उपरथी स्पष्टार्थ बोध आत्मार्थी जीवे एम ग्रहण करवा योग्य छे के निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी प्राप्ती अने तेनी पुर्णतारुप सिद्धी निश्चयरुप एवा पोताना वितराग-स्वभावने अवलंबवाथी ज थाय छे, अने ते अनुसार निग्रन्थदशाने संप्राप्त थयेल एवा ते स्वरुप-साधक-जीवनी अंतर्मुख साधनामां निश्चयनयना अवलंबनभुत एवा मात्र एक ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप भावनुं के वितराग भावरुप-चारित्रनुं ज मुख्यपणुं होय छे, अने ते स्वाश्रीत एवो सद्भुत-व्यवहार होवाथी ते स्वरुप पुर्णता पर्यंत एक-सरखो अस्तिरुपे टकीने ज रहे छे, अने पंच-महाव्रतादि एवुं जे अठ्ठावीश-मुळगुण सहीत बाह्य शुभोपयोगरुप साधन ते निमिताश्रीत एवो असद्भुत व्यवहार होवाथी ते स्वरुप-पुर्णता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर्यंत स्वमां नास्तिरुपे मात्र जाणवा योग्य दृष्टीए रहे छे, अने तेने ज अनेकांतरुप साधनना नामथी संबोधवा योग्य छे। तथा प्रकारनी अंतर्मुख साधना उपरोक्त एवा ते स्वरुप-साधक जीवने होवाथी तथारुप लक्षे ते पोताना विकास-क्रमनी वर्द्धमानताने सम्यक्‌योगे अवलंबतो जाय छे, अने ते ज तेना आत्मार्थ जीवनने पुनः पुनः प्रशंशवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथासुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

एम द्रव्यने भावथी, मुनीलींगे विचरे तेह।
योग अने उपयोगथी, सदा अप्रमत्त थई एह॥
त्यां होय परिषह के उपसर्ग, तो पण रहे स्वरुपे अडग।
थई ए छट्ठी अवस्थानी वात, हवे सप्तम बोधुं सुण भ्रात ॥१२॥

अन्वयार्थ—आ प्रमाणे ते साधक-जीव योग अने उपयोगथी सदा अप्रमत्त थई द्रव्यथी अने भावथी मुनीलींगपणे विचरे छे। त्यां अनेक प्रकारना परिषह-उपसर्गादि उदयरुपे होवा के थवा छतां, पण ते स्व-स्वरुपना विषे सदा अडग रहे छे। अहिं सुधी छट्ठी अवस्थानो वात थई, हवे तने सप्तम अवस्था बोधुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे कोई सम्यक्‌दृष्टी जीव ज्ञानादि-सम्यक्त्रयरुप एवा पोताना शुद्ध वितराग स्वभावनी के वितरागरुप चारित्रनी अंतरंग सिद्धी अर्थे बाह्यांतर द्रव्यथी अने भावथी निर्ग्रंथ-दशानी प्राप्तीरुप एवा मुनीलींगनो स्वीकार करे छे, ते जीव तथारुप एवा ते पोताना स्वरुपस्थ-ध्येयनी सिद्धी अर्थे योग अने उपयोगथी निरंतर अप्रमत्तपणे विचरवाना पुरुषार्थ धर्ममां योजाय छे, ए सहज अने स्वभावीक छे। आवा प्रकारनी शुद्ध संवरभावरुप अंतर्मुख स्थिरताने अवलंबीत एवा उपरोक्त सुसाधकनी बाह्यांतर द्रव्यथी अने भावथी एवी परम निग्रन्थदशा होवाथी ते अनुकूल प्रतिकूल परिषह उपसर्गादिना विकट प्रसंगमां पण त्यां पोते पोतानुं स्वरुप-भान टकावी राखे एवुं उत्कृष्ट स्वरुप जाग्रतीपणुं तेने वर्ततुं होय छे, अने ते तथारुप एवी तेनी स्वरुप-साधना तरफ दृष्टी प्रेरतां आत्मार्थी जीवने ते सहज ख्यालमां आवी शकवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं सप्तम अवस्थाना बोध विशेषनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

卐

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(सप्तम बोध अवस्था अधिकार)

सप्तम अवस्थाना विषे, बोध सुर्यनी प्रभा समान।
तेथी उत्कृष्ट भावे अहिं, होय प्रज्ञदशा स्थिर जाण ॥
तेथी अप्रमत्त थईने स्थित, वर्ते स्वरुप ध्यानमां नित्य।
तेथी आ अवस्थानुं नाम, ध्यान प्रीया कहींए निष्काम ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—सप्तम अवस्थाना विषे बोध सुर्यनी-प्रभा-समान एटले जेम सुर्यनो-प्रकाश ताराना-प्रकाश करतां विशेष जोरदार होवाथी विशेष तेज रुपे एक सरखो स्थिर टकी शके छे, तेम सम्यक्ज्ञान दर्शनादिरुप आत्म-बोधनुं अस्तित्व पण अहिं पुर्व अवस्था करतां पण कांईक विशेष शुद्धता अने स्थिरतारुप परिणामे एक-सरखुं टकी शके तेवुं योग्यपणुं तेना विषे होय छे, अर्थात उपलब्धरुप थाय छे, अने तेथी अहिं उत्कृष्ट भावे कहेतां विशेष स्वरुप-एकत्वरुप परिणामे प्रज्ञरुप एवी ज्ञानदशा स्थिरपणे वर्तती होय छे, एम तुं जाण, अने तेथी त्यां ते विशेष अप्रमत्त थईने नित्य स्वरुप-ध्यानमां वर्ते छे, अने तेथी आ अवस्थानुं नाम ध्यान-प्रीया एवुं निष्काम अंतर-योग-वृत्तिपणुं होवानुं कहीए अर्थात कहेवा योग्य छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—वास्तविक एवा स्वरुप-ध्याननी शरुआत वास्तविक एवा आत्म-स्वरुपनी स्व-संवेदनरुप एवी सम्यक्-प्रतिती उपलब्धरुप थये ज थाय छे, अने तथा प्रकारनी थयेली एवी जे स्वरुप-ध्याननी शरुआत ते क्रमे करी स्वरुप-स्थिरतानो, स्वरुप-स्थिरतानी वर्द्धमानतानो, अने अंतिम स्वरुप-स्थिरतानी पुर्णतानो हेतु पण बने छे। मतलब के ते विना एटले वास्तविक एवा आत्म-स्वरुपनी स्व-संवेदनरुप एवी सम्यक्-प्रतिती प्रगट्या विना, वास्तविक एवुं स्वरुप ध्यान के स्वरुपस्थ थवानो ध्यानो पुरुषार्थ होई शके नहिं, एम आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक समजवा योग्य छे।

प्रश्न—ध्यान कोने कहेवामां आवे छे, अने तेना एकंदर केटला भेद छे, अने ते पृथक पृथक भेदनुं वास्तविक स्वरुप शुं छे?

उत्तर—ध्येय वस्तुमां चित्तनी एकतार-वृत्ति थवी तेने ध्यान कहेवामां आवे छे। तेना मुळ चार, अने ते प्रत्येकना पण चार एम एकंदर सोळ भेद छे, ते पृथक पृथक भेदनुं वास्तविक स्वरुप अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(आर्त ध्यान)

कोई पण अशुभ चिंतवनमां चित्तनी एकतारवृत्ति थवी तेने आर्त ध्यान कहे छे, तेना चार भेदनुं स्वरुप निचे प्रमाणे छे।

इष्ट वियोग

पोताने इष्ट मनायेला एवा कोई पण पदार्थना वियोगथी पोताना विषे खेदात्मक परिणाम विशेषनुं उपस्थितपणुं थवुं ते।

अनिष्ट संयोग

पोताने अनिष्ट मनायेला एवा कोई पण पदार्थना संयोगथी पोताना विषे खेदात्मक परिणाम विशेषनुं उपस्थितपणुं थवुं ते।

वेदनाजन्य

शरिरनी व्याधिग्रस्त हालतथी पोताना विषे खेदात्मक परिणाम विशेषनुं उपस्थितपणुं थवुं ते।

निदानजन्य

कोई पण इच्छीत वस्तुनी कामनाथी पोताना विषे संकल्पात्मक परिणाम विशेषनुं उपस्थि तपणुं थवुं ते।

(रौद्रध्यान)

कोई पण हिंसक प्रवृति करवामां के कराने आनंद मानवामां चित्तनी एकतार-वृत्ति थवी तेने रौद्रध्यान कहे छे, तेना चार भेदनुं स्वरुप निचे प्रमाणे छे।

हिंसानंद

भावपुर्वक कोई जीवनी हिंसा करी के करावी पोताना विषे हर्ष-विशेष परिणामनुं उपस्थित-पणुं थवुं ते।

मृषानंद

भावपुर्वक मृषाभाषण करी के करावी पोताना विषे हर्ष-विशेष परिणामनुं उपस्थितपणुं थवुं ते।

चौर्यानंद

भावपुर्वक पराई वस्तुनी चोरी करी के करावी पोताना विषे हर्ष-विशेष परिणामनुं उपस्थितपणुं थवुं ते।

परिग्रहरक्षणानंद

भावपुर्वक दश प्रकारना बाह्य परिग्रहना रक्षणार्थे अनेक प्रकारनी योजनाओ करी के करावी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेनी आबादी टकावी राखवारुप एवा पोताना विषे हर्ष-विशेष परिणामनुं उपस्थितपणुं थवुं ते ।

(धर्म ध्यान)

परम एवा पोताना शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मनी प्राप्तीना के तेनी अंतर-स्थिरताना हेतु-लक्षने अवलंबी तेना सम्यक्‌रुप चिंतवनमां चित्तनी एकतार-वृत्ति थवी तेने धर्म-ध्यान कहे छे, तेना चार भेदनुं स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

आज्ञा विचय

शुद्ध आत्म-धर्मनी प्राप्तीना वास्तविक ध्येयपुर्वक वास्तविक एवा श्री जिनाशय-तत्त्वार्थ-बोधने सन्मुख-भावे अवलंबीत थवारुप, के ते अर्थे प्रत्यक्ष एवा कोई सद्‌गुरुनी आज्ञाने अनुसरवारुप एवी निज आत्मार्थ विचारणानुं उपस्थितपणुं थवुं ते ।

अपाय विचय

आ जीव अस्ति-नास्तिरुप भावना वास्तविक भेदविज्ञानना अभावे अनादि-काळथी एकांत पराश्रीत लक्षे असीम एवी दुःखरुप परिस्थितिने अनुभवी रह्यो छे, एम सम्यक् प्रकारे विचारवुं ते ।

विपाक विचय

साता असाता के सुख दुःखादिरुप एवी जे आ वर्तमान विपाकोदय जन्य परिस्थिति ते मात्र जीवना पुर्वपार्जीत अज्ञाननुं फल छे, एम सम्यक् प्रकारे विचारवुं ते ।

संस्थान विचय

आ जीव अनादि-काळथी पोतानी विपर्यात्मक बुद्धीने वश थई षट्-द्रव्यात्मक एवा आ लोकना विषे तेनी दशे दिशामां पर्यटन करी रह्यो छे, एम सम्यक् प्रकारे विचारवुं ते ।

(शुक्ल ध्यान)

केवळ आत्मस्वरुपना अंतर्मुख-चिंतवनमां चित्तनी एकतार-वृत्ति थवी तेने शुक्ल-ध्यान कहे छे, तेना चार भेदनुं स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

पृथकत्व–सवितर्क

ज्ञानादि सम्यक्‌त्रयनी विशेष अंतर्मुख स्थिरताना हेतुरुप एवा सुक्ष्म भावश्रुतनी विचारणाने अवलंबीत थई स्व द्रव्य-गुण-पर्यायनुं विशेष प्रकारे स्वरुप-विज्ञान करवुं ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकत्व-सवितर्क

ज्ञानादि सम्यक्त्रयनी पुर्ण स्थिरताना हेतुरुप एवा स्व द्रव्य-गुण-पर्यायनुं सर्वथा अभेद-परिणामीपणुं थवुं के करवुं ते।

सुक्ष्मक्रिया-प्रतिपाति

योगनी परिस्पंदनरुप क्रियाना निग्रहरुप एवी सुक्ष्म काय-योगनी अवलंबनरुप क्रिया, त्रयोदश गुणस्थानकनी पुर्णाहुतीना समये थवी ते।

व्युपरतक्रिया-निवर्ती

योगनी परिस्पंदनरुप क्रियाना पुर्ण निग्रहरुप एवुं सर्वथा स्वभाववर्तीपणुं अयोगी गुणस्थानकना विषे थवुं ते।

आ प्रमाणे ध्यानना मुळ चार अने ते प्रत्येकना पण चार एम एकंदर सोळ भेद छे. तेमां आर्तध्यान, अने रौद्रध्यान, एवा जे आदिना बे भेद ते हेयरुप होवाथी त्यागवा योग्य छे, अने धर्मध्यान अने शुक्लध्यान, एवा जे अंतना बे भेद ते उपादेयरुप होवाथी आदरवा योग्य छे। तथारुप ध्यानना अंतिम एवा बे चार भेद तेना प्रथक् प्रथक् स्वरुपने, अने गुणस्थानननी दृष्टीए तेनी स्थिरताना अनुक्रमने विचारीए तो शुक्लध्याननो एवो जे प्रथमनो भेद ते वितर्क अने वीचार एम बंनेना सद्भावपुर्वक होय छे, अने ते उपशम-श्रेणीनी अपेक्षाए आठमाथी अग्यारमां गुणस्थान पर्यंत अने क्षपकश्रेणीनी अपेक्षाए आठमाथी दशमा गुणस्थान पर्यंत टके छे। बीजो भेद वीचार रहीत मात्र वितर्कना सद्भावपुर्वक सर्वथा अचळरुप होय छे अने ते बारमा गुणस्थानना अंतपर्यंत टके छे। त्रीजो भेद योगनी परिस्पंदनरुप क्रियाना निग्रह-हेतुरुप होय छे, अने ते सयोगी केवली एवा त्रयोदश गुणस्थानना अंतिम भागथी शरु थई तेनी पुर्णाहुती पर्यंत टके छे, अने चोथो भेद योगनी परिस्पंदनरुप क्रियाना पुर्ण निग्रहरुप होय छे, अने ते अयोगी-केवली एवा चतुर्दश गुणस्थानना अंतिम समय पर्यंत टकीने त्यां समयमात्रमां पुर्णवितरागत्व-पदने पामेल एवा ते अरिहंत-प्रभु उर्ध्वगमन करी सिद्धालयना विषे सिद्धपदे स्थिर थाय छे।

प्रश्न—वितर्क अने वीचार ए बंनेमां लक्षण-भेदे शुं तफावत रहेलो छे, अने तथारुप ध्यान सुक्ष्म एवुं अंतर-श्रेणीरुप होवा छतां तेने (शुक्लध्यानना पहेला भेदने) वीचारना सद्भावपुर्वक कहेवानुं अहिं शुं प्रयोजन छे ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर—वितर्क अने वीचार ए बंनेमां लक्षणभेदे रहेला तफावतने विचारीए तो श्रुतज्ञानना सुक्ष्म एवा अंतर्मुख उपयोगने वितर्क ए नामथी संबोधवामां आवे छे, अने तथारुप उपयोगनी निश्चल एवी अंतर्मुख-स्थिरता थवाना पुर्वे त्यां ध्यानस्थ-दशामां वर्तती एवी जे अर्थ, व्यंजन के योग संक्रातिरुप क्रिया तेने वीचार ए नामथी संबोधवामां आवे छे।

आ प्रमाणे वितर्क अने वीचारमां लक्षण-भेदे रहेला तफावततुं स्वरुप छे। हवे अहिं तथारुप ध्यानने वीचारना सद्भावपुर्वक कहेवानुं शुं प्रयोजन छे, ते संबंधी विचारीए तो तथारुप ध्याननी निश्चल एवी अंतर्मुख स्थिरता न होवाना लीधे उपर कह्या प्रमाणे त्यां अर्थ, व्यंजन के योग-संक्रांति-रुप-क्रियानुं सद्भावपणुं अवश्य होय छे अने ते ज हेतुनी प्रधानरुप दृष्टीए शुक्ल-ध्यानना पहेला भेदने वितर्क अने वीचारमां सद्भावपुर्वक होवानुं जिनागमना विषे प्रतिपादन करवामां आव्युं छे।

आ उपरथी स्पष्ट समजाशे के वीचाररुप परिणामनी प्रधानरुप दृष्टीए एवा ते साधक जीवने एवो एक पण विचार अहिं उदयरुपे होतो नथी, अने तेथी तेने निर्वीकल्प ध्यानदशा कहेवी ए ज यथार्थरुप छे। आवी यथार्थरुप ध्यानदशा होवा छतां अहिं ते साधक-जीवना अंतरलक्ष्मां न आवी शके तेवी अति-सुक्ष्म अर्थ-संक्रांतिरुप एटले स्वरुपध्याननी अंतर्मुख-श्रेणीमां द्रव्य के पर्याय तरफना चिंतवननुं परिवर्तनशीलपणुं थवुं ते। व्यंजन-संक्रातिरुप एटले श्रुतना कोई एक अवलंबनरुप वचननुं बीजा वचनरुपे परिवर्तनशीलपणुं थवुं ते, अने योग-संक्रांतिरुप एटले मनादि योगनुं ग्रहण त्यागरुप परिवर्तनशीलपणुं थवुं ते। एम अनेक प्रकारनी सुक्ष्म-क्रियानुं अस्तित्व सर्वज्ञ-भगवानना ख्यालमां आवी शके तेवुं त्यां वर्ततुं होवाथी शुक्ल-ध्यानना तथारुप पहेला भेदने ते रुपे कहेतां वितर्क अने वीचारना सद्भावपुर्वक होवानुं संबोधवामां आव्युं छे, अने बीजा भेदमां तथारुप एवी ते अर्थ-संक्रांति आदिरुप क्रियानुं अभावपणुं थई स्वरुपस्थ-ध्याननुं परम निश्चल परिणामरुप स्थिरतापणुं थवाथी त्यां मात्र वितर्कनुं ज सद्भावपणुं होय छे, अने ए ज शुक्ल-ध्यानना आदिना बे भेदमां ध्याननी तारतम्यरुप अवस्था-भेदे रहेलुं तफावतपणुं छे।

आ प्रमाणे शुक्लध्यानना एकंदर चार भेदना स्वरुपनी आत्मार्थी जीवे पुनः पुनः तत्व-मिमांसा करवा योग्य छे। तथा-प्रकारना ध्यान-विशेष बोधनुं सम्यक्-जाणपणुं उपरोक्त एवा ते सुसाधकने होवाथी ते तथारुप लक्षे तथारुप एवा ते स्वरुप-ध्यानना पुरुषार्थने सम्यक्-योगे अवलंबतो जाय छे, अने तेथी अहिं तेनी अप्रमत्त उपयोगे स्थिरता विशेष प्रकारे होवी के थवी ए सहज अने स्वभाविक छे, अने ते हेतुथी उपरोक्त अवस्थाने ध्यान-प्रीया एवुं निष्काम-अंतरयोग-वृत्तिपणुं होवानुं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दर्शावी, तेने तथाप्रकारना परम अलंकृत नामथी संबोधवामां आवेल छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा-सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

स्वानुभवरुप सुखनो, अहिं होय परम आह्लाद।
तेथी त्रैलोक सुख ते, तृणवत गणी करे बाद॥
एवुं स्वानुभवनुं सुख, ध्यानतणुं समजावुं शुं मुख।
करी शकुं नहिं वर्णन ते, स्वानुभवे समजाशे ए॥२॥

अन्वयार्थ—अहिं स्वानुभवरुप एवा पोताना स्वाश्रीत स्वभाव-सुखनो तेने परम आह्लाद कहेतां सहजानंदपणुं वर्ततुं होयछे, अने तेथी ते पराश्रीतरुप एवा त्रण-लोकना सुखने पण तृणवत् गणी बाद करे छे। आवुं जे ध्यानस्थ दशारुप स्वानुभवतुं सुख छे, तेनुं वर्णन वचने करी कोई पण प्रकारे थई शकवा योग्य नथी, एटले ते हुं तने मुखवडे करीने शुं समजावुं, अर्थात् ते तने स्वानुभवे ज समजाशे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मा ए अनंत-धर्मात्मक-वस्तु होवाथी तेना विषे जेम जोवा-जाणवारुप गुणोनुं अस्तित्व वर्ती रहेलुं छे, तेम सुखगुणनुं अस्तित्व पण तेना विषे त्रिकाळ एकरुपे रहेलुं छे, ते सुख गुणनी अवस्था अनादिकाळथी जीवना पर्यायाश्रीत लक्षथी विकाररुपे परिणमेली होवाथी तथारुप एवो ते सुख-गुण पोताना विषे छे, एवी वास्तविक प्रतिती जीवने आज-पर्यंत स्फुरायमान थई नथी। आवा प्रकारना बोध-श्रवणनो सुयोग कोई आत्मार्थी-जीवने थतां, ते तथारुप बोधने आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक अवधारी पोताना चैतन्यात्मक स्वभावनी सर्वांग समाधानीने पामे छे, अर्थात् ते जीव सम्यक्द्रष्टी थाय छे। आवा सम्यक्द्रष्टी जीवने पोताना चैतन्यात्मक स्वभावनुं सम्यक्-जाणपणुं होवाथी ते तथारुप सुखगुणना हेतुभुत एवी ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप स्वभाव-स्थिरतानी सिद्धी मात्र एक पोताना स्वरुप ध्यानथी ज करे छे, अने ते ज स्वरुप-ध्यानथी उत्पन्न थयेलुं एवुं ज परम आह्लादरुप स्वानुभवनुं सुख तेना स्व-संवेदनने ते आस्वादे पण छे।

आ प्रमाणे उपरोक्त एवा ते सुसाधक जीवने पोताना स्वरुप--ध्यानथी उत्पन्न थयेलुं एवुं जे पोतानुं स्वानुभवरुप स्वाश्रीत सत्-सुख तेना परम आह्लादनी वास्तविक एवी तत्व-मिमांसा पोताना स्व-सन्मुख उपयोगे थतां ते पराश्रीत रुप एवा त्रण-लोकना सुखने पण तृणवत गणी बाद करे, एटले समस्त एवा इंद्रियजन्य मिथ्या कल्पनात्मक-सुखनुं पोताने जे कांई पुर्वे महात्म्य भासतुं हतुं ते स्वभाव

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिणामरुप एवां पोताना स्वाश्रीत सत्-सुखना अनुभवे करी तेनुं सर्व प्रकारे तुच्छपणुं भासे ए सहज अने स्वभावीक छे, अने ए ज स्वरुप-ध्यानथी उत्पन्न थयेला परम एवा ए आह्लादनुं प्रत्यक्ष एवुं आ फल छे, अने ए ज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

स्वरुप--ध्याननी अंतरे, थाय वृद्धी विशेषे जेम।
अप्रमत्त भावे स्थिरता, पामे विशेष साधक तेम॥
तेथी प्रगटे विशेष आंय, प्रज्ञ-दशा शुद्ध अंतर-मांय।
स्वरुप–ध्याननुं एवुं जाण, फल तुं अंतरमां सुजाण ॥३॥

अन्वयार्थ— अहिं जेम जेम अंतरना विषे स्वरुप-ध्याननी वृद्धी विशेष प्रकारे थती जाय छे, तेम तेम अप्रमत्त-भावे स्थिरता पण ते स्वरुप-साधक-जीव विशेष प्रकारे पामतो जाय छे, अने तेथी अहिं अंतरना विषे परम-शुद्ध एवी प्रज्ञ-दशा कहेतां निर्मल-ज्ञान-अवस्था विशेष प्रकारे प्रगटे छे, एवुं स्वरुप-ध्याननुं फल हे सुजाण शिष्य, तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ— स्वरुपध्यानने अवलंबीत एवा सर्व कोई निग्रंथ महात्माओनो अंतर्मुख ध्येय के पोतानो वास्तविक लक्ष क्रमे-क्रमे स्वभाव-स्थिरतानी वर्द्धमानतानो, अने तेनी पुर्णतारुप सिद्धीनो ज होय छे, अने तेम होवाथी जेम जेम तेवा स्वरुप-साधक-जीवनुं तथारुप एवा पोताना स्वरुप-ध्यानमां पोतानुं एकतारपणुं थतुं जाय छे, तेम तेम स्व-स्वरुपना विषे उपयोगनी अप्रमत्त-स्थिरता पण ते विशेष प्रकारे पामतो जाय छे, अने तेथी अहिं अंतरंगना विषे परम उज्जवळ एवी प्रज्ञ-दशा कहेतां निर्मल ज्ञान-अवस्था तेने विशेष प्रकारे प्रगटे छे, अने ए ज स्वरुप-ध्यानना सन्मुखवर्ती वलणनुं स्वभाव स्थिरता रुप के निर्मल-ज्ञान-अवस्थानी उपलब्धीरुप प्रत्यक्ष एवुं आ फल छे।

आ उपरथी तत्वशोधक-जीवने स्पष्ट समजाशे के स्थिरता ए वस्तुनो स्वभाव होवाथी वस्तुने जाण्या पछी स्थिरतानो प्रश्न रहतो नथी, एटले स्थिरता केम करवी एम तेना उपायनी शोध करवी पडती नथी, पण ते अर्थे स्व-तरफ विर्यात्मक-रुचीना वलणनुं उल्लसवापणुं अने निरंतर तथारुप पुरुषार्थमां विर्योत्साहपणुं ते ज मात्र एक परम एवा ते सम्यक्दृष्टी-जीवना अंतर-परिणामना विषे होय छे, अने ते ज लक्ष उपरोक्त एवा ते स्वरुप-साधक-जीवनो होवाथी ते तथारुप लक्षे तथारुप स्वरुप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ध्याननी अंतर्मुख साधनाने निरंतर सम्यक् योगे अवलंबतो जाय छे, अने ते द्वारा स्वभाव स्थिरतानी वर्द्धमानताने पण पामतो जाय छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा-सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

स्वचित अहिं कषायनो, थतां उदय विचारे मन।
हुं छुं शुद्ध चैतन्यमय, मात्र ज्ञाता ते भावोथी भिन्न ॥
अवलंबतां एम अस्ति स्वभाव, नास्ति-भावनो थाय अभाव।
स्वरुप-पुर्ण थवा सुखरुप, साधे अंतर एम स्वरुप ॥ ४ ॥

अन्वयार्थ—क्वचित अहिं उदयनी जबरजस्तिथी कषायजन्य-भावनुं स्फुरवुं थतां ते मनना विषे एम विचारे छे के ते परजन्य भावथी भिन्न एवो हुं मात्र ज्ञायक-स्वभावरुप शुद्ध-चैतन्य-घन आत्मा छुं, एम पोताना अस्तिरुप स्वभावने अवलंबीत थतां, त्यां नास्तिरुप एवा ते परजन्य भावनुं सहज अभावपणुं थई जाय छे, एम पुर्ण-स्वरुप वितरागत्वनी सिद्धी अर्थे ते स्वरुपसाधक जीव पोताना अंतर-परिणामना विषे सत्-सुखामृतरुप एवा पोताना स्वरुपने साधे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे कोई स्वरुपसाधक जीव पोतानी स्वरुप-साधनाने अवलंबीत थाय छे, तेनुं पोताना विषे अत्यन्त एवुं स्वरुप-जाग्रतीपणुं होवा छतां, क्वचित उदयनी जबरजस्ति थी त्यां कषाय-जन्य-भावनुं स्फुरवुं थाय छे, तेवा समये ते सुसाधक पोते पोताना शुद्ध ज्ञायक-स्वभावना अंतर्मुख-लक्षे ते परजन्य विकारनुं भेदविज्ञान करी मनना विषे एम विचारे छे के वर्तमान-काळे उदयरुपे द्रश्यमान थता एवा जे आ रागादि भावो ते पुर्वे अज्ञानात्मक-भावरुप एवा अशुद्धोपयोगनुं निमित पामीने बंध-परिणामी थयेल तेनो आ मात्र विकार छे, एम पोताना अस्तिरुप स्वभावने अवलंबीत थई विचारतां त्यां नास्तिरुप एवा ते परजन्य भावनुं सहज अभावपणुं एटले अबंध परिणामे निर्जरवापणुं थई जाय छे, अने ए रीते पोताना पुर्ण-स्वरुप-वितरागत्वनी सिद्धी अर्थे एवो ते स्वरुप-साधक-जीव पोताना अंतर-परिणामना विषे सत्-सुखामृतरुप एवा पोताना स्वरुपने साधे छे।

प्रश्न—मात्र उदयनी जबरजस्तिथी कषायादि भावोनुं स्फुरवुं के ते भावोमां परिणमवापणुं थतुं होय तो वस्तुस्वभाव निर्पेक्ष होवानुं एवुं जे जिनागमनुं कथन ते असिद्धरुप ठरे छे, तेनुं केम ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर—उदयनी जबरजस्तिथी कषायादि भावोनुं स्फुरवुं के ते भावोमां परिणमवापणुं थाय छे, तेनो अर्थ उदय कर्म जीवने बळात्कारथी ते भावोमां प्रेरीत करे छे, तेम नथी, पण जीवनी दृष्टी पोताना पुरुषार्थनी दुर्बलतानां लीधे निमिताधीन थवाथी तेम थाय छे, एम निमितनुं ज्ञान कराववा अर्थे ते कथन छे, एम तेना वास्तविक अर्थने अनेकांत-न्यायथी समजवा योग्य छे, अने ते समजने अवधारतां वस्तुस्वभाव निर्पेक्ष होवानुं एवुं जे जिनागमनुं कथन तेनी पण त्यां सिद्धी थई शकवा योग्य छे।

प्रश्न—अहिं उपरोक्त निमिताश्रीत कथनने गौण करी, मुख्य एवा जीवना उपादान तरफ दृष्टी प्रेरी विचारीए तो, ते दृष्टीए सम्यक्दृष्टी जीवनुं कषायादि भावोमां थतुं परिणमन तेनो मुळहेतु शुं छे?

उत्तर—तथारुप-दृष्टीए विचारीए तो ते समयनी एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवनी तथा प्रकारनी एटले पोताना चारित्र-गुणनी पर्यायजन्य योग्यतानुं ज कारण छे, अर्थात् श्रद्धा-गुणनो निर्मल-पर्यायनी अपेक्षाए ते सम्यक्दृष्टी जीवने कषायादि भावोमां परिणमवानी भावना किंचित मात्र पण होती नथी, पण चारित्र-गुणनी पर्यायनुं तथाप्रकारे निर्मलत्व नहीं होवाथी तेनुं तथाप्रकारना कषायादि भावोमां पोतानी ते समयनी परिणमवा योग्य योग्यतानुसार सहज स्वतन्त्ररुपे परिणमवुं थाय छे, अने ए ज वस्तुस्वभाव पोतानुं निर्पेक्षपणुं होवानुं सिद्ध करे छे।

प्रश्न—जो एम ज होय तो तथारुप योग्यतानी यावत्-स्थिति-पर्यंत तथाप्रकारना कषायादि भावोने रोकवानुं के ते रुपे नहीं परिणमवानुं एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवथी पोतानी स्वरुप-जाग्रती होवा छतां पण शी रीते बनी शके? अने पोतानी स्वरुप प्रगति पण शी रीते करी शके?

उत्तर—सम्यक्दृष्टी जीव तथारुप कषायादि भावोने रोकवा जो के समर्थ नथी, पण ते रुपे नहीं परिणमवा पोते पोतानी स्वरुप-जाग्रतीना बळे त्रीकाळ समर्थ छे, अने ए ज पोताना स्वभावाश्रीत रहेलो एवो जे स्वरुप-प्रगतिनो मार्ग ते त्रीकाळ अबाधित होवानुं सिद्ध करे छे, तेना स्पष्टार्थ बोधनुं विशेष प्रकारे निरुपण निचे प्रमाणे छे।

जे जीवने सम्यग्दर्शन थाय छे, तेने वस्तुमात्रनो पोत-पोताना स्वतंत्र स्वभावने अवलंबीने थती एवी जे तेनी क्रमबद्ध-अवस्था, तेनुं वास्तविक निर्णयात्मकपणुं पोताना ज्ञानविशेष उपयोगमां नियमा सम्यक्ज्ञानपुर्वक होय छे, अने तेथी ते पोतपोतानी योग्यतानुसार थती एवी प्रत्येक प्रत्येक समयनी स्वतन्त्र पर्यायनो स्वीकार पोते पोताना अक्रमरुप एवा सामान्य द्रव्यस्वभावने अवलंबीत थई करे छे। आवा प्रकारनो स्वीकार पोताने पोताना सम्यक्ज्ञानपुर्वक होवाथी एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवनो लक्ष पर्याय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जन्य अपुर्ण अवस्था प्रत्ये निरंतर गौणरुपे ज रहे छे, अने ते गौणरुपे रहेलो लक्ष, प्रधान एवा ज्ञाता-स्वभावना परिणमनरुप होवाथी त्यां प्रत्येक प्रत्येक पर्यायनुं पोत पोतानी योग्यतानुसार पोत पोतानुं स्वतंत्र परिणमन थवा छतां, क्रमे ते प्रतिसमयनुं विकारात्मक परिणमन मंद-मंदतररुपे थवुं ए सहज अने स्वभावीक छे, अने ए ज तेना अभावनो अने जीवना स्वरुप-प्रगतीरुप मार्ग-विकासनो अबाधित हेतु सिद्ध थई शकवा योग्य छे।

आ उपरथी स्पष्ट समजाशे के सम्यक्दृष्टी जीव कषायादि भावोने रोकवा समर्थ नथी, पण ते रुपे नहीं परिणमवा पोते पोतानी स्वभाव-पुर्ण दृष्टीना बळे त्रीकाळ समर्थ छे। आवा प्रकारनी पोतानी स्वभावपुर्ण-दृष्टीनी एकत्वरुप स्थिरतामां निरंतर विर्यात्मक-रुचीनुं वलण रहेवाथी उपरोक्त एवी जे चारित्र-गुणनी रागादि-रुपे परिणमवा योग्य, पर्यायजन्य योग्यता तेनुं तथारुप दृष्टीना बळे उपर कह्या प्रमाणे प्रतिसमय क्रमथी परिक्षीणपणुं थतुं जाय छे, अने ते ज क्रमथी पुर्ण-स्वरुप-वितरागत्वने पण पमाय छे, अने ए ज एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवना सम्यक्ज्ञानपुर्वक थयेला एवी वस्तु मात्रनी क्रमबद्ध-अवस्थाना वास्तविक निर्णयनुं प्रत्यच एवुं आ फल छे।

आ उपरथी एम समजवा योग्य छे के जे जीव वस्तुमात्रनी क्रमबद्ध अवस्थानो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञानस्वभावने अवलंबीत थई करे छे, ते ज पोताना अस्तिरुप स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताना बळे नास्तिरुप एवा सर्व रागादि-भावोनो अभाव सम्यक् प्रकारे करे छे, अने ते उपरोक्त एवा स्वरुपसाधक जीवनी वर्ती रहेली परम एवी ज्ञानदशा तरफ दृष्टी प्रेरी विचारतां आत्मार्थी जीवने ते सहज ख्यालमां आवी शकवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

समजाशे आथी तने, प्रगटी स्वरुपनो सुविवेक।
अस्तिने जाण्या विना, नास्ति-भाव न निवृते एक ॥
अस्तिनुं स्फुरे सुभान, क्रमे निवृति तेनी जाण।
थई ए सप्तम अवस्थानी वात, हवे अष्टम बोधुं सुण भ्रात ॥५॥

अन्वयार्थ—आ उपरथी तने स्वरुपनो परम सद्विवेक स्फुरी समजाशे के अस्तिरुप एवा पोताना स्वभावने जाण्या विना, नास्तिरुप एवा एक पण विभाव-भावनी निवृति थई शकती नथी। ज्यारे जीवने पोताना अस्तिरुप स्वभावनुं सु कहेतां साचुं भान स्फुरे छे, त्यारे नास्तिरुप एवा ते

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विभाव भावोनी त्यां क्रमे करी निवृत्ति थई जाय छे, एम तुं अंतरना विषे जाण। अहिं सुधी सातमी अवस्थानी वात थई, हवे तने अष्टम अवस्था बोधुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—अस्ति अने नास्ति ए उभयनुं परस्पर प्रतिपक्षीपणुं छे, अने प्रतिपक्षीपणुं होवाथी अस्तिमां नास्तिनुं अने नास्तिमां अस्तिनुं अभावपणुं होवुं ए स्वभावीक ज सिद्ध थाय छे। आम वस्तुस्थिति होवाथी अस्तिरुप एवा पोताना शुद्ध स्वभावने जाण्या विना, एटले तेनो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञानथी कर्या विना, देहादि पर-द्रव्य अने पर निमितजन्य एवा शुभाशुभ रागादिभावो जे पोताना अस्तिरुप शुद्ध स्वभावना विषे नास्तिरुप कहेतां अभाव स्वरुप छे, एम तेनो वास्तविक निर्णय थई शके नहिं, अने तथाप्रकारना निर्णय विना देहादि परद्रव्यनी स्वथी प्रथक्तापुर्वक नास्ति-रुप एवा ते शुभाशुभ रागादि भावोनुं अंशे पण निवृतिपणुं होई शके नहिं। आवा सिद्धांतिक नियमने अवलंबी उपरोक्त सुत्रमां एम प्रतिपादन करवामां आव्युं, के अस्तिरुप एवा पोताना शुद्ध स्वभावने जाण्या विना, नास्तिरुप एवा एक पण रागादिभावनी निवृत्ति थई शकती नथी, अने थई शकती नथी एम आ बोध विशेष कथन सिद्ध थतां, ते साथे ए पण सिद्ध थयुं के अस्तिरुप एवा पोताना स्वभावने जाण्या पछी एक पण नास्तिरुप एवा रागादिभावनुं अस्तित्व पोताना विषे एटले पोतानी श्रद्धारुप परिणतिनी अपेक्षाए सर्वथा अने आचरणरुप परिणतिनी अपेक्षाए क्रमथी टकी शकतुं नथी, एवा एक सिद्धांतिक नियमनुं निश्चया-त्मकपणुं थयुं। आवा प्रकारना निश्चयात्मक बोधनी अंतर-स्थिरतापुर्वक जे कोई जीवने पोताना अस्ति-रुप स्वभावनुं सम्यक्रुप एवुं साचुं भान स्फुरे छे, ते जीवना अंतर-परिणामना विषे तथारुप भाव-विशेषनुं बळवतरपणुं अस्खलित परिणामे रहेवाथी चारित्रगुणनी पर्यायजन्य योग्यतानुसार उपस्थित थता के थवा योग्य एवा सर्व नास्तिरुप रागादिभावोनुं क्रमे क्रमे मंद परिणामीपणुं थई तेनी सर्व प्रकारे सहज निवृति थई जाय छे, एम उपरोक्त सुत्रमां पुनः प्रतिपादन करवामां आव्युं, ते आत्मार्थी जीवे विशेष आत्मार्थ सद्विवेक पुर्वक अवधारवा योग्य छे।

आ उपरथी तत्वशोधक जीवे एम निश्चय करवा योग्य छे, के पर-निमित-जन्य एवा जे रागादिभावो ते अस्तिरुप एवा पोताना शुद्ध द्रव्य-स्वभावमां नास्तिरुपे होवाथी तेनो थतो के करातो त्याग, ते पोताना अस्तिरुप एवा शुद्ध द्रव्य-स्वभावने जाण्या विना के तेनुं वास्तविक भान प्रगट्या विना, स्वने उपकाररुप किंचित मात्र पण थई शकवा योग्य नथी, एम वस्तुना परमार्थने सम्यक् प्रकारे अवधारवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं अष्टम अवस्थाना बोधविशेषनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(आठमी बोध अवस्था अधिकार)

अष्टम अवस्थाना विषे, बोध चंद्रनी प्रभा समान ।
सर्वोत्कृष्ट भावे अहिं, होय प्रज्ञदशा स्थिर जाण ॥
शुद्ध पारिणामीक तेथी मुख्य, करी सेवे ध्यान अंतर्मुख ।
व्यापक थईने स्वमां ते, ज्ञप्तिक्रिया त्यां ज्ञाननी ए ॥१॥

अन्वयार्थ—आठमी अवस्थाना विषे बोध चंद्रनी प्रभा समान एटले जेम चंद्रनो प्रकाश सुर्यना प्रकाश करतां स्वभावीक ज शीतलरुप अने शांति-प्रेरकरुप होवाथी ते अनुसार ते एक सरखा परिणामे स्थिर टकी शके छे, तेम सम्यक् ज्ञान-दर्शनादिरुप आत्मबोधनुं अस्तित्व पण अहिं परम शीतलभुत एवा शांत रसे परिणमी ते संपुर्ण शुद्धता अने स्थिरतारुप परिणामे त्रीकाळ एक-सरखुं टकी शके तेवुं योग्यपणुं तेना विषे होय छे, अर्थात् उलब्धरुप थाय छे, अने तेथी अहिं सर्वोत्कृष्ट भावे कहेतां विशेष एवा स्वरुप एकत्वरुप परिणामे प्रज्ञरुप एवी ज्ञानदशा स्थिरपणे वर्तती होय छे, एम तुं जाण, अने तेथी ते साधक स्वमां व्यापक थई एटले पोते पोताना विषे अभेदत्वरुपे परिणमी अने त्यां शुद्ध पारिणामीकभावने मुख्य करी ते तथाप्रकारना अंतर्मुख-लक्षे स्वरुप-ध्यानने सेवे छे, अने तेने त्यां ज्ञप्तिरुप एवी ज्ञाननी क्रिया ए नामथी संबोधवामां आवे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—अहिं ते स्वरुप-साधक जीवनी उग्र एवी स्थितिप्रज्ञदशा, ते पोतानी विर्यात्मक रुचीनुं सर्व वलण एवा मात्र एक पोताना शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावना विषे पोतानी संपुर्ण अर्पणता-पुर्वक होवानुं सम्यक् सुचन करे छे। आवा प्रकारनी परम उग्र एवी ज्यां ज्ञानदशा वर्तती होय, त्यां पोतानुं पोताना विषे स्वभाव अभेदत्वरुप एवुं अंतर-व्यापकपणुं होवुं ए सहज अने स्वभावीक छे, अने ते पर्यायजन्य भेद-अवस्था प्रत्ये पोतानुं अत्यंत औदासीनपणुं होवानुं सुचन करे छे, अने ते साथे त्यां तथाप्रकारना अंतर्मुखलक्षे वर्तता एवा स्वरुप-ध्यानना ध्येयरुप के अंतिम स्वरुप-पुर्णतानी हेतुरुप, एवा पोताना शुद्ध पारिणामीक-भावनुं ज मुख्यपणुं छे, अने ते पोतानी पोताना विषे स्व-भावपुर्ण दृष्टी स्थिर होवानुं सुचन करे छे, अने ते साथे त्यां स्वरुप-ध्यानननी अंतर्मुख एकतारतानी प्रेरक एवी ज्ञप्तिरुप कहेतां ज्ञाननी ज्ञानमां स्थिरतारुप क्रिया, अत्यंत विशुद्ध परिणामपुर्वक होवी ए

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पण सहज अने स्वभावीक छे, अने ते समस्त विभावजन्य के 'करोति' क्रिया तरफ पोतानुं विशेष निर्लक्षपणुं होवानुं सुचन करे छे। आवा अप्रतिहत भावनी अंतरंग-सन्मुखताने अवलंबीत थयेला एटले स्वरुप-स्थिरताना, तेनी वर्द्धमानताना, अने अंतिम स्वरुप-पुर्णताना हेतुरुप एवो जे स्वरुप ध्यानना पुरुषार्थनो उग्र अंतरवेग ते जोईए तेवा बाह्य संयोगो वच्चे पण पाछो न फरे एवा उछळता विर्यात्मक-रुचीना वलण-पुर्वक वर्ततो होय, ए पण सहज अने स्वभावीक छे, अने ते उपरोक्त एवा ते स्वरुपसाधक जीवनी तीव्र एवी स्वरुपपुर्ण जिज्ञासा होवानुं सुचन करे छे।

आ उपरथी स्पष्टार्थ बोध एम ग्रहण करवा योग्य छे के जे जीव स्वरुप-ध्यान अने तेनी स्थिरताना मुळ एवा स्वरुप-बोधरुप कारणथी पराङ्मुख थई मात्र बाह्य-लक्षे तथारुप ध्यान अने स्थिरताना उपायनी शोध करे छे ते नियमा मिथ्यादृष्टी छे, अने जे जीव तथारुप ध्यान अने स्थिरताना मुळ एवा स्वरुप-बोधरुप कारणने अवलंबी ते द्वारा वास्तविक एवा वस्तुस्वभावने समजे छे, अने ते समज-पुर्वक स्वभाव-सन्मुख थाय छे ते नियमा सम्यक्दृष्टी छे। मतलब के ज्यां ज्यां जे जे जीवने स्वरुप-ध्यान अने तेनी स्थिरताना उपायनो विकल्प उपस्थित थाय छे, त्यां त्यां ते ते जीवने स्वरुप-निःशंकतानुं न्युनपणुं के तेनुं अभावपणुं होवुं घटे छे, अने ज्यां ज्यां जे जे जीवने तथारुप ध्यान अने स्थिरताना उपायनो मुख्य एवो जे विकल्प तेनो स्वभावलक्षे परिहार वर्ते छे, त्यां त्यां ते ते जीवने निःशंक एवुं स्वरुप-प्रतितीपणुं होवुं घटे छे, एम उभयात्मक दृष्टीए समजवा योग्य छे।

प्रश्न – ध्यानस्थ अवस्थामां एवा ते स्वरुप-साधक जीवनुं जे समये अंतर-व्यापकपणुं होय, ते समये तेनुं व्याप्यरुप-परिणमन केवा प्रकारनुं होय, अने ते साथे त्यां ज्ञप्तिरुप-क्रियानुं प्रधान कार्य शुं होय, अने ते क्रियानुं त्यां भेदत्वपणुं होय के अभेदत्वपणुं वर्ततुं होय ?

उत्तर—ध्यानस्थ अवस्थामां एवा ते स्वरुपसाधक जीवनुं (तेनी निर्मल पर्यायनुं) जे समये स्वभाव एकत्वरुप एवुं अंतर-व्यापकपणुं होय, ते समये तेनुं व्याप्यरुप परिणमन पण तेवा ज प्रकारे कहेतां निर्मल एवी वितराग अवस्थारुपे ज वर्ततुं होय छे, अने ते साथे त्यां ज्ञप्तिरुप-क्रियानुं प्रधान कार्य पण तथारुप एवी ते ज्ञाननी ज्ञानमां अंतर-स्थिरतारुप एवुं जे ध्यानस्थ अवस्थानुं निर्मल परिणमन तेने अस्खलित भावे टकावी राखवारुपे ज विशेष एवी स्वरुप-जाग्रतीपुर्वक होय छे, अने तेम होवाथी तथारुप क्रियानुं पण अभेदत्वपणुं त्यां स्वभावीक ज होय छे।

आ प्रमाणे व्यापक-व्याप्यना अने ज्ञप्तिरुप-क्रियाना परमार्थने समजवा योग्य छे, अने ते उपरथी तेना विशेष बोधने एम अवधारवा योग्य छे, के व्यापक ए द्रव्य कहेतां शुद्ध चैतन्यघन स्व-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भावनो धारक एवो आत्मा, जे सामान्यपणे पोतानी सर्व अवस्थामां व्यापीने कहेतां फेलाईने रहे छे ते, अने व्याप्य तेनी पर्याय कहेतां फेलायेली अवस्था जे विशेषपणे अमुक अवस्थामां ज व्यापे छे, अर्थात् फेलाय छे ते। आ प्रमाणे ते उभयनुं एटले व्यापक-व्याप्यरुप एवी ते फेलावनारनी फेलायेली अवस्थानुं अभिन्नपणुं होवाथी तेनी व्याप्यरुप थती क्रिया पण अभिन्नरुप ज होय, अने तेथी तथारुप एवी ते ज्ञप्तिरुप-क्रियानुं तेनी साथे अभिन्नपणुं होवुं ए सहज अने स्वभावीक छे. अने एज वस्तुनो परमार्थ छे।

आवा प्रकारना वस्तुबोधना परमार्थनी विशेष तत्वमिमांसा करतां एम सिद्ध थई शकवा योग्य छे, के व्यापक-व्याप्यनुं अभिन्नपणुं होवाथी व्यापक एवो जे आत्मा जेम ते प्रतिसमये पोताना व्याप्यरुप-परिणमनने एटले क्रम-बद्ध एवी पोतानी नुतन अवस्थाने अभिन्नपणे उत्पन्न करे छे, तेम भावक-भाव्यनुं एटले भोगवनार एवा ते आत्मानी भोगववा योग्य एवी ते अवस्थानुं पण अभिन्नपणुं होवाथी भावक एवो ते आत्मा प्रति-समये भाव्यरुप परिणामे पोतानी भोगववा योग्य एवी सामान्य पणे सर्व अवस्थाने अने विशेषपणे अमुक अवस्थाने ते अभिन्नपणे भोगवे छे, अर्थात अनुभवे छे, एम व्यापक-व्याप्यनी अने भावक-भाव्यनी सिद्धी एक ज द्रव्यमां एक ज समये थती होवानो एवो जे वस्तुनो स्वभाव तेने सम्यक् प्रकारे अवधारवा योग्य छे।

उपरोक्त बोधना सम्यक् अवधारथी आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाशे के जे कोई स्वरुप-साधक-जीव निज ज्ञानस्वभाव तरफना अंतर्मुखलक्षे पोतानी विर्यात्मक-रुचीना वलणने उत्पन्न करे छे, अने ते अनुसार तथारुप एवी ते पोतानी निर्मल पर्यायने तथारुप लक्षे एटले द्रव्यस्वभावनी अंतर अभेदतारुपे परिणमावे छे, तेज निर्मल पर्यायरुप परिणमन व्यापक एवा ते आत्मानुं व्याप्य कहेतां निर्मल ज्ञान-अवस्थारुप एवुं वितराग परिणमन छे, अने त्यां ज द्रव्य-गुण-पर्यायनी एकत्वरुप सिद्धी थती होवाथी सम्यक्-त्रयरुप एवा भावमोक्षमार्गनुं अस्तित्व एवा ते स्वरुपसाधक जीवने नित्य सम्यक् प्रकारे वर्ततुं होय छे। आवा प्रकारनुं सम्यक्त्रयरुप भावमोक्ष-मार्गनुं अस्तित्व उपरोक्त एवा ते स्वरुप-साधक जीवने होवाथी निरंतर ते तथारुप लक्षे एटले सम्यक्त्रयरुप स्वभाव स्थिरतानी अंतर-सिद्धी अर्थे ते स्वरुप-ध्याननी अंतर्मुखश्रेणीने सम्यक् प्रकारे अवलंबीत थाय छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अक्रमरुप स्वभावमां, थाय स्थिर ते विशेष जेम ।
क्रम-बद्ध पर्याय विशुद्धरुप, प्रगटे स्वभावथी त्यां तेम ॥
त्यां क्रमे अखंड थतां ते स्थित, प्रगटे अवस्था पुर्ण पवित्र ।
शुद्ध स्वभावथी एम तुं जाण, पुर्ण वितरागत्व ने केवळज्ञान ॥२॥

अन्वयार्थ-अहिं ते स्वरुप साधक जीव जेम जेम अक्रमरुप एवा पोताना शुद्ध स्वभावना विषे विशेष प्रकारे स्थिर थतो जाय छे, तेम तेम त्यां तथारुप एवा ते पोताना शुद्ध स्वभावथी क्रमबद्ध एवी विशुद्धरुप पर्यायनुं प्रगटवापणुं थतुं जाय छे, अने एम क्रमे करी ते साधकनुं अखंड एवुं स्वभाव स्थिरतापणुं थतां, त्यां पोताना शुद्धस्वभावथी पुर्णस्वरुप वितरागत्वपणुं अने केवळज्ञानरुपी दिव्य-प्रकाशनुं स्फुरवापणुं एवी पुर्णावस्था प्रगटे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण ।

विशेषार्थ—वस्तुनी क्रमबद्ध-अवस्थाना वास्तविक निर्णयनो सर्व आधार अक्रमरुप एवी ते वस्तुना एटले अहिं त्रीकाळ शुद्ध एवा पोताना मुळ द्रव्य-स्वभावना वास्तविक निर्णय पर ज रहेलो छे, एम जे जीवने पोताना शुद्ध द्रव्य स्वभावना विषे पोतानी दृष्टी प्रेरीत थई सम्यक् प्रकारे समजाय छे, तेज तेने एटले पोताना शुद्ध द्रव्य-स्वभावने स्व-सिद्धीना सर्व आधाररुप गणी तेने सम्यक् योगे अवलंबीत थाय छे । आवा प्रकारनुं बोध-विशेष परिणमन उपरोक्त एवा ते स्वरुप-साधक-जीवने सम्यक् प्रकारे होवाथी ते तथारुपलक्षे पोते पोताने एटले अक्रमरुप एवा पोताना मुळ-द्रव्य-स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताने जेम जेम अवलंबतो जाय छे, अने ते साथे तथारुप स्थिरतानुं स्वरुप-ध्यानना बळे जेम जेम ते वर्द्धमानपणुं करतो जाय छे, तेम तेम त्यां अनादि अनंत क्रमबद्ध अवस्थाना धारक एवा पोताना अक्रमरुप शुद्ध द्रव्य-स्वभावनुं प्रतिसमये विशुद्ध एवी क्रमबद्ध अव-स्थारुपे सहज परिणमवुं थतुं जाय छे । मतलब के अक्रमरुप एवा शुद्ध द्रव्य-स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताना बळे द्रव्य-स्वभाव पोते पोताना निर्मल एवा व्याप्यरुप परिणामे फेलाईने पोते पोतानी क्रम-बद्ध एवी ते निर्मल अवस्थाने प्रतिसमये विशेष विशेष विशुद्ध परिणमननी वर्द्धमानतापुर्वक उत्पन्न करे छे, अने एम क्रमे करी त्यां द्रव्य-स्वभावनुं कहेतां द्रव्य-स्वरुप एवा ते शुद्ध आत्मानुं अखंड स्वभाव स्थिरतापणुं थतां, द्रव्य-स्वभाव पोते संपुर्ण एवी पोतानी निर्मल अवस्थाना व्याप्यरुपे एटले पुर्ण-स्वरुप वितराग-परिणामरुपे परिणमी त्यां व्यापक-व्याप्यनी पुर्ण अभेदताने अर्थात् केवळरुप स्वभाव स्थिरताने पामे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ उपरथी सहज लक्षमां आवशे के जे कोई स्वरुप-साधक-जीव पोते पोताना अक्रमरुप एवा शुद्ध द्रव्य-स्वभावना वास्तविक भानपुर्वक तथारुप लक्षे एटले पोते पोताना तथारुप एवा शुद्ध द्रव्य-स्वभावरुप परिणामे संपुर्ण अंतरव्यापक थई पोते पोताना विषे स्वभाव एकत्वरुप अभेद-स्थिरता करे छे, अने ते स्थिरताने अखंड एवी स्वरुप-ध्याननी अंतर्मुखश्रेणीना बळे अस्खलित परिणामे टकावी राखे छे, ते जीव क्रमबद्ध एवी निर्मल अवस्थाने प्रतिसमये विशेष विशेष विशुद्ध परिणामनी वर्द्धमानतापुर्वक उत्पन्न करी अंतिम पुर्ण-स्वरुप वितरागत्वने के केवळज्ञानरुपी दिव्य-प्रकाशने पामे छे, अने ते उपरोक्त साधकना प्रगटेला एवा ते संपुर्ण प्रभुत्वने अवलोकतां सहज सिद्ध थई शकवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

घाति चतुष्टयनो अहिं, थाय आत्यंतिक अभाव।
अप्रतिहत अंतर ध्यानरुप, श्रेणी क्षपकनो ए प्रभाव॥
एकादश वण ते श्रेणीना धार, अष्टमथी द्वादश पर्यंत चार।
ते स्पर्शी पामे त्रयोदश ते, क्षपकनां गुणस्थानक ए॥३॥

अन्वयार्थ—अहिं घातिचतुष्टयनो एटले चार घातिकर्मावरणोनो आत्यंतिक अभाव थई जाय छे, अने ते अंतरना विषे अप्रतिहत भावे उत्पन्न थयेल एवी स्वरुप-ध्यानरुप क्षपकश्रेणीनो ज प्रभाव छे। तथारुप श्रेणीना विषे अग्यारमा उपशांतमोह विना, आठमाथी बारमा पर्यंत एवा चार गुणस्थानकने ते स्पर्शी अंतिम त्रयोदश एवा सयोगीकेवलीने ते पामे छे, अने क्षपकश्रेणीना मुख्यत्वे करी गुणस्थानक पण तेज छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे कर्म आत्माना अनुजीवी-गुण-अवस्था विशेषनी व्यक्तताने रोकवामां निमितभुत थाय, तेने घातिकर्मना नामथी ओळखवामां आवे छे, तेना ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोह-नीय, अने अंतराय एम एकंदर चार प्रकार छे। ते चारे प्रकारना कर्मनुं अभावपणुं थवाना यथार्थ-क्रमनी शरुआत नियमा सम्यग्दर्शनथी ज थाय छे, अने तेथी सम्यग्दर्शन एज तेना अभावनुं एक अनिवार्य शस्त्र छे। तथारुप सम्यग्दर्शन उपलब्ध थये क्रमे क्रमे ते सम्यक्-त्रयरुप एवी अंतर्मुख-साधनाना बळे जेम जेम एवो ते सम्यक्द्दष्टी जीव पोते पोतानी स्वभाव एकत्वरुप स्थिरताने अवलंबतो जाय छे, तेम तेम त्यां निर्मल पर्यायरुप एवा ते शुद्धोपयोगनुं के तथारुप एवा ते भाव-संवरनुं निमित

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पामीने त्यां घातिचतुष्टयरुप एवा ते पुद्गल-कर्मनुं तेना पोताना कारणे द्रव्य-संवररुपे परिणमवुं थई तेनुं क्रमे क्रमे परिक्षीणपणुं थतुं जाय छे, अने तथारुप क्रमथी क्रमे करी तेनुं सर्व प्रकारे अभावपणुं पण थई जाय छे।

प्रश्न—उपरोक्त कर्मनुं अभावपणुं तेना पोताना कारणे ज जो थतुं होय तो जीवना कारणे थयेली के थती एवी अप्रतिहत भावरुप क्षपकश्रेणीनुं प्रभावपणुं दर्शावी तेने प्रशंशवानो शुं हेतु छे ?

उत्तर—ते प्रशंशवानो हेतु कर्मनुं अभावपणुं थवानी अपेक्षाए नथी, पण उपशमश्रेणीनी अपेक्षाए छे, अर्थात् पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था-भेदे स्वरुप-ध्याननी अंतर्मुखश्रेणीना मुख्यत्वे करी बे प्रकार थाय छे, एक उपशमरुप, अने बीजी क्षपकरुप। आ बंने प्रकारनी श्रेणीमां शुं न्युनाधिकपणुं रहेलुं छे, अने ते बंनेमांथी एकने मुख्य करी तेने प्रशंशवानो शुं हेतु छे, तेनुं यथार्थ निरुपण अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे—

१—उपशमश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ प्रतिहत-भावरुप होवाथी त्यां ध्याननी श्रेणी शुक्लध्यानना पहेला भेदमां ज अटकी स्व-कार्य सिद्धीना घातकरुप बने छे, त्यारे क्षपकश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ अप्रतिहत-भावरुप होवाथी त्यां ध्याननी श्रेणी शुक्ल-ध्यानना बीजा भेदना अंत-पर्यंत पहोंची स्व-कार्य सिद्धीनी विजयताने पामे छे।

२—उपशमश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ प्रतिहत-भावरुप होवाथी ते आठमाथी अग्यारमा पर्यंत एवा चार गुणस्थानने स्पर्शी त्यांथी नियमा तेना अंतिम-समये ते ध्यानभ्रष्ट हालतमां च्युत थई जाय छे, त्यारे क्षपकश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ अप्रतिहत-भावरुप होवाथी ते अग्यारमा उपशांत-मोह विना, आठमाथी बारमा पर्यंत एवा चार गुणस्थानने स्पर्शी तेना अंतिम-समये तेज श्रेणीना बळे ते त्रयोदश गुणस्थानने अर्थात् पुर्णस्वरुप वितरागत्वने पामे छे।

३—उपशमश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ प्रतिहत-भावरुप होवाथी त्यां घातिचतुष्टयनी (२१) प्रकृतिओ नियमा उपशमरुपे ज परिणमे छे, त्यारे क्षपकश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ अप्रतिहत-भावरुप होवाथी तथारुप (२१) प्रकृतिओ ते नियमा क्षयरुप कहेतां तेनुं सर्वथा अभावपणुं थई जाय छे।

४—उपशमश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ प्रतिहत-भावरुप होवाथी तथारुप श्रेणी आरुढ थतां त्यां क्षायिक-सम्यक्त्वनी खास अपेक्षा रहेती नथी, त्यारे क्षपकश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ अप्रतिहत-भावरुप होवाथी तथारुप श्रेणी आरुढ थतां त्यां क्षायिकसम्यक्त्वनी खास अपेक्षा रहे छे, अर्थात् ते विना तथारुप श्रेणीनो प्रारंभ थई शकतो नथी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ प्रमाणे पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था-भेदे उपरोक्त बंने श्रेणीमां लक्षणभेदे तफावतपणुं रहेलुं छे, अने तेथी तेमांनी एक एवी जे क्षपकश्रेणी तेज मात्र स्वरुप-पुर्णताना हेतुरुप होवाथी तथा प्रकारनी अंतर्मुख-साधनामां तेज मात्र एक सर्व प्रकारे उपादेयरुप छे, अने तेथी तेनुं प्रशंशवापणुं रहे छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

केवळ निज स्वभावनुं, अहिं अखंड वर्ते ज्ञान।
ते साथे त्रैलोक्य पदार्थनुं, ज्ञान त्रीकाळवर्ती जाण ॥
ते सर्वनी युगपत जाणे ते, क्रमबद्ध अवस्था प्रत्यक्ष ए।
एवा ऐश्वर्य-पदे ते स्थित, सर्वज्ञपद ते जाण खचीत ॥ ४ ॥

अन्वयार्थ—अहिं ते स्वरुप-पुर्ण भगवंतने केवळ निज-स्वभावनुं कहेतां पोताने पोताना शुद्धात्म स्वरुपनुं ज्ञान अखंडपणे वर्ततुं होय छे, अने ते साथे त्रणे लोकना पदार्थनुं ज्ञान तेमने त्रीकाळवर्ती होय छे, एम तुं जाण, अने तेथी ते सर्व पदार्थोनी क्रमबद्ध—अवस्थाने युगपत् कहेतां एक साथे पोताना ज्ञानथी प्रत्यक्ष जाणे छे। आवा परम ऐश्वर्यपदे स्थित एवा ते भगवंतना पदने सर्वज्ञपदना नामथी संबोधवामां आवे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी खचीत करीने जाण।

विशेषार्थ—जे कोई स्वरुप-साधक जीव पोते पोतानी स्वभाव एकत्वरुप स्थिरताना विकास क्रमने अवलंबीत थई अने ते द्वारा पोते पोताना संपुर्ण वितराग स्वभावे परिणमी अखंड एवी स्वभाव स्थिरताने पामे छे, तेने ज केवळ निज-स्वभावनुं एटले पोताने पोताना शुद्धात्म स्वरुपनुं ज्ञान अखंड-पणे वर्ततुं होय छे, अने तेथी ते ज्ञानना धारक एवा ते स्वरुपपुर्ण भगवंतने पोतानो स्व-पर ज्ञायक स्वभाव संपुर्णपणे प्रगटेलो होवाथी त्यां तथारुप एवा ते पोताना ज्ञानस्वभावना विषे एटले स्व-पर-प्रकाशक रुप एवी पोताना ज्ञाननी एक समयनी पर्यायमां त्रणे-लोकना पदार्थनुं ज्ञान त्रीकाळवर्तीपणे सहज स्वभावे वर्ततुं होय छे, अने तेथी ते भगवंत प्रत्येक प्रत्येक वस्तुनी पोतपोताना स्वतंत्र स्वभावने अवलंबीने थती, थयेली के थवा योग्य एवी त्रणे-काळनी तेनी सर्व क्रमबद्ध-अवस्थाओने के तेनी अनादि-अनंत-पर्यायोने युगपत् कहेतां एक साथे तथारुप एवा ते पोताना ज्ञान सामर्थ्यथी प्रत्यक्ष जाणे छे, अने तेथी परम ऐश्वर्य पदे स्थित कहेतां पुर्ण एवा पोताना आत्मज्ञपदथी अलंकृत थयेला एवा ते भगवंतना पदने पुर्ण एवा सर्वज्ञपदना नामथी आलेखवामां आवे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ उपरथी समजाशे के जेने पुर्ण एवुं पोतानुं आत्मज्ञपणुं प्रगट्युं होय, तेने तेना अविनाभावी संबंधरुपे पुर्ण एवुं सर्वज्ञपणुं वर्तेतुं होय, अने जेने पुर्ण एवुं सर्वज्ञपणुं वर्तेतुं होय तेने ज तेना अविनाभावी संबंधरुपे पुर्ण एवुं पोतानुं आत्मज्ञपणुं प्रगट्युं होय। मतलब के पुर्ण आत्मज्ञपणुं अने पुर्ण सर्वज्ञपणुं ए बंनेनी अस्ति के नास्ति साथे ज होय छे, अने एज ते उभयनुं परस्पर अविनाभावी संबंध होवानुं सिद्ध करे छे, अने तेथी संपुर्ण जे स्वने जाणे छे, ते संपुर्ण परने पण जाणे छे, अने संपुर्ण जे परने जाणे छे, ते संपुर्ण स्वने पण जाणे छे, अने ते उपरथी ए पण सिद्ध थई शकवा योग्य छे के संपुर्ण जे स्वने नथी जाणतो, ते संपुर्ण परने पण नथी जाणतो, अने संपुर्ण जे परने नथी जाणतो, ते संपुर्ण स्वने पण नथी जाणतो। मतलब के संपुर्ण स्वना ज्ञानपुर्वक, संपुर्ण परनुं ज्ञान होवुं वा संपुर्ण परना ज्ञानपुर्वक संपुर्ण स्वनुं ज्ञान होवुं एज वस्तुनो परमार्थ छे, अने त्यांज पुर्णात्मक पदनी सिद्धी छे।

प्रश्न—सर्वज्ञ भगवान पोतानी सर्वज्ञशक्तिना बळे स्व पुर्वक परने एटले त्रैलोकना विषे रहेला एवा सर्व पदार्थोने के ते पदार्थोनी सर्व वर्तमान अवस्थाओने ते एक साथे प्रत्यक्ष जाणी शके, पण ते सर्व पदार्थोने त्रीकाळवर्तीपणे एटले तेनी भुत, भावी, सर्व क्रमबद्ध-अवस्थाओने वर्तमान ते नास्तिरुपे होवा छतां, तेने प्रत्यक्ष कई रीते जाणी शके ?

उत्तर—जे सर्वज्ञ भगवान पोतानी सर्वज्ञशक्तिना बळे त्रैलोकना विषे रहेला एवा सर्व पदार्थोने के ते पदार्थोनी सर्व वर्तमान अवस्थाओने एक साथे प्रत्यक्ष जाणी शके छे, ते सर्वज्ञ भगवान ते पदार्थोनी भुत, भावी, सर्व क्रमबद्ध-अवस्थाओने एटले पुर्वे तेनुं जे जे अवस्थारुपे परिणमवुं थयुं होय, ते ते अवस्थारुपे, अने भावी तेनुं जे जे अवस्थारुपे परिणमवापणुं थवा योग्य होय ते ते अवस्थारुपे, एम वस्तु-मात्रनी थयेली, थती, के थवा योग्य एवी त्रणे काळनी क्रमबद्ध-अवस्थाओने के तेनी अनादि अनंत पर्यायोने वर्तमानकाळे एक साथे प्रत्यक्ष जाणी शके छे। हवे ते कई रीते जाणी शके छे, तेना स्पष्टार्थ बोधनुं कथन नीचे प्रमाणे छे।

पदार्थ, वस्तु वा द्रव्य ए एकार्थी वचनो छे। ते अनादि अनंत पर्यायोना पिंडरुप छे, अने पिंडरुप होवाथी भुत, भावी, थयेली के थवा योग्य एवी तेनी सर्व क्रमबद्ध पर्यायो वर्तमानमां ते अप्रगटरुप होवा छतां पण तेनो समावेश तेमां ज अर्थात् अनादि अनंत पर्यायना पिंडरुप एवा मात्र ते एक द्रव्यमां ज थई जाय छे। आम वस्तु-स्थिति होवाथी. अने द्रव्यार्थीकनयथी पण तेम ज एटले भुत, भावी एवी ते सर्व पर्यायो त्रीकाळ एवा ते द्रव्यमां ज अस्तिरुपे रहेवाथी संपुर्णपणे प्रगटेला एवा ते सर्वज्ञस्वभावमां, प्रमेयत्व स्वभाव छे जेनो एवा द्रव्य, गुण, पर्यायरुप सर्व ज्ञेयो सहज प्रतिबिंबीत थई शकवा योग्य छे, अर्थात् एक साथे प्रत्यक्ष ते जणाय छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ उपरथी समजाशे के आत्माना विषे रहेलो एवो जे ज्ञानगुण तेनो जेम वस्तुमात्रने जाणवानो स्वभाव छे, तेम वस्तु-मात्रना विषे रहेलो एवो जे प्रमेयत्वगुण तेनो कोईना ज्ञानमां जणावानो स्वभाव छे, अने तेथी वस्तुमात्र कोईना ज्ञाननो जाणवारुप विषय थई शके ए सहज अने स्वभावीक छे, अने तेम होवाथी संपुर्ण विकसीत थयेलो छे ज्ञायकस्वभाव जेनो एवा सर्वज्ञस्वभावमां न जाणवानुं कांई पण रहेतुं ज नथी। मतलब के सर्व द्रव्यो, सर्व द्रव्यना गुणो, अने सर्व द्रव्यनी भुत, वर्तमान, अने भावी पर्यायो के तेनी त्रीकाळवर्ती क्रमबद्ध-अवस्थाओ ते प्रमेयत्व-स्वभावरुप होवाथी संपुर्ण ज्ञानीना ज्ञानमां अर्थात् एवा ते सर्वज्ञ-स्वभावमां संपुर्णपणे ते जणाय छे, अने एज जीवना सर्वज्ञ स्वभावनुं प्रशंशवा योग्य एवुं आ अचिंत्य महात्म्य छे।

आ उपरथी स्पष्टार्थ बोध एज ग्रहण करवा योग्य छे के वस्तुमात्रनी अनादि-अनंत एवी क्रमबद्ध-अवस्थाओ जेम थाय छे, तेम सर्वज्ञ भगवानना ज्ञानमां ते जणाय छे, अने जेम ते जणाय छे, तेम तेनी क्रमबद्ध-अवस्थाओ थाय छे। मतलब के त्रणे-काळना जेटला समयो, तेटली ज वस्तुनी पर्यायो, अने जेटली वस्तुनी पर्यायो, तेटला ज त्रणे-काळना समयो। आम वस्तुस्थिति होवाथी वस्तुमात्रनी अनादि-अनंत एवी सर्व पर्यायो क्रमबद्ध ज थाय छे, तेमांनी कोई पण समयनी पर्याय आडी अवळी के आगळ पाछळ थती नथी। आवो वस्तुस्वभावना विषे रहेलो त्रीकाळ एकरुप एवो जे नियम अने ते नियमानुसार वस्तुमात्रनुं क्रमबद्ध-अवस्थाना चालु प्रवाहरुपे थतुं परिणमन के जे परिणमनने रोकवा, के तेने फेरबदल करवा, अन्य तो शुं, पण स्वयं एवी ते वस्तु पण कोई पण प्रकारे समर्थ नथी, अने एज उत्पात, व्यय ध्रुवस्वरुप एवा ते वस्तुस्वभावना गुप्त चमत्कारनी तत्व-मिमांसा करतां, संपुर्ण स्व-पर-ज्ञायक-स्वभाव प्रगटयो छे जेनो, एवा वर्तमान विहरमान सर्वज्ञ भगवाननी अने संपुर्ण स्व पर-ज्ञायक-स्वभाव प्रगटवा योग्य शक्ति छे जेनी, एवा पोताना सर्वज्ञ-स्वभावनी विशेष एवी सम्यक्‌रुप प्रतिती दृढत्वने पामे छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

अनंत चतुष्टयथी प्रभु, अरिहंत पदे थई स्थित।
दिव्यध्वनि उपदेशथी, वस्तुधर्मने बोधे नित्य॥
परम यथाख्यात क्रमे आंय, चारित्र प्रगटे स्वरुप मांय।
स्पर्शी त्यां अयोगी गुणस्थान, सिद्धत्वने पामे भगवान॥५॥

अन्वयार्थ—अनंत चतुष्टयथी अलंकृत एवा ते सर्वज्ञ भगवान अरिहंत पदे स्थित थई

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अहिं भव्य जीवोने दिव्यध्वनि उपदेशथी नित्य वस्तुधर्मनो बोध करे छे, एटले वस्तुनुं यथार्थ स्वरुप समजावे छें। क्रमे करी अहिं स्वरुप अवस्थाना विषे परम यथाख्यात एवुं अंतिम चारित्र प्रगटरुप थतां त्यां अयोगी एवा चतुर्दश-गुणस्थानने अंतिम समये स्पर्शी ते अरिहंत भगवान सिद्धत्वने पामे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जे कोई स्वरुप-साधक-जीव पोते पोताना संपुर्ण वितराग-स्वभावे परिणमीं पुर्ण एवा सर्वज्ञपदने पामे छे, ते भगवंतने अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, अने अनंतविर्य एवा अनंत-चतुष्टयनुं प्रगटपणुं नियमा होय छे, अने तेथी अनंत चतुष्टयथी अलंकृत एवा ते भगवंतने अरिहंत एटले अनंत चतुष्टयनी व्यक्तताना रोधकरुप प्रधान एवा रागादि-भावशत्रुरुप शत्रुओनो विजय कर्यो छे जेणे, एवा परम रहस्यार्थभुत नामथी ओळखवामां आवे छे । ते अरिहंत भगवंतना तिर्थंकर नामकर्मना उदयनी तारतम्यानुसार तेमना मुख्यत्वे करी त्रण अने ते सिवायना सामान्यपणे चार एम एकंदर सात प्रकार छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे ।

तिर्थंकरना त्रण प्रकार

पंचकल्याणक सहीत—पुर्व भवे एवा ते सम्यक्‌दृष्टी जीवना शुभ विकल्पनुं निमित पामीने पुद्‌गल-कर्मना विषे बंध परिणामी थयेल एवा गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान अने निर्वाण ए पंचकल्याणकरुप तिर्थंकर प्रकृतिनुं वर्तमान भवे उदयरुपे थवुं ते ।

त्रण कल्याणक सहीत—वर्तमान भवे ग्रहवासमां एवा ते सम्यक्‌दृष्टी जीवना शुभ विकल्पनुं निमित पामीने पुद्‌गलकर्मना विषे बंध परिणामी थयेल एवा तप, ज्ञान, अने निर्वाण ए त्रण कल्याणकरुप तिर्थंकर प्रकृतिनुं वर्तमान भवे उदयरुपे थवुं ते ।

बे कल्याणक सहीत—वर्तमान भवे मुनी अवस्थामां एवा ते सम्यक्‌दृष्टी जीवना शुभ विकल्पनुं निमित पामीने पुद्‌गल-कर्मना विषे बंध परिणामी थयेल एवा ज्ञान अने निर्वाण ए बे कल्याणकरुप तिर्थंकर प्रकृतिनुं वर्तमान भवे उदयरुपे थवुं ते ।

उपरोक्त त्रण प्रकारना तिर्थंकरोमां प्रथमना पंचकल्याणक तिर्थंकरो मुख्यत्वे करी भरत, ऐरावत अने महाविदेह एवा त्रण क्षेत्रोना विषे उत्पन्न थाय छे, अने बीजा अने त्रीजा प्रकारना बे के त्रण कल्याणक तिर्थंकरो तेमनुं उत्पत्तिस्थान नियमा महाविदेह-क्षेत्र ज होय छे । आ प्रमाणे तिर्थंकर-नामकर्मना उदयनी तारतम्यानुसार अरिहंत भगवंतना त्रण प्रकारनुं निरुपण करवामां आव्युं । हवे ते सिवायना तेमना चार प्रकारनुं निरुपण करवामां आवे छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

केवलीना चार प्रकार

सातिशय केवली—जे अरिहंत भगवंतने गंधकुटी विगेरे अतिशयो मुख्यपणे वर्तता होय ते।

सामन्य केवली—जे अरिहंत भगवंतने गंधकुटी विगेरे अतिशयोनुं खास विशेषपणुं न होय ते।

अंतकृत केवली—जे अरिहंत भगवंत केवळज्ञान उत्पन्न थवानी साथे ज एटले लघु अंतर्मुहुर्त-काळमां निर्वाणपदने पामे ते।

उपसर्ग केवली—जे अरिहंत भगवंत उपसर्ग अवस्थामां केवळज्ञान उत्पन्न थवानी साथे ज निर्वाण-पदने पामे ते।

आ प्रमाणे साते प्रकारना अरिहंत भगवंत ज्ञानादि-गुणथी समान होवा छतां उदयनी तारतम्यानुसार तेमना पृथक् पृथक् भेद पडे छे, ते साते प्रकारना पृथक् भेदमां आदिना त्रण भेदरूप एवा जे अरिहंत भगवंत तेमने तिर्थंकर-नामकर्मनो उदय मुख्यरुप होवाथी तेओ भव्य जीवोने दिव्यध्वनि उपदेशथी वस्तुधर्मनो बोध करे छे, ते दिव्यध्वनि उपदेशमां ॐकारनुं मुख्यपणुं होवाथी तेने ॐकार-ध्वनिना नामथी पण संबोधवामां आवे छे, ते ॐकारध्वनिरुप वाणी एकाक्षरी वा निरक्षरी होय छे, अने ते आत्माना सर्व प्रदेशोथी स्फुरायमान थाय छे। ते वाणीना प्रत्येक समयना स्फुर्णमां संपुर्ण ज्ञानमुख्य कथन होय छे। श्रोताजनो ते वाणीने पोताना उपादाननी योग्यतानुसार झीले छे, ते साथे जे प्रकारना बोध-श्रवणनो श्रोताजनो त्यां भाव करे ते प्रकारनो बोध ते वाणी द्वारा तेमने संपुर्ण समाधानोपुर्वक संप्राप्त थाय छे, अने ते सौ कोई पोतपोतानी भाषामां समजी पण शके छे, अने ते अपेक्षाए ते वाणीने साक्षरी दिव्यध्वनिना नामथी पण ओळखवामां आवे छे।

आ प्रमाणे अरिहंत भगवंत आयुष्यनी यावत् स्थिति-पर्यंत भव्य जीवोने दिव्यध्वनि उपदेशथी नित्य वस्तुधर्मनो बोध करे छे। तथा प्रकारनो तिर्थंकर-नामकर्मनो उदय क्रमे करी निवृत थतां, ते भगवंतनो आत्मा संपुर्ण शुद्ध एवुं परम यथाख्यात-चारित्र अयोगी गुणस्थानकना अंतिम-समये संप्राप्त करे छे, अने ते साथे अघातिचतुष्टयनुं पण त्यां तेना पोताना कारणे सर्व प्रकारे अभावपणुं थई जाय छे, एटले तेज समये अरिहंत भगवंत देहादिथी संपुर्णपणे मुक्त थई सिद्धत्वने कहेतां शाश्वत एवा निर्वाणपदने पामे छे।

समालोचना

आत्मानी कर्मना संबंधथी आत्यंतिक निवृत्ति थई पोताने पोतानी संपुर्ण शुद्धावस्था प्राप्त थवी तेनुं नाम मुक्तावस्था छे, तेवी परम अवस्था अयोगी गुणस्थानकना अंतिम-समये प्रगट थतां आत्मानी उर्ध्वगती अने सिद्धपदना विषे स्थिति सहज चार हेतु कारणोने अवलंबीने थाय छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छेः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्वप्रयोगथी—कोई पण लक्षबिंदुनी सन्मुखतापुर्वक करेली एवी बाण छोडवारुप क्रियात्मक प्रवृत्तिनी पश्चात् ते छोडवारुप प्रेरीत क्रियानो अभाव थवा छतां पण ते सहज पुर्वोक्त क्रियाना बळे तेज लक्षबिंदुनी सन्मुखता तरफ वेगथी गती करतुं जणाय छे, तेम मोक्षपदनी सिद्धीना मुळ हेतुरुप ध्येयनी सन्मुखतापुर्वक करेली एवी जे ज्ञानादि सम्यक्त्रयनी शुद्ध स्वभाव सेवनारुप क्रिया, ते पुर्णतारुप सिद्धिनी पश्चात् एटले अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये आत्मानी सहज पोताना तेज पदनी सन्मुखता तरफ उर्ध्वगति थवी ते।

बंधनछेदथी—मृतिकाना लेपथी बंधनग्रस्त थयेल एवी जे तुंबडी, तेनुं जळ द्वारा थयेल शुद्धीना योगे तथारुप बंधन छुटवाथी ते सहज पाणीना अग्रभाग पर तरी आवे छे, तेम पर्याय तरफना विमुख-लक्षे कर्मना संबंधथी बंधनग्रस्त थयेल एवो जे आत्मा तेनी ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप एवी शुद्ध स्वभाव सेवना द्वारा थयेल पुर्ण शुद्धीना योगे अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये समस्त कर्मजन्य वर्गणाओनुं बंधनछेदपणुं थतां तेनी सहज मोक्षपदनी सन्मुखता तरफ उर्ध्वगती थवी ते।

असंगपणाथी—मृतिकाना लेपरुप संगथी बंधनग्रस्त थयेल एवी जे तुंबडी तेनुं बंधनछेदपणुं थवारुप एवुं असंगपणुं प्राप्त थतां, ते असंगपणाना बळथी सहज पाणीना अग्रभाग पर तरी आवे छे, तेम कर्मरुप संगथी बंधनग्रस्त थयेल एवो जे आत्मा तेनुं अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये आत्यंतिक बंधनछेदपणुं थवारुप एवुं संपुर्ण असंगपणुं प्राप्त थतां, ते असंगपणाना बळथी तेनी सहज मोक्षपदनी सन्मुखता तरफ उर्ध्वगति थवी ते।

उर्ध्वगमनस्वभावथी—प्रत्येक पदार्थनुं पोताना स्वभावीक गुणधर्मने अवलंबीने अनुसरवुं थाय छे, जेम के पाषाण, काष्ट, लोखंडादि पदार्थोनुं निचे पडवापणुं, अग्निनुं उपर चडवापणुं, पवननुं तिर्छागमन करवापणुं, तेम आत्मानुं उर्ध्वगमन स्वभावपणुं होवाथी अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये तेनी सहज मोक्षपदनी सन्मुखता तरफ उर्ध्वगती थवी ते।

आ प्रमाणे चार हेतु कारणने अवलंबीने अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये शुद्ध चैतन्यघन एवो जे आत्मा ते ऊर्ध्वगमन करी लोकाग्रभागे सिद्धालयना विषे, सिद्ध परमात्मापदे—उपादाननी अपेक्षाए गतिनी योग्यता त्यां सुधीनी होवाथी अने निमितनी अपेक्षाए गति सहायक एवा धर्मद्रव्यनी त्यां समाप्ती थती होवाथी—स्थिर थई परम अलौकिक एवा सहज सुखमय शांत सुधारसना आस्वादने अनुभवे छे, ते सिद्ध परमात्मानुं अनंत गुणोत्कृष्टपणुं छे ते पैकी अहिं तेमना सप्तात्मक गुणविशेषनुं प्रधानपणुं करी निरुपण करवामां आवे छे।

अष्टकर्म रहीत—ज्ञानावरणादि अष्टकर्मोनुं सर्वथा अभावपणुं होवुं ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अष्टगुण सहीत—कर्मना अभावरुप निमितथी प्रगटेला प्रधानरुप एवा अनंत चतुष्टयादि अष्टगुणोनुं होवुं ते।

निरंजन—राग-द्वेषादि एवा अशुद्ध विकारात्मक अंजनथी सर्व प्रकारे मुक्तपणुं होवुं ते।

नित्य—शुद्धात्म-स्वरुपना अनुभवनुं अखंड स्थिरतारुप एकतारपणुं सादी अनंत समाधिरुपे रहेवुं ते।

परम शांत—स्वरुपथी उत्पन्न थता एवा सहज सुखमय शांत सुधामृतनुं अस्खलित आस्वादपणुं होवुं ते।

कृतकृत्य—शरिर, इच्छा अने बाह्य क्रियात्मक उपाधिथी रहीत एवुं सर्व प्रकारे अने सर्व काळना विषे निष्क्रीयपणुं होवुं ते।

लोकाग्रनिवासी—लोकना अग्र भाग पर एवा सिद्धालयना विषे जेमनुं सदा स्थिर निवासपणुं होवुं ते।

आ प्रमाणे मुक्तात्माओने सप्तात्मक गुणोनुं विशेषपणुं छे, अने तेने ज सिद्ध परमात्मा के शुद्ध ईश्वर-स्वरुपना नामथी संबोधवामां आवे छे। ते स्वरुप साथे अन्य दर्शनावलंबीओए प्रतिपादन करेला स्वरुपनी समालोचना करतां, एटले तेने सप्तात्मक गुणविशेषना प्रत्येक भेद साथे सरखावतां तेनुं अन्यथापणुं प्रत्यक्ष देखाई आवे छे, ते अहिं दर्शन-विशुद्धीना हेतु-लक्षने अवलंबी निरुपण करवामां आवे छे।

शीव मतावलंबी—मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनुं स्वरुप अनादिथी कर्म रहीत होवानुं स्वीकारे छे, परन्तु ईश्वरनुं स्वरुप तेवुं नथी, कारण के ईश्वर-पदनी के मुक्तावस्थानी प्राप्ती ते नियमा संसार-अवस्थापुर्वक ज होय छे, अर्थात् जे जीव ज्ञानावरणादि अष्टकर्मना बंधननो सर्व प्रकारे छेद करे छे, ते जीव मुक्तावस्थाने एटले ईश्वर के सिद्ध परमात्म-पदने पामे छे, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने अष्टकर्म रहीत एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुणविशेषना पहेला भेदमां प्रतिपादन करवामां आव्युं छे।

योग मतावलंबी—मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनुं स्वरुप निर्गुण होवानुं स्वीकारे छे परन्तु ईश्वरनुं स्वरुप तेवुं नथी, कारण के जीव गुण-स्वरुप छे, ते गुणोनुं मुक्तावस्थामां अभावपणुं मानवाथी त्यां मुक्त-जीवननुं पण अभावपणुं थवुं संभवे छे, अर्थात् समुदायरुप एवा जे गुणो तेनो नाश थतां, ते गुण-समुदायनो धारक एवो जे गुणी आत्मा, तेनुं पण नाशपणुं ते उभयना अभिन्नपणाथी स्वभावीक सिद्ध थाय छे। आश्चर्यनी वात ए छे के उक्त मतावलंबी, जीव अने जीवना गुणोनुं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समवाय-संबंधपणुं होवानुं दर्शावे छे, अने समवाय-संबंधनो अर्थ तेना मतना विषे नित्य स्वीकारवामां आव्यो छे तो तेनुं नित्यपणुं कहेवुं अने नाश थवारुप पण कहेवुं ते स्वयं पोताना मतथी ज पोतानो मत बाधित थाय छे। मतलब के मुक्तावस्थामां गुणोनुं अभावपणुं थतुं नथी, पण संपुर्ण गुणोनुं प्रगट-पणुं थाय छे, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने अष्टगुण सहीत एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुण-विशेषना त्रीजा भेदमां प्रतिपादन करवामां आव्युं छे।

मश्करी मतावलंबी—मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनुं स्वरुप पुनः संसारमां आवा-गमन थतुं होवानुं स्वीकारे छे, परंतु ईश्वरनुं स्वरुप तेवुं नथी, कारण के ईश्वर-पदनो धारक एवो जे शुद्धात्मा तेनुं राग-द्वेषादि मलथी सर्व प्रकारे अने सर्व-काळथी मुक्तपणुं होवाथी तथारुप संसार उत्पादक कारणना अभावे तेनुं पुनः संसारमां आवागमन थवारुप कार्य ते सर्व प्रकारे असिद्धरुप ठरे छे। मतलब के तेनुं पुनः संसारमां आवागमन थतुं नथी, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने निरंजन एटले रागद्वेषादि एवा अशुद्ध विकारात्मक अंजनथी सर्व प्रकारे मुक्त एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुण-विशेषना त्रीजा भेदमां प्रतिपादन करवामां आव्युं छे।

बुद्ध मतावलंबी— मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनुं-पदार्थमात्रनुं-स्वरुप सर्वथा क्षणिक होवानुं स्वीकारे छे, परंतु ईश्वरनुं स्वरुप तेवुं नथी, कारण के पदार्थमात्रना विषे सामान्य विशेषात्मक—सामान्यमां वस्तुनुं ध्रुवात्मकपणुं, अने विशेषमां ते ध्रुव वस्तुना आश्रये वस्तुनी क्षणिक पर्यायनुं उत्पाद व्ययपणुं—एवा उभयात्मक धर्मो तेमां स्वभावीकज रहेला छे, तेनी परस्परनी सापेक्षतापुर्वक मिमांसा करतां उत्पाद-व्यय-ध्रुव सत् एम प्रमाणनयथी, वस्तुनी सहज सिद्धी थई शकवा योग्य छे। तेना वास्तविक रहस्यार्थने भुली ईश्वरना-पदार्थमात्रना-स्वरुपने सर्वथा क्षणिक होवानुं मानवाथी त्यां प्रत्यभिज्ञाननी सिद्धी कोई पण प्रकारे थई शकवा योग्य नथी, अने तेना अभावे संसार के मुक्तावस्था आदि कोई पण पदार्थनी व्यवस्थानुं यथार्थपणुं पण टकी शकवा योग्य नथी। आम वस्तुस्थिति होवाथी अहिं ईश्वरना-पदार्थमात्रना-स्वरुपने सामान्य एवी वस्तुदृष्टीए त्रीकाळ एकरुप, अने विशेष एवी पर्याय दृष्टीए क्षणिक अवस्थारुप एम उभयदृष्टीए वस्तु (Permanent With change) नो स्वीकार करवो ते योग्य छे, अने तेथी अहिं वस्तुनी प्रधानदृष्टीए मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने नित्य एटले शुद्धात्म-स्वरुपना अनुभवनी अखंड-स्थिरतारुप एकतारताने पामेल एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुण-विशेषना चतुर्थ भेदमां प्रतिपादन करवामां आव्युं छे।

सांख्य मतावलंबी—मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनुं स्वरुप सुख-रहित होवानुं स्वीकारे छे, परंतु ईश्वरनुं स्वरुप तेवुं नथी, कारण के संसार अवस्थाना विषे जीव जेम इंद्रियजन्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुखने वेदे छे, तेम मुक्तावस्थाना विषे अतिंद्रिय-सुख एटले निज स्वभावथी उत्पन्न थयेल एवा शांत-रसामृतनो अनुभव करे छे। मतलब के संसार अवस्थाना विषे रहेलुं पराश्रीत अने अस्थिर एवुं जे कल्पनात्मक सुख, तेनुं मुक्तावस्थामां अभावपणुं होवाथी ते अपेक्षाए त्यां तथा प्रकारना सुख-रहीत, अने स्वाश्रीत, अने स्थिर एवुं जे सत्-स्वरुपात्मक-सुख तेनुं त्यां सद्भावपणुं होवाथी ते अपेक्षाए त्यां तथा प्रकारना सुखसहीत एम मुक्तात्मानुं स्वरुप कहेवुं के समजवुं ते योग्य छे, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने परम शांत एटले स्वरुपथी उत्पन्न थता एवा सहज सुखमय शांत सुधामृतना आस्वादने अनुभवनारा एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुण-विशेषना पंचम भेदमां प्रतिपादन करवामां आव्युं छे।

ईशान मतावलंबी—मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनुं स्वरुप कृतकृत्य न होवानुं स्वीकारे छे, अर्थात् तेने पण कांई क्रियात्मक कर्म करवानुं रहेलुं छे, एम माने छे, ते मान्यतानुसार एवा ब्रह्मवादी पण ईश्वरना स्वरुपने सृष्टीकर्ता होवानुं आरोपण करे छे, परंतु ईश्वरनुं स्वरुप तेवुं नथी, कारण के ईश्वर-पदनो धारक एवो जे शुद्धात्मा, तेनु वास्तविक स्वरुप शरिर, इच्छा, अने क्रियारुप उपाधिथी सर्व प्रकारे रहीत एवुं निष्क्रीय छे, अने निष्क्रीय होवाथी तेना पर सृष्टीकर्तानुं आरोपण करवुं ते स्वभावीक ज असिद्धरुप ठरे छे, अने सृष्टीनुं स्वरुप अनादि-अनंत होवाथी तेनुं कर्तापणुं मानवुं ते पण एक बुद्धीनुं विपर्यासपणुं ठरे छे। मतलब के ईश्वरनुं स्वरुप शुद्ध स्वभाव-परिणामी होवाथी ते पर उपाधिथी रहीत एवुं सदा तेमनुं निष्क्रीयपणुं छे, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने कृतकृत्य एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुण-विशेषना छठ्ठा भेदमां प्रतिपादन करवामां आव्युं छे।

मंडली मतावलंबी—मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनुं स्वरुप सदा उर्ध्वगमन करतुं होवानु स्वीकारे छे, अर्थात् ते कोई पण स्थाने स्थिर निवासने पामता नथी, एम माने छे, परन्तु तेम नथी, कारण के अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये मुक्तावस्थाने पामेल एवो जे शुद्धात्मा ते उर्ध्वगमन करी मात्र एक ज समयमां लोकाग्रभागे स्थिर निवासने पामे छे, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने लोकाग्र-निवासी एटले लोकना अग्र-भागे स्थिर निवासने पामेला एवुं विशेषणं उपरोक्त सप्तात्मक गुण-विशेषना सप्तम भेदमां प्रतिपादन करवामां आव्युं छे।

आ प्रमाणे सिद्ध परमात्मानुं स्वरुप छे, ते अनुसार तेनी समालोचना करी जे जीव तेनो पोताना ज्ञानथी वास्तविक निर्णय करशे, ते दर्शन-विशुद्धीपुर्वक उपयोगनी अंतरंग सन्मुखताने पामशे, अने ते द्वारा मतार्थ-भावनी निवृत्ति पण थशे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपसंहार

卐

अहिं सुधी क्रमे कही, तने बोध अवस्था आठ।
ते विचारतां अंतर विषे, तेनो समजाशे परमार्थ ॥
हवे साधक श्रमणना नाम, भिन्न करी तेना परिणाम।
लक्षण-भेदे बोधुं कांय, सुण ते सन्मुख थईने आंय ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—अहिं सुधी अनुक्रमे तने आठ एवी बोध अवस्था कही ते अंतरना विषे विचारतां तेनो सर्व परमार्थ तने समजाशे। हवे तने तेवा साधक श्रमणना नाम तेना भिन्नत्वरुप परिणामनी लक्षणभेदे पृथकता करी कांईक बोधुं छुं, ते अहिं सन्मुख थईने हे शीष्य तुं आ जिन-प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आ ग्रन्थना प्रारंभमां सत्यार्थ बोधना सन्मुख थयेलो परम एवो जे आत्मार्थी जीव ते पोतानी प्राथमीक एवी ते बोध-अवस्थाना विषे सत्यार्थरुप एवी पोतानी आत्मार्थ जिज्ञासा उत्पन्न करी अने ते जिज्ञासापुर्वक पोताना उपादान कारणने तेना अनुकूळ निमितरुप एवा सद्गुरु सन्मुख प्रेरी, अने क्रमे क्रमे त्यां तथारुप एवा ते आत्मार्थ बोधनी अंतर्मुख विचारणाना बळे सम्यक्ज्ञान-दर्शनादिनी प्राप्ती पंचम एवी बोध-अवस्थाना विषे करी, अने क्रमे करी तेनुं स्वभाव एकत्वरुप स्थिरता-पणुं, अने ते अर्थे बाह्यांतर परम एवी निग्रंथ-दशानुं उपासवापणुं एम सम्यक् प्रकारे आदरी, अने ते द्वारा अंतिम परम एवी अष्टम बोध-अवस्थाना विषे पोते पोताना संपुर्ण वितराग स्वभावे परिणमी, अने त्यां सर्व प्रकारे शुद्ध बुद्ध थई शाश्वत एवा निर्वाण पदने पामे छे। तेनो जे कोई आत्मार्थी जीव आ आठे अवस्थाना क्रमानुसार बोधनी समालोचनापुर्वक विचार करशे, तेने पोताना स्वरुप-विकासना क्रमनो, अने ते अनुसार तेना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनो सहज एवो सम्यक् ख्याल आवशे, एम गुरुजी अहिं सुपात्र साधकने उद्देशीने कहे छे, अने ते साथे अहिं साधक श्रमणना भिन्नत्वरुप परिणामनी लक्षणभेदे पृथकता करी ते संबंधी शीष्यने पुनः गुरुजी नुतन उपदेश करे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनागम विषे कह्या, मुख्य श्रमणना बे प्रकार।
तेमां एक द्रव्य-लींगी ने, बीजा भावलींगी तुं धार ॥
द्रव्यलींगी अहिं कहीए ते, विमुख भावे वर्ते जे।
शुद्ध स्वभावनुं भुली भान, मिथ्याद्रष्टी तेने जाण ॥२॥

अन्वयार्थ—जिनागमना विषे मुख्यपणे श्रमण कहेतां साधुना बे प्रकार कह्या छे, तेमां एक द्रव्यलींगी, अने बीजा भावलींगी एम तुं अंतरना विषे धार। तेमां प्रथमना द्रव्यलींगी, अहिं तेने कहीए के जे पोताना शुद्ध स्वभावनुं भान भुली, विमुखभावे कहेतां पर्याय तरफना प्रधान-लक्षे वर्ती रह्या होय, अने तेथी तेने तुं मिथ्यादृष्टी जाण, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जिनागमना विषे मुख्यपणे श्रमण कहेतां साधुना द्रव्यलींगी अने भावलींगी एवा बे प्रकार कह्या छे, ते बंने प्रकारना साधु जीवनमां अहिं तेना पहेला प्रकारने मुख्य करी तेनी समालोचना करीए तो तेने द्रव्यलींगीपणे संबोधवानो हेतु मात्र तेना मिथ्यात्वजन्य अज्ञान-भावने लईने ज छे, अर्थात् ज्यां ज्यां जे जे श्रमण कहेतां साधुनुं पोताना शुद्ध स्वभावनी बेभानतापुर्वक एकांत विमुख भावे कहेतां देहादि परद्रव्य अने पर निमितजन्य एवा शुभाशुभ रागादि-भावोमां तन्मयाकार-पणे वर्तवापणुं थाय छे, के थई रह्युं छे, त्यां त्यां ते ते श्रमणनुं तथा प्रकारनुं अज्ञान मुख्य साधन होवाथी तेने मिथ्यादृष्टी, अने ते मिथ्यादृष्टी श्रमणने द्रव्यलींगी ए नामथी संबोधवामां आवे छे।

आ उपरथी समजाशे के सम्यग्दर्शनना प्रतिपक्षी आवरणरुप एवा मिथ्यात्वरुपी महादोषनी विद्यमानतापुर्वक थयेला मुनीलींगना स्वीकारने, के ते दोषनी विद्यमानतापुर्वक तथारुप लींगे विचर-नारने, द्रव्यलींगी ए नामथी संबोधवामां आवे छे। आवा द्रव्यलींगीपणे विचरनार श्रमणना अंतर-परिणामना विषे मुख्यमां मुख्य एवा ते मिथ्यात्वरुपी महादोषनी विद्यमानता टकेली होवाथी तेनो स्वर्थी विमुख एवो पर लक्ष त्यां स्वभावीक ज होय छे, अने तेम होवाथी ते तथारुप विमुख लक्षे अतत्व-श्रद्धानरुप एवा ते मिथ्यात्वरुपी मुळ बीजभुत दोषने अवलंबी ते द्वारा अन्य अनेक प्रकारना दोषने उत्पन्न करे छे। आम वस्तु-स्थिति होवाथी ज्यां सुधी जीव तथारुप एवा ते मुळ बीजभुत दोषनुं वास्तविक एवी तत्व-श्रद्धानपुर्वक अभावपणुं न करे, त्यां सुधी अन्य एके दोषनुं अभावपणुं मुनीलींगनो स्वीकार थवा छतां पण थई शकतुं नथी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—द्रव्यलींगी साधुने मिथ्यात्वरुपी महादोष विना, पांच अव्रतादिरुप एवा अन्य एके दोषनुं उदयपणुं होतुं नथी, तो पछी मिथ्यात्वना अभाव विना, त्यां अन्य दोषनुं अभावपणुं कई रीते थयुं ?

उत्तर—जिनागम दृष्टीए वस्तुना परमार्थने विचारीए तो मिथ्यात्वरुपी महादोषनुं अभावपणुं थया विना, तेना अंगभुत एवा श्रद्धानादि गुणनी, के पांच अव्रतादिरुप एवा चारित्रगुणनी, मलीन अवस्थारुप एवा अन्य एके दोषनुं अभावपणुं के तेना अभावपुर्वक तथारुप गुणनी निर्मल एवी निर्दोष शुद्धावस्थानुं प्रगटपणुं थतुं नथी। तेनी विशेष मिमांसा अर्थे अहिं मिथ्यात्व साथे अविनाभावी संबंध-रुप के तेना प्रतिपक्षीरुप एवा दोष-पोषक के निर्मल गुण-अवस्था रोधक मुख्यपणे द्वादश कारणोनुं निरुपण करवामां आवे छे।

१—मिथ्यात्व साथे त्रयात्मक मुढतानुं के बहिरात्म-भावनुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत सुदेवादिनी वास्तविक सद्‌समजणना के अंतरात्म-भावनी सन्मुखताना रोधकरुप एवा ते दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

२—मिथ्यात्व साथे अतत्व-श्रद्धानरुप एवा विपरिताभिनीवेशनुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत चतुर्थ गुणस्थानना रोधकरुप एवा ते दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

३—मिथ्यात्व साथे मिथ्याज्ञान अने अनंतानुबंधी चतुष्टयनुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत सम्यक्‌ज्ञान अने स्वरुपाचरण-चारित्रना रोधकरुप एवा ते दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

४—मिथ्यात्व साथे कर्मचेतना अने कर्म-फल-चेतनानुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत त्रण प्रकारना शल्यात्मक दोषपुर्वक भाव-कर्मने करवारुप अने सुख-दुखादिरुप एवा तेना फलने तन्मयपणे भोगववारुप एवा ते दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

५—मिथ्यात्व साथे देहीक बुद्धीरुप अहंनुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत देहादि समस्त पर-द्रव्यनी परिवर्तनशील क्रिया हुं करी शकुं, एवी मिथ्या मान्यतारुप दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

६—मिथ्यात्व साथे प्रथम कषायोदयजन्य अविरतीनी शुभाशुभ भावाश्रवरुप-क्रियानुं अने ते द्वारा थता भाव-बंधनुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत तथारुप दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

७—मिथ्यात्व साथे मतीश्रुतादि त्रण प्रकारना अज्ञाननुं अने ते अज्ञानपुर्वक ग्रहण थता साधुना द्रव्य-लींगनुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत तथारुप दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

८—मिथ्यात्व साथे मताग्रहाभिनीवेशनुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत विनयिक मिथ्यात्वनुं अने मतार्थ-द्दष्टीपुर्वक थता एवा बुद्धीपुर्वक रागादिभावनुं एवा ते दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

९—मिथ्यात्व साथे बंध योग्य एवी दर्शन सप्तकनी मुख्य एवी (१६-२५) ४१ प्रकृतिओनुं अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत पुण्यानुबंधी-पुण्यना रोधकरुप एवा ते दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

१०—मिथ्यात्व साथे शुद्धोपलब्धीरुप ज्ञानचेतनानुं के शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मनुं प्रतिपक्षीपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत तथारुप लब्धी गुण धर्मनुं प्रगटपणुं थतुं नथी।

११—मिथ्यात्व साथे विरती परिणामरुप एवा सुप्रत्याख्याननुं प्रतिपक्षीपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत चारित्रगुणनी तथारुप निर्मल अवस्थानुं प्रगटपणुं थतुं नथी।

१२—मिथ्यात्व साथे सम्यक्त्रयपुर्वक उपलब्ध थता एवा संवर निर्जरारुप भाव-मोक्षमार्गनुं प्रतिपक्षीपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत तथारुप निर्मल गुण-अवस्थानुं प्रगटपणुं थतुं नथी।

आ प्रमाणे मिथ्यात्व साथे तेना अविनाभावी संबंधरुप के प्रतिपक्षीरुप एवा दोषपोषक के निर्मल गुण-अवस्था रोधक मुख्यपणे द्वादश कारणो छे, तेनी तत्व-मिमांसा करतां समजाशे के द्रव्यलींगी साधुने पंच-महाव्रतादिनो स्वीकार सर्व परिग्रहना अभावरुप एवी शरिरनी बाह्य नग्न दिगम्बर-अवस्थापुर्वक थवा छतां अने ते व्रतोनुं (२८) मुळगुण सहीत कहेतां पंचमहाव्रत, पंचसमिति, पंच इंद्रियनिरोध, षट आवश्यक, नग्नता, केशलोच, अस्नान, अदंतधोवन, भुमीशयन, स्थितिभोजन, अने एक वखत आहार ग्रहण एम तेनुं निरतिचार पालन करवा छतां, पण विष मिश्र भोजनना जेम तेनुं सर्व साधन मिथ्यात्वना उदयपुर्वक एवुं एकान्त पर-लक्षे होवाथी तेने विषरुप के दोषरुप ज कहेवा योग्य छे। मतलब के मिथ्यात्वरुपी विषना मिश्रपणाना लीधे त्यां एके व्रत सत्यरुप अर्थात् दोष-रहीत होतुं नथी।

प्रश्न—मिथ्यात्वनी अपेक्षाए तो तेनुं सर्व व्रतादि साधन दोष-युक्त छे, पण ते व्रतोनुं निरतिचार पालन करवानी अपेक्षाए तेने दोष रहीत कही शकाय के केम?

उत्तर—न कही शकाय, तेम कहेवाना हेतुमां पण अहिं मिथ्यात्वनी ज अपेक्षा रहे छे, कारण के तेना उदयपुर्वक थता एवा ते व्रतादि साधनमां तेनुं अहं-ममत्वरुप परिणमन स्वभावीक ज होय छे, जेम के हुं पर जीवोनी रक्षा करुं छे, सत्य वचन बोलुं छुं, अचौर्यव्रतनुं पालन करुं छुं, सर्व प्रकारे ब्रह्मचारी छुं, अने वस्त्रादि सहीत सर्व प्रकारना बाह्य परिग्रहथी रहीत छुं, आवा प्रकारनुं अहं-ममत्वरुप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिणमन मात्र एक मिथ्यात्वना योगे एवा ते पंचव्रतादि साधनमां ते द्रव्यलींगी साधुनुं अवश्य होय छे, अने तेथी तेनुं निरतिचार पालन जोईए तेवा हठाग्रह भावपुर्वक थवा छतां, के स्थुल-दृष्टीए तेम देखावा छतां, पण तेमां उपरोक्त दोषनुं मुख्यपणुं होवाथी तत्व-दृष्टीए तेने दोषसहीत के दोषरुप ज कहेवा योग्य छे, अने तेज हेतुथी तथा प्रकारना व्रत-नियमादिने जिनागमना विषे दुप्रत्याख्यानना नामथी संबोधवामां आवे छे।

आ उपरथी समजाशे के सर्व दोषना मुळ बीजभुत एवा मिथ्यात्वरुपी महादोषनुं अभावपणुं थया विना, तेना आश्रयभुत एवा अन्य एके दोषनुं अभावपणुं थई शकवा योग्य नथी, अने तेथी तथा-रुप मुळ बीजभुत दोषना सद्भावपुर्वक पंचमहाव्रतादिनो थतो स्वीकार ते कोई पण प्रकारे आत्मार्थ हेतुभुत के स्वने उपकाररुप गणावा योग्य नथी, एम जिनागम-दृष्टीए समजवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

बीजा भावलींगी कह्या, ते सदा स्वरुपे सावधान।
सर्व शुभाशुभ भावनुं, त्यां वर्ते भेदविज्ञान॥
तेथी सुर्य खजुआनी जेम, बंनेमां रह्यो अंतर तेम।
ते विचार तुं अहि अंतर बाळ, लक्षण-भेदे लावी ख्याल॥३॥

अन्वयार्थ—बीजा जे भावलींगी कह्या ते सदा स्वरुपे सावधान होय छे, अने तेम होवाथी सर्व शुभाशुभ भावोनुं भेदविज्ञान त्यां स्वभावीक ज वर्ततुं होय छे, अने तेथी सुर्य अने खजुआनी (आगीओ ए नामनुं जंतु के जे तिमिरना विषे क्वचित् कृत्रिम प्रकाश करे छे ते) जेम बंनेमां मोटो अंतर रहेलो छे, तेनो हे बाळ तुं लक्षण-भेदे ख्याल लावी अहिं तेने आ जिनप्रवचनरुप श्रवण थयेला बोधना अंतर-लक्षपुर्वक विचार।

विशेषार्थ—जिनागमना विषे प्रतिपादन करेला एवा बीजा प्रकारना भावलींगी श्रमणनी अहिं समालोचना करीए तो तेने भावलींगीपणे संबोधवानो हेतु मात्र तेना ज्ञानादि-सम्यक्त्रयरुप एवा शुद्ध चैतन्यात्मक गुणविशेष परिणमनने लईने ज छे, अर्थात् जे कोई स्वरुप-साधक जीव सम्यक्ज्ञान-दर्शनादि एवी आत्मिक-गुण-अवस्था विशेषनी उपलब्धीपुर्वक मुनीलींगनो स्वीकार करी तथारुप गुणविशेष परिणमननी अंतर्मुख स्थिरताना लक्षे विचरे छे, ते श्रमणनुं तथा प्रकारनुं सर्व साधन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वभाव परिणामरुप एवुं ज्ञान-मुख्य होवाथी तेने सम्यक्द्दष्टी, अने ते सम्यक्द्दष्टी श्रमणने भावलींगी ए नामथी संबोधवामां आवे छे।

आ उपरथी उपरोक्त बंने श्रमणोनी समालोचना करीए तो स्पष्ट समजाशे के ते बंनेमां सुर्य अने खजुआनी जेम एटले सुर्यनो प्रकाश स्वभावीक ज पोताना वास्तविक गुणधर्मने अवलंबीत होवाथी ते अनुसार ते सर्वत्र व्यापेला तिमिरनो नाश करी उज्जवळ एवा प्रकाशने प्रगटावे छे, अने खजुओ कहेतां आगीआनो प्रकाश स्वभावीक ज पोताना अवास्तविक गुण धर्मने अवलंबीत होवाथी ते अनुसार तेनो कृत्रिम प्रकाश अल्पांशे पण तिमिरनो नाश करवाने समर्थ थतो नथी, तेम उपरोक्त एवा ते बंने श्रमणोना विषे रहेलो एवो जे पुर्व-पश्चिम जेटलो अंतर तेने ते अनुसार एटले वास्तविक गुण धर्मने अवलंबीत एवा भावलींगी श्रमणने सम्यक्द्दष्टीरुपे, अने अवास्तविक गुणधर्मने अवलंबीत एवा द्रव्य-लींगी श्रमणने मिथ्याद्दष्टीरुपे एम लक्षणभेदे रहेली बंनेनी पृथक्ताने पृथक्त्वरुपे वास्तविक एवी जिनागम-द्दष्टीए अवधारवा योग्य छे।

उपरोक्त बोधनो सम्यक् अवधार थतां आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाशे के मोक्षमार्गनी शरुआतमां के ते मार्गनी आदिथी अंत पर्यंत एवी मुनीलींगनी, निग्रंथ दशानी, के साधुजीवननी सर्व बाह्यांतर साधनामां सर्व दोषना मुळ बीजभुत एवा मिथ्यात्वरुपी महादोषनुं स्व-लक्षे सर्वथा अभावपणुं होवुं ए प्रथमथी ज परम आवश्यकरुप छे, कारण के ते विना, ज्ञानादि सम्यक्-त्रयरुप एवा मोक्षमार्गनी, के ते मार्गना हेतु-लक्षने अवलंबीने थती एवी लींग परिवर्तनरूप बाह्यांतर सर्व साधनात्मक क्रियानी, अल्पांशे पण सिद्धी थई शकवा योग्य नथी, एम आत्मार्थी जीवे आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक समजवा योग्य छे, अने ते समजपुर्वक तथारुप दोषनुं अभावपणुं करवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते उभयना भेदत्वने, जाणे आत्मार्थी जन जेह।
सम्यक्द्दष्टी श्रमणने, सेवे सद्गुरु मानीने तेह ॥
शीष्य कहे तेवा गुरुनां शुं, यथार्थ लक्षण पुछुं हुं।
गुरुजी कहे सुण तुं बोध, ते लक्षण स्पष्ट कहुं अविरोध ॥४॥

अन्वयार्थ—ते उभय श्रमणना भेदत्वने जे कोई आत्मार्थी जीव जाणे छे, एटले पोताना ज्ञानमां तेनो साचो निर्णय वर्ते छे, ते जीव सम्यक्द्दष्टी श्रमणने सद्गुरु मानीने सेवे छे, एटले तेनी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आश्रयभक्तिमां योजाय छे। अहिं शीष्य प्रश्न करे छे के हे गुरुजी! तेवा सद्गुरुनां यथार्थ लक्षण शुं? ते हुं आपने पुछुं छुं। अहिं गुरुजी उत्तर आपतां कहे छे के ते लक्षण पुर्वापर अविरोध एवां हुं तने स्पष्ट करीने कहुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—लक्ष्य एवी वस्तुनी वास्तविक प्रतितीनो सर्व आधार वास्तविक एवा तेना लक्षण पर ज अवलंबीत होवाथी जीवे पोतानी प्राथमिक भुमीकामां पोतानी लक्ष्यरुप वस्तुना लक्षणनुं एटले अहिं चालु विषयना अनुसंधानमां सम्यग्दर्शनथी विभुषित एवा भावलींगी निर्ग्रंथ सद्गुरुनी योग्य प्रतितीनुं सम्यक् प्रकारे संशोधन करवाना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमां योजावुं ते छे, अने एज लक्ष्यरुप वस्तुनी वास्तविक प्रतितीनो सम्यक् उपाय छे। आवा प्रकारनो आत्मार्थ सद्विवेक उपरोक्त एवा सुसाधकने उपलब्धरुप होवा छतां पोते पोतानी सर्वांग समाधानी अर्थे सम्यग्दर्शनथी अलंकृत एवा सद्गुरुनां यथार्थ लक्षण शुं? एम प्रत्यक्ष एवा सद्गुरु सन्मुख पोते विनयपुर्वक प्रश्न उपस्थित करे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ज्यां प्रयोजनभुत पदार्थनुं, होय आत्म-परिणामी ज्ञान।
ते साथे आशयभेदथी, होय अविरोध वेण प्रमाण॥
समदर्शी वेण अपुर्व होय, दृष्टीमां स्व द्रव्यने जोय।
ज्ञाता भावे सदा जे स्थित, ते सद्गुरु लक्षण जाण खचीत॥५॥

अन्वयार्थ—ज्यां प्रयोजनभुत पदार्थनुं ज्ञान स्वभाव परिणामरुपे स्थिरताने पाम्युं होय अने ते साथे जेनुं वचन आशयभेदपुर्वक एटले पुर्वापर अविरोध एवुं प्रमाणरुप होय, ते साथे समदर्शीपणुं अने वाणीनुं अपुर्वपणुं होय, ते साथे दृष्टीमां मात्र एक पोताना त्रीकाळी एवा शुद्ध द्रव्य-स्वभावने ज जे जोनारो होय, अने ते साथे पोताना ज्ञाता-स्वभावे सदा जे स्थित होय ते सर्व खचीत करीने सद्गुरुनां योग्य लक्षणो छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—जे पदार्थना जाणवाथी सुखनो सर्व प्रकारे योग, अने दुःखनो आत्यंतिक वियोग, वा निवृति थाय, तेने प्रयोजनभुत पदार्थना नामथी संबोधवामां आवे छे, तेनो समावेश मुख्य-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पणे चार अनुयोगमां प्रधानरुप एवा द्रव्यानुयोगना विषे थाय छे। तथारुप पदार्थना वास्तविक बोध-पुर्वक उत्पन्न थयेलुं एवुं जे ज्ञान, ते ज्यां स्वभाव परिणामरुपे स्थिरताने पाम्युं होय, एटले तथारुप तत्वार्थ-बोधना अंतर्मुख सिंचनथी भेदाभेद दृष्टीना सम्यक्भानपुर्वक पोतानी विर्यात्मक-रुचीनुं वलण अभेदनी अंतरंग सन्मुखता तरफ ढळेलुं होय, अने ते साथे जेनुं वचन आशयभेदपुर्वक एटले निश्चय व्यवहारनी अंतरंग संधीना हेतु-लक्षने अवलंबी मुख्य गौण दृष्टीए उपदेशनुं प्रतिपादन थतुं होय, अने पुर्वापर ते अविरोध एटले जिनाशय श्रुतना अभिप्रायने अनुसरतुं एवुं प्रमाणरुप होय, अने ते साथे समदर्शीपणुं एटले समस्त ज्ञेयजन्य पदार्थो प्रत्ये निस्पृह-भावरुप एवुं शुद्ध वितरागपणुं वर्ततुं होय, अने ते साथे वेण अपुर्व एटले जे वचन पुर्वे कदी पण श्रवण न कर्युं होय तेवुं आत्म-स्पर्शी, अपुर्व आत्मार्थ गुणप्रेरक, अने शांत रसोत्पादक एटले वैराग उपशम भावने पोषण आपनारुं होय, अने ते साथे दृष्टीमां स्व-द्रव्यने जोय एटले पोतानी दृष्टीना विषे ज्ञानादि अनंत गुण पर्यायना एक पिंडरुप एवो जे पोतानो त्रीकाळी शुद्ध चैतन्यघन मुळ वस्तुनो स्वभाव तेने ज पोताना स्वामित्वभावनी एकत्व-बुद्धीपुर्वक जे जोनारो कहेतां ते रुपे वर्तनारो होय, अने ते साथे ज्ञाता स्वभावे सदा जे स्थित एटले स्व-पर-प्रकाशकरुप एवुं जे पोतानुं ज्ञान सामर्थ्य ते पोताना विषे उपलब्धरुप थवाथी स्व पुर्वक परने अने परपुर्वक स्वने एम जाणवारुप स्वभावनी मुख्यतापुर्वक ज्ञाननुं ज्ञानमां स्थिरतापणुं वर्ततुं होय। आवा परम लक्षणोथी जे पुरुष अलंकृत होय ते निर्ग्रंथ-दशाना साधक पुरुषने खचीत करीने सद्गुरु ए नामथी संबोधवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

तेवा सुगुरुनी सेवना, करे आत्मार्थी जन जेह।
तो ते अनुकूल संधीथी, पामे सम्यक् बोधीने तेह॥
ते वण अन्य गुरुनो संग, स्वरुप घातक तेह प्रसंग।
अश्रेय पामे विशेष ते, दृढ करी मिथ्यात्व ए॥६॥

अन्वयार्थ—तेवा सद्गुरुनी सेवना जो कोई आत्मार्थी जीव करे तो ते संधी आत्मार्थ अनुकूलरुप होवाथी ते जीव सम्यक् बोधीने पामे, ते सिवाय कोई जीवने अन्य गुरु कहेतां कोई अज्ञानी गुरुनो संग थयो होय तो ते योगे अतत्व-श्रद्धानरुप एवा मिथ्यात्व अज्ञानादिने पोते विशेष दृढ करी विशेष प्रकारे अश्रेयने पामे छे, अने तेथी ते प्रसंगने जीवना स्वरुप-घातकरुप कहेवा योग्य छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषार्थ—जे जीवने सम्यग्दर्शन जेवी परम वस्तुनी प्राप्ती थई छे, अने थाय छे, तेमां त्रणे काळना विषे तेना अनुकूल निमितरुप एवा प्रत्यक्ष सदगुरुना योगनी ज अपेक्षा रहे छे, कारण के ते सिवाय अन्य स्थाने ते वस्तु होती ज नथी, अने तेथी प्रत्यक्ष सद्गुरुनुं ते अर्थे अत्यंत आवश्यकपणुं जिनागमना विषे ठाम ठाम प्रदर्शीत करवामां आव्युं छे, अने तेज हेतुने अहिं पण मुख्य करी उपरोक्त सुत्रमां तथा-प्रकारनी अनुकूल संधीनुं निरुपण करवामां आव्युं छे, तेना वास्तविक बोध परमार्थने जे कोई आत्मार्थी जीव आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक अवधारे छे, ते जीव निमित उपादाननी अनुकूल संधीना सिद्धांतिक नियमने अवलंबीत थई एटले ते नियमानुसार प्रत्यक्ष एवा कोई सद्गुरुनो योग मेळवी निज उपादान शक्तिने तेमना तत्व-बोध सन्मुख प्रेरे छे, अने क्रमे करी ते द्वारा ते शुद्ध सम्यग्दर्शनने पण पामे छे, ते सिवाय जे कोई जीव तत्व-बोधनी के स्व-आत्मार्थनी मुढता अने विमुखतापुर्वक कोई असद्गुरुना आश्रये तेने सद्गुरु मानी वर्ते छे, ते जीव तथारुप तत्व-विमुख कुसंगना योगे अतत्व-श्रद्धानरुप एवा मिथ्यात्व अज्ञानादिने एकांत मतार्थ भावपुर्वक विशेष दृढ करी ते द्वारा पोते विशेष अश्रेयने पामे छे, अने तेथी ते प्रसंगने ते जीवना स्वरुप घातकरुप कहेवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

सुगुरु अने कुगुरुमां, रह्यो अंतर एम अपार।
एक निर्मल चक्षुवंत ने, बीजो अंधपणे त्यां धार ॥
तेनो सुविवेक प्रगटे चित्त, तेने थाय सुगुरु प्रतित।
ते वण बोधी न पामे कोय, एवो आशय जिननो होय ॥७॥

अन्वयार्थ—आ प्रमाणे सद्गुरु अने असद्गुरुमां अपार कहेतां पुर्व-पश्चिम जेटलो अंतर रहेलो छे, एकने ज्ञानरुपी निर्मल चक्षु वर्ते छे, अने बीजाने अज्ञानरुपी अंधत्व वर्ते छे, एम तुं धार। जेना चित्तना विषे तेनो सद्विवेक प्रगटे छे, एटले सत्यासत्य एवा ते बंने गुरुओनुं परिक्षा-प्रधानपणुं स्फुरायमान थाय छे, तेने ज सद्गुरुनी प्रतितीनो सम्यक् लक्ष आवे छे, ते वण एटले तेवा प्रकारनो सद्विवेक प्रगट्या विना, कोई जीव सम्यग्दर्शनरुपी परम लाभने पामी शकतो नथी, एवो श्री जिननो आशय कहेतां अभिप्राय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेषार्थ—जिनागम दृष्टीए वस्तुना परमार्थने विचारिए तो जे पुरुषना अंतरात्म-भाव ना विषे वास्तविक एवा वस्तु-स्वभावना बोधनुं सम्यक्रूप एवुं शुद्ध परिणमन थई ते द्वारा ज्ञानरुपी दिव्य-प्रकाश स्फुरायमान थयो छे, अने ते प्रकाशना बळे श्री जिनना अंतरमां रहेलो परमार्थ जे शुद्धात्म-स्वरुपना अनुभवपुर्वक जाणे छे, अने वेदे छे, तेज पुरुष तेनो मार्गदर्शक बनवा योग्य छे, के तेना मार्मीक रहस्यार्थने उपदेशवा योग्य छे, अने तेना उपदेशनुं निमित पामीने तेवा तत्व जिज्ञासु जीवो तथारुप बोधने अंतरं परिणामी करी सम्यग्दर्शनरुपी परम लाभने पण पामी शकवा योग्य छे, ते सिवाय बाह्य-वेषादि सामग्रीना बळथी मात्र व्यवहार-दृष्टीए जेमने श्रीं जिनना आशयनुं उपदेशकत्व प्राप्तरुप छे, ते पुरुषो देशेन्युन एवा दश पुर्वनुं श्रुतज्ञान धरावता होय अने तथारुप बाह्य सामग्रीनुं निमित पामीने अनेक जीवो त्याग वैरागादिरुप एवा बाह्य शुभ साधनोनी सन्मुखताने पामता होय, तो पण तेमनो उपदेश एक पण जीवने परमार्थ सन्मुख करावी शकतो नथी, कारण के तथारुप परमार्थ मार्गनी जेणे दिशा ज जोई के जाणी नथी, अनुभवी के वेदी नथी, एवो ते सर्वथा चक्षु-अंध-पुरुष ते अन्यने जोवा जाणवाना के अनुभवरुपी दीपक प्रगटाववाना निमितिभुत शी रीते थई शके ? अर्थात् न ज थई शके, एम सहज बुद्धीना सद्विवेकने अवलंबतां समजाय तेवुं छे। मतलब के तेवा असद्गुरुना तत्व-विमुख उपदेशथी के तेना छटादार भाषणथी आकर्षाई तेवा अनेक आत्मार्थ सद्विवेकथी शुन्य जीवो त्याग-वैरागादिरुप एवां बाह्य-साधनोनुं अंगीकृतपणुं करे ए बनवा योग्य छे, पण ते योगे एटले तेना उपदेशनुं निमित पामीने एक पण जीव बोध-बीजने एटले सम्यक्ज्ञान दर्शनादि एवा शुद्ध आत्म-धर्मने पामे ए त्रणे काळना विषे बनवा योग्य नथी, अने एज श्री जिननो अंतर-आशय कहेतां अभिप्राय छे।

प्रश्न—जो एम ज होय तो जिनागमना विषे द्रव्यलींगी साधुने सम्यक्त्वादि गुण-विशेष परिणमननुं अभावपणुं छतां, तेना उपदेशथी अन्य जीवो तथारुप गुण-धर्मने पामे, एवा बोध-विशेष निरुपणनो शुं हेतु हशे ?

उत्तर—आवा प्रकारनुं बोध-विशेष निरुपण एज प्रथम तो जिनागमना विषे बाधकरुप छे, अने ते बाधकरुप कथनने जिनागमनुं कथन मानवुं ते पण एक बुद्धीनुं विपर्यासपणुं ठरे छे। मतलब के ते कथन जिनागमनुं नथी, तेम छतां आजे लगभग जैनावलंबनी जीवो श्रवणोपश्रवण वात पर पोताना अज्ञानजन्य अभिप्रायने दृढ करी सौ कोई ते अनुसार एटले द्रव्यलींगी साधुथी जीव सम्यक्-त्वादि आत्मधर्मने पामी शके छे, एवुं मुख्यरुप कथन जिनागमना विषे होवानुं माने छे, अने तेनी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

साक्षीरुपे कोई तेवा जैन नामथी प्रसिद्ध एवा आगम विरोधी कथनने मुख्य करी ते द्वारा पोतानी विपर्यय मान्यतानी विशेष प्रकारे पुष्टी पण करे छे। मतलब के तेवा कथननो समावेश जिनागम ना विषे थई शकवा योग्य छे के केम ? अर्थात् तेने जिनागम कही शकाय के केम ? आवा प्रकारनो वास्तविक निर्णय जीवे पोतानी अबोध-दशाने वश थई कर्यो नथी, अने तेथी तेवा विरोधात्मक कथननी परंपरा आज-पर्यंत जिनागमना नामथी प्रसिद्ध थई टकेली प्रत्यक्ष जोवामां आवे छे।

प्रश्न—तथा प्रकारना विरोधात्मक कथनना परिहारनो वास्तविक एवी जिनागम-दृष्टीए शुं उपाय छे ?

उत्तर—सम्यग्दर्शननी उपलब्धी नियमा पंच-लब्धीपुर्वक ज थाय छे, अने तेथी तेनुं बोध-विशेष परिणमन वास्तविक एवी जिनागम-दृष्टीए थवुं तेज तथा प्रकारना विरोधात्मक कथनना परिहारनो सम्यक् उपाय छे, एटले अहिं तथारुप लक्षे तयारुप बोध-विशेषनुं विशेष प्रकारे निरुपण करवामां आवे छे।

(पंच लब्धीनुं स्वरुप)

क्षायोपशमीक

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे तेना पोताना कारणे ज्ञानावरणादिरुप एवी सर्व घातिप्रकृतिओनुं उदयाभावी क्षयरुप थवुं, उदय आववा योग्य एवी ते प्रकृतिओनुं उपशमरुपे परिणमवुं अने ते साथे तथारुप कर्मोनो देशघाति-प्रकृतिओनुं उदयरुपे रहेवुं ते।

विशुद्धी

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तथारुप एवा ते निमितरुप कर्मनी तथा प्रकारनी क्षायोपशमीक अवस्था तेना पोताना कारणे थतां नैमितिक एवा जीव भावना विषे तत्व-सन्मुख थवा योग्य एवुं विशुद्धरुप परिणमन जीवना पोताना कारणे थवुं ते।

देशना

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तथारुप विशुद्धीना बळे जीव भावना विषे तत्व-बोध श्रवण जिज्ञासा उत्पन्न थवी, अने ते अनुसार प्रत्यक्ष एवा कोई सम्यक्ज्ञानी पुरुषना योगे श्रवण थयेला बोधनो निर्णयात्मक अवधार स्थुल बोध परिणमनरुपे थवो ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रायोग्य

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तथारुप देशना-लब्धीनो स्थुल बोध, परिणमनरुपे अवधार थतां, तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे ज्ञानावरणादिरुप एवी कर्म-प्रकृतिओनी सत्तानुं मंदत्व-रुप परिणमन थई तेना स्थिति-बंधनुं प्रमाण अंतः क्रोडाक्रोडी अवशेष काळ-प्रमाण रही जवुं ते ।

करण

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार देशना-लब्धीरुप एवा स्थुल बोधना सम्यक् चिंतवनना बळे सम्यग्दर्शनना अभेद-विषयरुप एवा अखंड-आत्मद्रव्यमां स्वभाव एकत्वरुप परिणमन थतां, त्यां स्वसंवेदन-रुप एवी सुक्ष्म बोध परिणमनरुप अवस्थानुं कहेतां करण-लब्धीरुप निर्मल पर्यायनुं प्रगटपणुं थवुं ते ।

आ प्रमाणे पंच लब्धीनुं स्वरुप छे । अहिं हवे तेना परस्पर संबंध-विशेषरुप बोधनी समालोचना करीए तो आदिनी चार लब्धी परस्पर संबंध-विशेषरुप होवाथी प्रथमनी एक लब्धी उत्पन्न थतां, बीजी, त्रीजी, अने चोथी एम अनुक्रमे चारे लब्धी जीव पुद्गलना निमित-नैमितिक संबंधने लईने पोत पोताना कारणे उत्पन्नरुप थई जाय छे, अने पांचमी करण-लब्धी सम्यग्दर्शननी उपलब्धीना समये ज प्रगटे छे, अने तेमां पण जीव पुद्गलनुं परस्पर निमित-नैमितिकपणुं होवानी अपेक्षा रहे छे । तथा-रुप पांचे लब्धीमां जीवना सद् समजणपुर्वकना पुरुषार्थनी अपेक्षा प्रधानरुप रहेती होवाथी उपरोक्त पांचे लब्धीमां तथा प्रकारना जीवना पुरुषार्थनुं ज मुख्यपणुं दर्शाव्युं छे, अने तेना बाह्य निमितनी अपेक्षाए मात्र एक सम्यक्ज्ञानी पुरुष ज प्रधानरुप होवाथी तेनुं विशेष महत्वपणुं तथारुप निमितनी अपेक्षाए प्रतिपादन करवामां आव्युं छे, अने ते अनुसार तेनुं स्पष्टार्थ विवरण चालु सुत्रना विशेषार्थ बोधमां करी द्रव्यलींगीना उपदेशथी अन्य जीवनी आत्मार्थ सिद्धी न थती होवानुं विशेष प्रकारे सुचव्युं छे, तेनी सन्मुख भावे विचारणा थतां आत्मार्थी जीवने ते सहज समजावा योग्य छे । हवे अहिं देशना-लब्धीना प्रधान लक्षे पंचलब्धी संबंधीना खास नियमोनुं प्रतिपादन करवामां आवे छे ।

देशनादि पंचलब्धीना नियमोनुं स्पष्टार्थ विवरण

१—सम्यग्दर्शननी उपलब्धी नियमा पंचलब्धीपुर्वक ज थाय छे, अने तेथी सम्यग्दर्शननी उपलब्धी ना समये ते लब्धीओनुं होवुं अनिवार्यरुप छे ।

२—देशना-लब्धीना विषे संप्राप्त थयेला बोधनुं स्थुल परिणमन होवा छतां बोधना निर्णयात्मक अवधारनुं तेज क्षेत्र मुख्यरुप होवाथी आदिनी चार लब्धीमां तेनुं महत्वपणुं छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३—देशना-लब्धीरुप बोधना निर्णयात्मक अवधारमां गृहीत-मिथ्यात्वनुं अभावपणुं थतुं होवाथी त्यां देवादित्रयनी स्फुरेली प्रतिती बोध छतां निःशंकरुप होय छे ।

४—देशना-लब्धीरुप बोधना निर्णयात्मक अवधारथी आत्मार्थ-साधनामां आत्मार्थ अनुकूल निमितो कहेतां देव, गुरु, शास्त्र केवा प्रकारना होवा जोईए, अने तेनी उपलब्धी क्या क्षेत्रे थवी जोईए, ते व्यवहार सम्यग्दर्शननी उपलब्धीरुप क्षेत्र, प्रतितीमां आवतां सहज प्रतितीरुपे मतमतांतरनी समालोचनापुर्वक दृढ थाय छे ।

५—देशना-लब्धीनी प्राप्ती प्राथमीक बोध सन्मुखवर्ती जीवोने सीधी रीते जिनागम द्वारा थई शकती नथी पण ते अर्थे तेवा कोई आत्मज्ञ कहेतां सम्यक्ज्ञानी पुरुषनी ज अपेक्षा रहे छे, ए पण एक खास नियम छे ।

६—देशना-लब्धीरुप स्थुल बोधना अंशत्वरुप परिणमन विना, क्षायोपशमीक अने विशुद्धी एवी आदिनी बे लब्धी थई शके नहिं, अने देशना-लब्धीरुप स्थुल बोधना निर्णयात्मक अवधार विना, चोथी प्रायोग्य-लब्धी प्रगटी शके नहिं, ए पण एक खास नियम छे ।

७—देशना-लब्धी विना कोई जीवने निश्चय-सम्यग्दर्शननी उपलब्धी थई शकती नथी, अने देशना-लब्धीनुं उत्पत्ति क्षेत्र सम्यक्ज्ञानी पुरुष विना, अन्य एवुं कोई होतुं नथी, ए पण एक खास नियम छे ।

८—देशनादि चार लब्धी विना सम्यग्दर्शन सन्मुख थई शकातुं नथी, अने सम्यग्दर्शन करण-लब्धीनी उपलब्धी विना प्राप्त करी शकातुं नथी, ए पण एक खास नियम छे ।

९—देशनादि चार लब्धी थाय त्यां सम्यग्दर्शन थवुं ज जोईए, एवो खास नियम नथी पण सम्यग्दर्शननी उपलब्धी समये देशनादि पांचे लब्धी होवीज जोईए ए खास नियम छे ।

१०—देशना-लब्धीरुप बोधने स्थुल बोध परिणमन कहेवानो हेतु निश्चय-सम्यग्दर्शननी अपेक्षाए छे, पण ते बोध श्री जिनना अंतर आशयने अनुसरतो एवा सम्यक्ज्ञानी पुरुषथी संप्राप्तरुप थयेलो होवाथी ते द्वारा सम्यग्दर्शननी सिद्धी तात्कालीक के ते पछी स्व-सन्मुख थनारने अवश्य थवा योग्य छे ।

११—देशना-लब्धीनी उपलब्धीने पामेलो एवो सम्यग्दर्शनरुपी दिव्य-प्रकाशनी सिद्धीनो जिज्ञासु अंधकाळ सम अज्ञानी गुरुने अनुसरे ए त्रणे काळना विषे असंभवीत होवाथी तेम बनतुं ज नथी, ए पण एक खास नियम छे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१२—स्वरुपशुन्य वक्ता एवा द्रव्यलींगीना उपदेशथी देशना-लब्धी के सम्यक्त्वनी उपलब्धी थती होय तो स्वरुपस्थ वक्ता एवा भावलींगीनुं महात्म्य कांई पण प्रशंशवा योग्य रहेतुं नथी, ते सुज्ञ जीवे विचारवा योग्य छे।

उपरोक्त बोधथी आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाशे के जे पुरुष सम्यक्त्वादि स्वरुप-बोधथी अलंकृत छे, तेज पुरुष सत्यमां सत्यरुप एटले आत्मार्थ-साधनामां अनुकूल निमितरुप होवाथी तेवा कोई आत्मार्थी जीवने तथारुप बोध-विशेषना कारणरुप थई शकवा योग्य छे, अने तेथी जे जीवने तथारुप बोधनुं एटले निमित-उपादाननी अनुकूल संधी होवा संबंधीना सिद्धांतिक नियमनुं वास्तविक एवुं सम्यक् जाणपणुं वर्ते छे, ते जीव ज निमित-उपादाननी अनुकूल संधीना संप्राप्त योगथी सम्यक्ज्ञान दर्शनादि एवा पोताना वस्तुस्वभावने के शुद्ध आत्म-धर्मने पामे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं उत्तम, मध्यम, अने कनिष्ट एवा त्रण प्रकारना श्रोताओनुं लक्षणभेदे आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

जिनाशय तत्वार्थने, समजे श्रोता तेह सुजाण।
सुविवेक सत्यासत्यानो, सरल मध्यस्थ सुविचारवान॥
विशाल बुद्धी पण ते साथ, सुगुरु भक्ति अंतर आत्मार्थ।
पहेला प्रकारना उत्तम ते, बोधी योग्य सभा पण ए॥८॥

अन्वयार्थ—जेना अंतर परिणामना विषे सत्यासत्यनो परम सद्विवेक प्रगटयो होय, अंतरमां सरलपणुं अने मध्यस्थपणुं होय, परम सुविचारकपणुं अने बुद्धीनुं विशालपणुं वर्ततुं होय, अने ते साथे सद्गुरु प्रत्ये विनयादि सेवनारुप भक्तिनुं प्रधानपणुं अंतर आत्मार्थ-भावपुर्वक स्थिरताने पाम्युं होय, एवो जे सुजाण कहेतां साची समजणनो धारक श्रोता होय तेज जिनाशय तत्वार्थ-बोधना परमार्थने समजी शकवा योग्य छे, अने तेथी तेवा प्रकारना श्रोताओने पहेला प्रकारना एवा उत्तम श्रोता कही शकवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारना श्रोताओनी सभाने पण बोधी-योग्य सभा एवा परम अलंकृत नामथी संबोधवा योग्य छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—श्री जिनना अंतर आशयमां रहेला एवा तत्वार्थ बोधना-परमार्थने समजवा योग्य पात्रनी मिमांसा करवा अगाऊ अहिं तत्वार्थ शब्दना रहस्यार्थनी मिमांसा करवी अति आवश्यक-रुप छे, एटले तेना स्पष्टार्थ बोधनुं अहिं निरुपण करवामां आवे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्वार्थ शब्दनी व्युत्पत्तिना स्पष्टार्थने विचारीए तो पदार्थना यथार्थ स्वरुपने तत्व कहेवामां आवे छे, अने ते जेवा स्वरुपे छे, तेवा स्वरुपना निश्चयने अर्थ कहेवामां आवे छे, ते उभयना समुच्चय स्वरुपने तत्वार्थ ए नामथी ओळखवामां आवे छे, अर्थात् जे पदार्थ जे रुपे अवस्थित छे, ते रुपे ग्रहण करवामां तत्वार्थ नाम सफल थाय छे, अने विपरितरुपे ग्रहण करवामां अतत्वार्थ सफल थाय छे, एम तत्वार्थ शब्दना अर्थमां रहेलो परमार्थ छे। हवे अहिं तथारुप बोधने समजवा योग्य पात्रनी मिमांसा करवामां आवे छे।

श्री जिनना अंतर आशयमां रहेला एवा तत्वार्थ-बोधना परमार्थने समजवा योग्य पात्रनी मिमांसा करीए तो जेना अंतर-परिणामना विषे सत्यासत्यनो परम सद्विवेक एटले सत्यासत्यरुप एवा उभयात्मक तत्वोनी परिक्षानुं वास्तविक बळ त्रयात्मक मुढताना अभावपुर्वक प्रगट्युं होय, ते साथे मतीनुं सरलपणुं होय एटले गृहीत मिथ्यात्वजन्य एवी सर्व मताग्रह भावरुप चक्रात्मक बुद्धीना अभाव-पुर्वक मात्र एक आत्म-गुण-ग्राही दृष्टीनुं उपासवापणुं अने ते साथे अभिप्रायजन्य दोषोने विचारी तेनुं सम्यक् योगे टाळवापणुं ज्यां सरल भावे वर्ततुं होय, ते साथे दृष्टीमां मध्यस्थपणुं होय, एटले जिनाशय तत्वार्थ-बोधना के वस्तु मात्रना निर्णयमां तेनो उतावळथी अभिप्राय न बांधवारुप, के ते अर्थे मुख्य एवा विरज गुणने केळववारुप एवुं दृष्टीना विषे परम निर्मलत्वपणुं वर्ततुं होय, ते साथे सुविचारवान होय, एटले स्व तरफनी विर्यात्मक-रुचीना वलणपुर्वक स्वने उपकाररुप एवी जिनाशय तत्वार्थ-बोधनी अंतर्मुख विचारणामां के स्वरुप-भावनामां जेनो उपयोग विशेष प्रकारे प्रेरीत थतो होय, ते साथे बुद्धीनुं विशालपणुं होय एटले जिनाशय तत्वार्थ-बोधना वास्तविक अर्थने अवधारवारुप, के तेना वास्तविक निर्णयमां उपयोगने प्रेरवारुप, एवुं यथार्थ तत्व-शोधकपणुं युक्ति अनुमानादिना सम्यक् अवलंबनपुर्वक वर्ततुं होय, अने ते साथे सद्गुरु प्रत्ये भक्ति अने अंतर आत्मार्थपणुं होय, एटले निमित उपादाननी अनुकूल संधीना परमार्थ लक्षपुर्वक सद्गुरुने वा तेवा कोई सत्पुरुषने ते रुपे ओळखीने तेमना प्रत्ये विनयादि सेवनारुप परम एवी भक्ति अंतर आत्मार्थ भावनी प्रधानतापुर्वक वर्तती होय, एवो जे कोई सुजाण कहेतां साची समजणनो धारक श्रोता होय ते अवश्य करी श्री जिनना अंतर आशयमां रहेला एवा तत्वार्थ-बोधना परमार्थने समजी शकवा योग्य छे, अने तेवा सद्पात्र श्रोताने पहेला प्रकारना एवा उत्तम श्रोता कही शकवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारना श्रोता-ओनी सभाने पण बोधी-योग्य-सभा, एवा परम अलंकृत नामथी संबोधवा योग्य छे।

आ उपरथी तत्व-जिज्ञासु जीव विचारशे तो तेने स्पष्ट समजाशे के स्याद्वादना शिक्षण विना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बुद्धीनी सरलता विना, आशयनी विशालता विना, जिनाशय श्रुतना तत्वार्थ-बोधनो परमार्थ कोई पण जीवने कोई पण प्रकारे समजवा योग्य के आत्म-परिणामी थई शकवा योग्य नथी, एटलुं ज नहिं पण जे जीवना विषे सुविचार श्रेणीनुं मुढत्वपणुं छे, अनेकांत-दृष्टीनी गेरहाजरी छे, अने तुलनात्मक शक्ति पांगळी छे, ते जीव कोई पण दर्शन संबंधी वास्तविक निर्णय करवा माटे सर्वथा अनधिकारी छे। मतलब के उपरोक्त गुणातीशयरुप निर्मल अवस्थानुं प्रगटपणुं थये ज जीव तथारुप बोध परमार्थने समजवानो के दर्शन संबंधी निर्णय करवानो अधिकारी थई शके छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं बीजा प्रकारना मध्यम श्रोताओनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

बीजो प्रकार श्रोता तणो, जेने अंश न वस्तु विवेक।
तेथी सत्यासत्यना विषे, होय विपर्यय के मुढत्व छेक॥
मध्यम श्रोता कहीए ते, बोधी अयोग्य सभा ए।
तेथी न प्रणमे तेने कांय, वस्तुबोध त्यां अंतर मांय॥९॥

अन्वयार्थ—ते श्रोताओना बीजा प्रकारना जीवोने अंश मात्र पण वस्तु-विवेक कहेतां तत्व संबंधी बोध होतो नथी, अने तेथी सत्यासत्यना विषे ते जीवोनुं विपर्ययपणुं के छेक मुढत्वपणुं वर्ततुं होय छे, ते श्रोताओने मध्यम श्रोता कहीए, अर्थात् कहेवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारना श्रोताओनी सभाने बोधी-अयोग्य एवा विशेषणथी संबोधवा योग्य छे, अने तेथी त्यां तेना अंतर परिणामना विषे वस्तु-बोधनुं परिणमन कांई कहेतां अंश मात्र पण थई शकतुं नथी, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मार्थ हेतुभुत एवा सर्व प्रकारना सद्विवेकनी उत्पत्तिनो मुळ आधार तेना मुळ बीजभुत एवा मात्र एक वस्तु-विवेक पर एटले वस्तुनी यथार्थ समजण पर अवलंबीत होवाथी अने तथारुप वस्तु-विवेक साथे त्रयात्मक सद्विवेकनो एटले सत्यासत्यनो, हिताहितनो, अने कार्याकार्यनो एवा त्रण प्रकारना सद्विवेकनो संबंध मुख्यपणे रहेवाथी तथारुप एवा ते वस्तु-विवेकनुं सर्व विवेकमां प्रधानपणुं छे। तथाप्रकारना प्रधानरुप एवा ते वस्तु-विवेक प्रत्ये एटले हुं कोण छुं ? ते संबंधीना वास्तविक एवा तत्व निर्णय प्रत्ये, के तथारुप निर्णयना हेतुभुत एवा आत्मबोध के आत्मबोधना विचार प्रत्ये, के ते विचार उत्पन्न थवाना असाधारण निमितरुप एवा श्रीसद्गुरु के सम्यक्ज्ञानी पुरुष प्रत्ये,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ज्यां सुधी जीवनुं पराङ्मुखपणुं वर्ते छे, त्यां सुधी सत्यासत्यरुप एवा उभयात्मक तत्वोना विषे ते जीवनुं विर्पययपणुं एटले तत्वमां अतत्व-श्रद्धानरुप अने अतत्वमां तत्व-श्रद्धानरुप एवुं बुद्धीनुं विपर्यासपणुं अथवा तो छेक मुढत्वपणुं कहेतां ते उभय तत्वोमां समान बुद्धीपणुं एवा वस्तु अविवेकने लईने त्यां स्वभावीक ज होय छे। आवा प्रकारनुं मुढत्वपणुं ते जीवोना अंतर परिणामना विषे तत्व-दृष्टीए होवा छतां पण स्थुल-दृष्टीए तेवुं खास विरोधात्मकपणुं के असमानपणुं प्रत्यक्ष एवा कोई सद्-गुरुना के तेवा कोई स्थितिप्रज्ञ पुरुषना संप्राप्त योगमां दृष्टीगोचर थई शके तेवुं होतुं नथी, अने तेथी तथारुप दृष्टीए तेवा प्रकारना श्रोताओने मध्यम श्रोता कहेवा योग्य छे, अने ते साथे बोध-बीजनी खास योग्यता न होवाथी तेवा प्रकारना श्रोताओनी सभाने बोधीअयोग्य, एवा विशेषणथी तेने संबोधवा योग्य छे। आवा प्रकारनी बोध सन्मुख थवानी वर्तमान योग्यताना अभावे तेवा जीवोने सद्गुर्वादि प्रज्ञपुरुषनो संप्राप्त योग पण असंप्राप्तरुप कहेतां निष्फलरुप थाय, ए स्वभावीक छे, अने तेथी तेवा जीवोना अंतर परिणामना विषे वस्तु-बोधनुं परिणमन कांई कहेतां अंश मात्र पण न थई शके, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं त्रीजा प्रकारना कनीष्ट श्रोताओनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

त्रीजो प्रकार श्रोता तणो, जेने होय मतार्थनुं मान।
तेथी दुराग्रहमां रही, करे सद्गुरुनु अपमान ॥
कनीष्ट श्रोता कहीए ते, धर्मद्रोही जाण सभा ए।
तेथी प्रणमे बोध त्यां जेम, पय विष रुपे सर्पने तेम ॥१०॥

अन्वयार्थ—ते श्रोताओना त्रीजा प्रकारना जीवोने मतार्थनुं मान कहेतां पोताना संप्र-दायनुं अहं-ममत्वरुप मिथ्यात्व मुख्यपणे वर्ततुं होय छे. अने तेथी ते तथा प्रकारना दुराग्रहमां रही प्रत्यक्ष एवा ते सद्गुरुनुं अपमान कहेतां ते धर्मात्मा व्यक्तिनो द्रोह करनारो होय छे, तेने कनीष्ट श्रोता कहीए अर्थात् कहेवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारना श्रोताओनी सभाने पण धर्म-द्रोही एवा विशेषणथी संबोधवा योग्य छे, अने तेथी जेम सर्पने दूध पावाथी ते विषरुपे परिणमे छे, तेम त्यां बोधनुं परिणमन पण तेने तेवा ज प्रकारे थाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—मताग्रह दृष्टीरुप अभिनीवेश ए मुख्यपणे गृहीत मिथ्यात्वने अवलंबीत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होवाथी ज्यां ज्यां तथारुप मिथ्यात्वनुं अस्तित्व वर्ततुं होय छे, त्यां त्यां तथा प्रकारना अभिनीवेशनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे । तथारुप मिथ्यात्वना एकंदर पांच प्रकार छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे ।

एकांतिक मिथ्यात्व

अनंत गुण पर्यायना पिंडरुप एवी जे सामान्य विशेषात्मक वस्तु ते अनंत धर्मात्मक होवा छतां तेने कोई एक गुण धर्मरुपे स्वीकारवारुप एटले आत्माने सर्वथा क्षणीक के नित्य मानवारुप अने ते अनुसार तेना अन्य अनेक धर्मोनुं खंडन करवारुप एवुं विरोधात्मक प्रतिपादन मताग्रह दृष्टीने अवलंवीत थई करवुं ते ।

विपरीत मिथ्यात्व

शुद्ध आत्म-धर्मनी प्राप्तीना बाह्य अनुकूल निमितरुप एवा सद्गुर्वादिक त्रयात्मक-तत्वोना के श्री जिन देवनी वितरागी प्रतिमाना परमार्थने भुली तथारुप तत्वोना विरोधात्मक बोधने मतार्थ भावे ग्रहण करवारुप, अने ते अनुसार तेने तीव्र मिथ्याभिनीवेशपुर्वक सेववारुप एवी विपरित रुचीने दृढ करवी ते ।

सांशयिक मिथ्यात्व

वस्तु-धर्मना वास्तविक निर्णय के तेना सत्यार्थ बोधना अभावे ते संबंधीनी एटले आत्माना अस्तित्वनी के तेना षट-दर्शनात्मक पदना होवा संबंधीनी एवी अनेक प्रकारनी शंकाओने मती मुढ भावे पोषी तेने व्यक्त के अव्यक्त परिणामे टकावी राखवी ते ।

अज्ञानिक मिथ्यात्व

मती भ्रमथी के मुढ दृष्टीथी त्रयात्मक-सद्विवेकथी विरुद्ध एवा सत्यासत्यना, हिताहितना, अने कार्याकार्यना असद्विवेकने अवलंबी अनेक प्रकारना असत्यार्थरुप एवा पशुवध आदि अधर्मना कार्यने धर्म मानवारुप, अने तथारुप बुद्धीए तेने सेववारुप एवी हिंसात्मक प्रवृत्तिने कुळधर्म-बुद्धीए दृढ करवी ते ।

वैनयिक मिथ्यात्व

मती भ्रमथी के मुढ दृष्टीथी सत्यासत्य देव गुर्वादिक स्वरुपनो विरोध निर्णय कल्पी के ते बंनेमां समानपणानो आरोप करी ते उभय स्थान प्रत्ये विनयादि सेवनानुं विपरितपणुं के समान बुद्धीपणुं पोषवारुप एवा मिथ्याभिनीवेशने वळगी रहेवुं ते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ प्रमाणे ग्रहीत मिथ्यात्वना एकंदर पांच प्रकार छे। तथारुप मिथ्यात्व ए एक नुतन भुल-रुपे जीव परिणामना विषे उत्पन्न थाय छे, अर्थात् ज्यां ज्यां जे जे कुळ-धर्मना संसर्गमां जन्माश्रीत संबंध-विशेषने लईने आ जीव योजाय छे, त्यां त्यां ते ते कुळ-धर्मनी संस्कृतिमां ते पोतापणानी बुद्धी करी ते द्वारा अनेक प्रकारना नुतन एवा विपर्यय भावोने ते बद्ध परिणामी करे छे, अने ते भावो सत्यार्थरुप होवानो एकांत अभिप्राय आपी, तेने गाढ संस्कार रुपे ते पोषे छे। आवा प्रकारनी विपर्यय भावरुपे पोषायेली एवी ते कुळगत संस्कृतिनी दुराग्रह-बुद्धीना लीधे कवचित् तेने आत्म-बोधना अनुकूल निमितरुप एवा कोई प्रत्यक्ष सद्‌गुरुनो सुयोग संप्राप्तरुप थवा छतां पण तेनो त्यां दुरोपयोग कहेतां पोताना उपादान कारणने त्यां तथारुप बोधथी विमुख एवा प्रतिकुलरुपे परिणमावी पोताना स्वरुपनो ते विशेष प्रकारे घात करे छे। मतलब के सर्पने दुध पावाथी जेम ते विषरुपे परिणमे छे, तेम प्रत्यक्ष एवा ते सम्यक्‌ज्ञानी पुरुषना बोधनुं परिणमन पण तेने त्यां तेवा ज प्रकारे थाय छे, अने ते पुरुष प्रत्ये विनय गुण-घातक के अपमानरुप परिणाम उत्पन्न थवानो मुळ हेतु पण तेज छे।

आ उपरथी समजाशे के जेम मेघजळनी वृष्टी सर्वत्र अपक्षपातपणे थवा छतां तेनुं परिणमन लींमडाने कडुरुपे, लींबुने खटाशरुपे, शेरडीने मधुररुपे, चणाने खाराशरुपे, अने मरचाने तीखाशरुपे थाय छे, तेम सत्पुरुषना वचनरुप मेघजळनी वृष्टी पण सर्वत्र अपक्षपातपणे थवा छतां श्रोताजनना उपादाननी तारतम्यरुप अवस्था-भेदे तेनुं परिणमन कोईने परमार्थरुपे, कोईने सामान्य शुभ प्रवर्तनरुपे, कोईने वादविवादरुपे, कोईने कुतर्करुपे, अने कोईने निंदा के तेनी आशातना करवारुपे थाय छे, अने ते उत्तम, मध्यम, अने कनिष्ट एवा उपरोक्त त्रणे प्रकारना श्रोताओना लक्षण-भेदे थयेला निरुपणने अनुक्रमे विचारतां ते आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजावा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं उत्तम श्रोताना बे प्रकार मुख्य करी तेनुं लक्षण-भेदे आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

हवे उत्तम श्रोता तणा, तने कहुं बे मुख्य प्रकार।
पहेलो प्रकार ज्यां अंतरे, स्व सन्मुख बोध विचार ॥
ते बोध विचार क्रमे त्यां नित्य, स्वभाव लक्षे थाय ते स्थित।
ते लक्षे क्रमे त्यां वस्तु विवेक, प्रगटे स्व निर्णय थईने छेक ॥११॥

अन्वयार्थ—हवे जे उत्तम श्रोता छे, तेना मुख्य एवा बे प्रकार तने कहुं छुं। ज्यां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रवणरुप बोध-विचारनुं अंतरना विषे स्व-सन्मुखपणुं वर्ततुं होय, तेने पहेला प्रकारना नामथी संबोधवामां आवे छे, अहिं ते बोध-विचार क्रमे करी नित्य स्वभाव लक्षे स्थिर थाय छे, अने तेज लक्षे त्यां क्रमे करी पोता संबंधीनो निर्णय छेक कहेतां सर्व प्रकारे थईने पोताने वस्तु-विवेक कहेतां स्व-स्वरुपनुं यथार्थ भान प्रगटे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—वस्तु-विवेक एटले पोताने पोताना स्वरुपनी यथार्थ सद्समजण के स्वरुपनुं साचुं भान प्रगट थवुं ते । तथा प्रकारना वस्तु-विवेकनी उपलब्धीनो सर्व आधार मात्र एक पोतानी स्वभाव सन्मुख दृष्टी पर ज रहेलो छे, अर्थात् जे कोई आत्मार्थी जीव जिनाशय सत्श्रुतनी श्रवणरुप बोध-विचारणाने अनुक्रमे स्व-सन्मुख प्रेरीत करे छे, एटले सत्श्रुतना श्रवण थयेला बोधनुं ते अनुसार ग्रहण, ग्रहण थयेला बोधनुं ते अनुसार चिंतवन, चिंतवन थयेला बोधनुं ते अनुसार स्व-निर्णयात्मकरुप परिणमन, अने स्व-निर्णयात्मकरुपे परिणमन थयेला एवा ते बोधनुं ते अनुसार स्वभाव एकत्वरुप स्वसंवेदन, एम अनुक्रमे श्रवण, ग्रहण, चिंतवन, स्व-निर्णयात्मकरुप परिणमन, अने स्वभाव एकत्वरुप स्व-संवेदन, एवी पंचात्मक विर्य-प्रवृत्तिने स्वभाव लक्षे अवलंबवाथी परम एवी वस्तु-विवेकनी उपलब्धी थाय छे । आवा प्रकारनी वस्तु-विवेकनी उपलब्धी साथे तेना अविनाभावी संबंधरुप एवा त्रयात्मक सद्विवेकनुं कहेतां सत्यासत्यना, हिताहितना, अने कार्याकार्यना ए त्रण प्रकारना सद्विवेकनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते पण तेनी साथे ज उपलब्धरुप थई जाय छे, अने तेथी ते अनुसार उत्तम एवा ते पहेला प्रकारना श्रोतानी सहज आत्मार्थ अनुकूलपणे सर्व प्रवृत्ति थवी शरु थाय छे, अने क्रमे करी ते तथारुप वस्तु-विवेकना बळे पुर्णस्वरुप वितरागत्वने पण पामे छे ।

आ प्रमाणे उत्तम एवा ते पहेला प्रकारना श्रोताओ उपरोक्त क्रमानुसार पोते पंचात्मक विर्य-प्रवृत्तिने स्वभाव लक्षे अवलंबी ते द्वारा ते वस्तु-विवेकनी उपलब्धीने सम्यक्प्रकारे पामे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

हवे उत्तम श्रोता तणो, कहुं बीजो तने प्रकार ।
त्यां पर्याय लक्षे अंतरे, स्वथी विमुख बोध विचार ॥
तेथी न प्रगटे तेने कांय, वस्तु विवेक अंतर मांय ।
स्वनिर्णयविना एम अंतर जाण, कहीए स्वथी ते बेभान ॥१२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वयार्थ—हवे ते उत्तम श्रोतानो बीजो प्रकार तने कहुं छुं, त्यां श्रवणरुप बोध विचारनुं अंतरना विषे पर्यायाश्रीत लक्षे एवुं स्वथी विमुखपणुं वर्ततुं होय छे, अने तेथी तेना अंतर परिणामना विषे पोता संबंधीना निर्णय विना, तेने कांई वस्तु-विवेक कहेतां स्व-स्वरुपनुं यथार्थ भान प्रगटतुं नथी, अने तेथी तेने स्वथी कहेतां पोताना स्वरुपथी बेभान कहीए अर्थात् कहेवा योग्य छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—वस्तु-विवेकनी उपलब्धीनो सर्व आधार मात्र एक पोतानी स्वभाव सन्मुख दृष्टी पर ज रहेलो छे, अने तेज हेतुनी सिद्धी अर्थे पुर्वोक्त सुत्रमां जिनाशय सत्श्रुतना बोधनुं श्रवण, ग्रहण, चिंतवन, स्व निर्णयात्मकरुप परिणमन, अने स्वभाव एकत्वरुप स्वसंवेदन एवी पंचात्मक विर्य-प्रवृतिने स्वभाव लक्षे अवलंबवानुं प्रतिपादन करवामां आव्युं छे। आवा प्रकारना श्रवणरुप बोधनुं तथा प्रकारे ग्रहण, कोई सद्गुरु योगे थवा छतां, जे जीवे पोताना स्वछंदादि दोषने लईने के पोतानी पर्यायजन्य मुढताने वश थईने, ते ग्रहणरुप बोधना वास्तविक चिंतवनपुर्वक पोते पोतानी दृष्टी स्व-निर्णय तरफ प्रेरी नथी, के ते प्रकारनी दोषजन्य मुढताने पोते अंशे पण आत्मार्थ सन्मुखतापुर्वक विचारी नथी, ते जीव तथारुप दोषजन्य मुढताने वश थई पंचात्मक एवी ते विर्य-प्रवृतिना विचारने स्वथी विमुख एवा एकांत पर्यायाश्रीत लक्षे परिणमावी एटले तथा प्रकारना श्रवणरुप बोधनुं मुख्य एवी पर्यायजन्य दृष्टीए ग्रहण, अने ग्रहणरुप बोधनुं तथारुप विमुख लक्षे चिंतवन, अने चिंतवन थयेला बोधनुं तथारुप लक्षे एटले पर्याय बुद्धीए स्व निर्णयात्मकरुप परिणमन, अने ते अनुसार पर्याय एकत्वरुप स्व-संवेदन एम स्वभाव लक्ष चुकीने पोते पोतानुं अस्तित्व एकांत पर्यायाश्रीत भावे द्रढ करी तथा-प्रकारनी विमुखतापुर्वक वर्ते छे।

आवा प्रकारना विमुखवर्ती जीवोने क्वचित् भेदविज्ञाननुं उपस्थितपणुं थाय तो ते पण तथा प्रकारना विमुख परिणामरुप ज होय छे, अने तेथी देहादि परद्रव्य अने पर निमित-जन्य एवा शुभाशुभ रागादि-भावोने पृथकरुप विचारवा छतां त्यां अस्तिरुप स्वभावनी अंतरंग सन्मुखताना अभावे नास्तिरुप एवा ते रागादि-भावोनुं अंशे पण पृथकपणुं थई शकतुं नथी। मतलब के स्व तरफना निर्णय विना, आवा प्रकारनी दोषजन्य मुढता, ते जीवना अंतर परिणामना विषे रहेवाथी वास्तविक एवा वस्तु-विवेकना परमार्थने ते पामतो नथी, अने तेथी तेवा प्रकारना जीवोने बीजा प्रकारना उत्तम श्रोता ए विशेषणथी संबोधवामां आवे छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समजाशे आथी तने, प्रगटी विवेक सर्व प्रकार।
ज्यां वर्ते विवेक वस्तुनो, त्यां जाणपणुं सत्य धार ॥
ते वण जाणपणुं होय ज्यां, बुद्धी रुपे कहीए त्यां।
शुष्क अध्यात्मी तेने जाण, वर्ते पर लक्षे बेभान ॥१३॥

अन्वयार्थ—आ उपरथी तने सर्व प्रकारनो विवेक प्रगटी समजाशे के ज्यां वस्तु-विवेक कहेतां पोताना वस्तु-स्वभावनी यथार्थ सद्समजण वर्ते छे, त्यां तत्व-संबंधी बोधनुं सत्यार्थरुप जाणपणुं होवानुं तुं धार। ते सिवाय तथारुप बोधनुं ज्यां जाणपणुं वर्ततुं होय, त्यां तेने बुद्धीरुपे कहीए, अर्थात् कहेवा योग्य छे, अने तेने ज तुं शुष्क-अध्यात्मी जाण, के जे पर लक्षे एकांत बेभान-पणे वर्ते छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जिनाशय सत्-श्रुतना बोध श्रवणथी के तेना अभ्यासथी संप्राप्तरुप थयेल एवुं जे तेनुं द्रव्य-श्रुतरुप जाणपणुं तेना वास्तविक महात्म्यनी सिद्धी पंचात्मक विर्य-प्रवृतिना अनुक्रमपुर्वक भावश्रुतरुप एवुं स्वभाव सन्मुख परिणमन थवाथी ज थाय छे। आवा प्रकारनुं सम्यक् जाणपणुं जे कोई जीवने आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक वर्ते छे ते तथारुप लक्षे स्व सन्मुख-पुरुषार्थमां योजाई ते द्वारा वस्तु-विवेकनी उपलब्धीरुप एवी स्व-सिद्धीनी विजयताने पामे छे, ते सिवाय एटले तथा प्रकारना सम्यक् जाणपणाथी के आत्मार्थ सद्विवेकथी जे जीवनुं पराङ्मुखपणुं वर्ते छे, ते जीवने तथा प्रकारनुं द्रव्यश्रुतरुप जाणपणुं होवा छतां, के थवा छतां उपरोक्त मुढताना लीधे ते पंचात्मक विर्य-प्रवृतिने स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करतो नथी, अने तेना अभावे ते वस्तु-विवेकनी उपलब्धीने पण पामतो नथी।

आ उपरथी उभयात्मक उत्तम श्रोतानी समालोचना करतां स्पष्ट समजाशे के पहेला प्रकारना उत्तम श्रोताना विषे पंचात्मक विर्य-प्रवृतिनुं स्वभाव सन्मुख परिणमन आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक होवाथी त्यां तथा प्रकारना बोध-विशेष जाणपणाने सत्यार्थरुप जाणपणुं, अने सत्यार्थरुप जाणपणुं होवाथी त्यां स्वरुप-अध्यात्मपणुं ए विशेषणथी संबोधवा योग्य छे, अने बीजा प्रकारना उत्तम श्रोताना विषे पंचा-त्मक एवी ते विर्य-प्रवृतिनुं स्वभाव विमुख परिणमन आत्मार्थ मुढतापुर्वक होवाथी त्यां तथा प्रकारना बोध-विशेष जाणपणाने असत्यार्थरुप जाणपणुं अने असत्यार्थरुप होवाथी त्यां शुष्क-अध्यात्मपणुं ए विशेषणथी संबोधवा योग्य छे, एम उभयात्मक उत्तम श्रोताओना भेदत्वने परमार्थ दृष्टीए समजवा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

तेथी उत्तम श्रोता विषे, पण उत्तम पहेलो प्रकार।
प्रणमे ते पहेला प्रकारने, सुबोध आ अंतर धार ॥
तेवो श्रोता तुजने आंय, जोई दया आणी मन मांय।
उपदेश्यो में सम्यक् बोध, पुर्वापर लक्षे अविरोध ॥१४॥

अन्वयार्थ—तेथी उत्तम श्रोताना विषे पण विशेष उत्तम पहेलो प्रकार छे, ते पहेला प्रकारना श्रोताने परम एवो आ सुबोध तेना अंतरना विषे परिणमे, एम तुं धार। तेवो श्रोता अहिं में तने जोईने अंतरना विषे करुणात्मक भाव लावी आ सम्यक् बोध पुर्वापर लक्षे अविरोध एटले पुर्वे जे ज्ञानी पुरुष थई गया ते अनुसार उपदेश्यो छे, ते हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—पुर्वोक्त सुत्रमां कह्या प्रमाणे बंने प्रकारना उत्तम श्रोताओमां पहेला प्रकारना उत्तम श्रोताओना विषे पंचात्मक विर्य-प्रवृत्तिने स्वभाव सन्मुख परिणमाववा योग्य एवुं आत्मार्थ सद्-विवेकनुं योग्यपणुं होवाथी ते प्रकारना उत्तम श्रोताओ जिनाशय सत्-श्रुतनो सम्यक् योगे अवधार करी शके ए सहज अने स्वभावीक छे, अने तेथी उपरोक्त सुत्रमां तेनुं मुख्यपणुं दर्शावी तथारुप लक्षे अहिं प्रत्यक्ष बोधदाता, एवा जे श्री सद्‌गुरु भगवंत, ते तथा प्रकारनी योग्यता वर्ती रही छे जेनी, एवा ते श्रवण-बोधना अधिकारी जीवने उद्देशीने कहे छे, के हे उत्तम जीव! तेवो उत्तम श्रोता अहिं में तने जोईने एटले तारुं उपादान वस्तु-विवेकनी उपलब्धीने सहज पामी शके, एवुं तारुं यथार्थ निरीक्षण करीने, अने तथारुप लक्षे अंतरना विषे करुणात्मक भाव लावीने, तने आ सम्यक्-श्रुत-बोध पुर्वापर लक्षे अविरोध एटले पुर्वे जे श्री तिर्थंकरादि आत्मज्ञ-पुरुष थई गया, तेमना अंतर आशयने अनुसरीने उपदेश्यो छे, एम श्री सद्‌गुरु भगवंत एवा ते अधिकारी जीवने तेनी विशेष आत्मार्थ सन्मुखता के स्वरुप दृढता अर्थे अती करुणात्मक भावे सुचवे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते स्व लक्षे विचारतां, तने स्फुरशे वस्तु विवेक।
अनुप्रेक्षा विशेषथी, थशे दृढत्व निजनुं छेक ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेथी स्वाध्याय तेनो नित्य, करजे सुविवेक लावी चित्त।
तो तेथी सम्यग्दर्शन तुं, पामीश अंतिम कहुं छुं हुं ॥१५॥

अन्वयार्थ—तथारुप बोधने स्व लक्षे कहेतां स्वभाव तरफ द्रष्टी प्रेरीने विचारतां तने वस्तु-विवेकनी उपलब्धी थशे, अने तेनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा थतां निज चैतन्यात्मक स्वभावनुं छेक कहेतां तेनुं तने विशेष प्रकारे दृढत्वपणुं आवशे, तेथी तुं चित्तना विषे सद्विवेक लावीने तेनो नित्य स्वाध्याय करजे तो तेथी तुं सम्यग्दर्शनने पामीश, एम हुं तने अंतिम एटले आ छेल्ली गाथानो परमार्थ कहुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—पुर्वोक्त सुत्रना अनुसंधानपुर्वक अहिं पुनः श्री सद्गुरु भगवंत एवा ते श्रवण-बोधना अधिकारी जीवने उद्देशीने कहे छे, के हे उत्तम जीव! अहिं सुधी तने अपायेलो एवो जे जिना-शय सत् श्रुतनो उपदेश तेने स्वलक्षे विचारतां एटले तारा शुद्ध द्रव्यस्वभाव तरफ द्रष्टी प्रेरी तथारुप बोधनी तत्व-मिमांसा करतां, तने वस्तु-विवेकनी उपलब्धी थशे, एटले तारो आत्मस्वभाव जेम छे, तेम तेनुं तने यथार्थ एवुं सम्यक् भान आवशे, अने ते अनुसार तेनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा थतां, एवा ते तारा शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावनुं तने विशेष प्रकारे दृढत्वपणुं कहेतां अपुर्व एवुं स्वरुप निःशंकत्वपणुं आविर्भावने पामशे, तेथी हे उत्तम जीव! तुं चित्तना विषे सद्विवेक लावीने एटले परम कल्याण-कारी एवा तारा आत्मार्थ संबंधी हितने मुख्यरुप करीने, तथारुप बोधनो तुं नित्य स्वाध्याय कहेतां स्व-लक्षे तेनुं चिंतवन मनन करजे। मतलब के जे प्रकारे पंचात्मक विर्य-प्रवृतिना अंतर अनुक्रमपुर्वक ते वस्तु-विवेकनी उपलब्धीना हेतुरुप थाय, ते प्रकारे तथारुप बोधने स्वभाव सन्मुख परिणमाववा तुं उद्यमवंत थजे, तो तेथी तुं सम्यक्ज्ञान दर्शनादि एवा शुद्ध आत्मधर्मने पामीश, एम हुं तने अंतिम एटले बोध समाप्तिरुप एवी आ छेल्ली गाथानो परमार्थ कहुं छुं, एम श्री सद्गुरु भगवंत एवा ते अधिकारी जीवने अंतिम सद्शिक्षानुं सुचन करी उपदेश प्रवृतिनी समाप्ति करे छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं परमोपकारक एवा श्री सद्गुरु प्रत्ये शीष्यने स्फुरेला भक्तिउल्लास-भावसंबंधी आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

शीष्य कहे गुरुजी कर्यो, आज आपे महा उपकार।
अष्ट अवस्था बोधीने, समजाव्यो तत्वनो सार॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्व समाधान तेथी थई, स्फुरी निःशंकता अंतर मांई ।
वस्तु-विवेकनी सर्व प्रकार, स्मरी वंदुं ए उपकार ॥
जय जय गुरु भगवंत ॥१६॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये कहे छे के हे भगवंत ! आज पर्यंतना उपदेशमां आपे मने अष्टात्मक एवी जे जीवनी बोध अवस्था, ते बोधीने मुख्य एवो तत्वनो सार समजाव्यो, ते आपनो अत्यंत उपकार थयो छे, तेथी मने सर्व समाधान थई अंतरना विषे वस्तु-विवेकनी एटले वस्तु-स्वभाव जेम छे, तेम, एवी तेनी सर्व प्रकारे निःशंकता स्फुरायमान थई छे, ते आपना परम उपकारने स्मरी हे श्री सद्गुरु भगवंत ! हुं आपने जय जय कहेतां सदा जयवंत वर्तो एवा अंतर उद्गारपुर्वक वंदन करुं छुं ।

विशेषार्थ— वस्तुनी मुळ एवी जे उपादान शक्ति ते तरफ दृष्टी प्रेरी विचारिए तो जे-समये कार्य-रुची एवा उपादान कारणनी कार्य-रुपे परिणमवा योग्य एवी अंतरंग तैयारी होय छे, ते समये तेना अनुकूल निमितनी औदासीन हाजरी तेना पोताना कारणे स्वभावीक ज रहेली होय छे, ए खास नियम छे, ते नियमानुसार ज्यारे कोई तत्व-जिज्ञासु जीव पोते तथारुप कार्य-रुचीना हेतुने अवलंबी पोताना उपादान कारणनीं अंतरंग सन्मुखता करे छे, त्यारे तेनुं अनुकूल निमित एवा श्री सद्गुरुनी औदासीन हाजरी तेना पोताना कारणे होय, ए स्वभावीक छे । आवा सिद्धांतिक नियमनुं वास्तविक भान उपरोक्त एवा ते बोध-परिणामी जीवने होवा छतां अहिं तेनुं गौणपणुं करी मात्र उपचाररुप व्यवहारथी एटले तथारुप स्वकार्य सिद्धीमां कारणत्वनो उपचार थई शकवा योग्य प्रत्यक्ष एवा ते सद्गुरुना प्रत्यक्ष एवा आ उपकारनी प्रधानरुप दृष्टीए सुपात्र एवो ते शीष्य, ते तेमनुं बहुमान लावी तथारुप थयेल उपकारने अत्यंत विनयपुर्वक तेमनी सन्मुख प्रदर्शीत करे छे, अने एज सुपात्र साधक जीवनुं के उत्तम श्रोतानुं उत्तमोत्तम एवुं आ लक्षण छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक शीष्यना भक्तिउल्लास-भावसंबंधी आगळ निरुपण करवामां आवेछे ।

शुं आप चरण कने धरुं, आप प्रभु परम निष्काम ।
वळी न आत्माधिक कांय, पण हिनत्व तेथी तमाम ॥
तेथी वर्तुं चरणाधिन, गुरु भक्तिमां थईने लीन ।
स्वरुप लक्षे एज विवेक, वर्तो सदा अंतरमां छेक ॥१७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्वयार्थ—हे भगवंत ! आपना अत्यंत एवा आ उपकारना बदलामां हुं आपना चरण समीपे एवी कई वस्तु धरुं, आप प्रभु तो परम निष्काम छो, वळी आ जगतना विषे आत्माथी अधिक तो एवुं कांई पण नथी, पण ते करतां हिनत्वपणुं तो सर्व पदार्थोनुं देखाय छे, अने तेथी हे सद्गुरु भगवंत ! हुं आपनी भक्तिमां लीन थईने आपना चरणाधीन कहेतां आपनी आज्ञानुसार वर्तुं, अने एज सद्विवेक मने सदा अंतरना विषे छेक कहेतां सर्व प्रकारे स्वरुप लक्षे वर्तो, एम याचना करी, हे श्री सद्गुरु भगवंत ! हुं आपने जय जय कहेतां सदा जयवंत वर्तो, एम अंतर-उद्गारपुर्वक वंदन करुं छुं ।

विशेषार्थ—जगतना सर्व पौद्गलीक पदार्थोनुं मुख्य एवी आत्म दृष्टीए निरीक्षण करीए तो तेनुं हिनत्वपणुं सहज सिद्ध थई शकवा योग्य छे, अने ते सिद्ध थतां आत्माथी अधिक एटले ते करतां विशेष मुल्यवान एवो एक पण पदार्थ आ जगतना विषे होवानुं ए त्रणे काळना विषे स्वभावीक ज असिद्धरुप ठरे छे । मतलब के षट्-द्रव्यात्मक एवा आ लोकना विषे स्व-पर-प्रकाशक एवी ज्ञानात्मक शक्ति विशेषथी अलंकृतपणुं वर्ती रह्युं छे जेनुं, एवुं जे एक आत्म-द्रव्य तेज मात्र एक तथारुप गुणना दिव्य-प्रकाश वडे करीने जगतना अन्य सर्व पदार्थोमां परम ऐश्वर्यवान एवी एक प्रधानरुप वस्तु छे ।

आवी प्रधानरुप चैतन्यात्मक वस्तुनुं सम्यक् प्रकारे जाणपणुं उपलब्धरुप थयुं छे जेनुं, अने ते अनुसार स्वभाव एकत्वरुप स्व-संवेदन वर्ती रह्युं छे जेनुं, एवा ते वीतरागत्व परिणामरुप अंतर-व्यापक दृष्टीना धारक पुरुषने जगतना अन्य सर्व पदार्थो प्रत्ये पोतानी निस्पृह बुद्धी होवाथी तेमने परम निष्काम ए विशेषणथी संबोधवा योग्य छे। आवी परम निष्काम वृत्तिना धारक एवा श्री सद्गुरु भगवंतना प्रत्यक्ष योगे बोध-परिणामी थयेल एवो जे शीष्य, ते तथारुप उपकारना बदलामां ते प्रभुना चरण समीपे एवी कई वस्तु धरे । मतलब के परम निष्काम एवा ते सद्गुरु भगवंतने न कोई अन्य पदार्थनी स्पृहा छे, के न तेमने योग्य स्वरुप-संवेदनना परम आनंदथी अधिक एवो कोई जगतना विषे पदार्थ छे । आवा प्रकारनो अंतर आत्मार्थ सद्विवेक उपरोक्त एवा ते आत्मार्थी शीष्यने उपलब्धरुप होवा छतां, मात्र शीष्य धर्मे तथारुप उपकारना बदलामां हुं आपना चरण समीपे एवी कई वस्तु धरुं, एवा एक अत्यंत विर्योल्लास परिणामे उत्पन्न थयेला विकल्पने ते सद्गुरु सन्मुख निवेदन करे छे, अने ते साथे तेनुं अंतर समाधान पण तथारुप सद्विवेकना बळे करी पुनः सद्गुरु सन्मुख पोतानी अंतरउर्मी प्रगट करे छे, के हे भगवंत ! हुं आपनी भक्तिमां लीन थईने आपना चरणाधीन कहेतां आपनी आज्ञानुसार वर्तुं, एवो सद्विवेक मने सदा अंतरना विषे छेक कहेतां सर्व प्रकारे स्वरुप-लक्षे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्तो, एवा प्रकारनी याचना विनयपुर्वक करे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक पुनः शीष्यनी अंतिम याचना संबंधी आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

आशिष मागुं आपनी, हवे अंतिम एज कृपाळ।
पुर्ण स्वरुपने पामवा, रहो पुर्णनो अंतर ख्याल॥
ते माटे विभावे थईने उदास, वर्तो दृष्टी द्रव्य अंतर खास।
अगणित वार नमावी शीश, आशिष मागुं ए अहर्नीश॥१८॥

अन्वयार्थ—हे परम कृपाळ गुरुदेव! हवे अंतिम आपनी पासे एज आशिष मागुं छुं, के पुर्णस्वरुपने पामवा पुर्ण एवा वस्तु-स्वभावनो मने अंतरना विषे ख्याल कहेतां लक्ष रहो, अने ते माटे विभाव भावो प्रत्ये औदासीनपणुं थईने अंतरना विषे द्रव्य-दृष्टी मने खास कहेतां मुख्यपणे वर्तो, अने एज आपनी पासे अगणित वार शीश नमावी अहर्नीश आशिष मागुं छुं, अने एज अंतिम याचना करी हे श्री सद्गुरु भगवंत! हुं आपने जय जय कहेतां सदा जयवंत वर्तो एम अंतर-उद्गार पुर्वक वंदन करुं छुं।

विशेषार्थ—पुर्णस्वरुप वितरागत्वने पामवानो सर्व आधार पुर्ण एवा वितराग-स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरता पर ज रहेलो छे, अने तेथी जे जीव सम्यक्‌दृष्टी थाय छे, ते जीवनो मुख्य ध्येय पण तेज कहेतां तथारुप एवी ते दृष्टीने अवलंबीत थवारुप ज होय छे। आम वस्तु-स्थिति होवाथी जे कोई आत्मार्थी जीव शुद्ध सम्यग्दर्शननी उपलब्धीपुर्वक तेना विषयभुत एवी ते दृष्टीने अवलंबीत थाय छे, ते नियमा पुर्णस्वरुप वितरागत्वने पामे छे। आवा प्रकारनुं बोध-विशेष परिणमन उपरोक्त एवा ते शीष्यने सम्यग्दर्शनपुर्वक होवाथी ते तथारुप लक्षे स्वरुप-पुर्णतारुप ध्येयनी अंतर्मुख-सिद्धी अर्थे पोताना मुळ एवा ते अंतर-आशयने श्री सद्गुरु सन्मुख प्रगट करे छे, अने ते माटे शुभाशुभ सर्व विभाव भावो प्रत्ये पोतानुं औदासीनपणुं थईने मुख्य एवी द्रव्य-दृष्टी पोताना अंतर परिणामना विषे वर्तो। आवा प्रकारनी स्वरुप-पुर्णतारुप ध्येयनी अंतरंग भावनाने अवलंबी तथा प्रकारनी परम एवी आशिषनी याचना निमितरुपे श्री सद्गुरुनुं बहुमान लावी तेमना प्रत्ये अति विनयपुर्वक करे छे, अने एज सुपात्र शीष्यनुं प्रशंशवा योग्य एवुं आ उत्तमोत्तम लक्षण छे, अने उपरोक्त त्रणे गाथासुत्रना बोधथी समजवा योग्य पण तेज छे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंतिम उद्देश्य अने ग्रन्थनी समाप्ति

卐

गुरु शीष्य संवाद रुप, बोध अवस्था आठ।
कही क्रमानुसार ते, समजाव्यो परमार्थ ॥१॥
ते उत्तम श्रोताना विषे, पण उत्तम जे जन।
ते अधिकारी झीलतां, बोध थशे स्थिर मन ॥२॥
ते माटे आ ग्रंथ में, आगमना अनुसार।
लख्यो क्षेत्र उज्जैन विषे, अंतर करी विचार ॥३॥
स्वाध्याय तेनो अंतरे, करे स्व-लक्षे नित्य।
तो स्वरुप विचार त्यां, थई पामे समकित ॥४॥
ज्ञान उघाड-शक्ति अने, स्थिरता पण अल्प।
तेथी संक्षेपे लख्यो, ग्रंथ थवा निर्वीकल्प ॥५॥
अक्षरथी पद-योजना, पदथी वाक्यो होय।
वाक्योथी बन्यो ग्रंथ आ, स्व-कृति न तेमां कोय ॥६॥
तथारुप विकल्पनुं, पण थई स्वमां स्थित।
मात्र कर्युं ते ज्ञान में, लावी वस्तु प्रतित ॥७॥
शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन हुं, स्वपर प्रकाशक छुं।
ते लक्षे ध्यानविजय कहे, थऊं स्थिर अंतिम हुं ॥८॥

* समाप्त *

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शुद्धि-पत्र

पेज	लाईन	अशुद्ध	शुद्ध
मुखपृष्ठ	५	ध्यानविजय जी	ध्यानविजयजी
प्रभु-प्रार्थना	१०	अप्रहित	अप्रतिहत
४	४	विपे	विषे
९	९	बोध	ओघ
९	२२	उपदान	उपादान
१२	२	चार	चार बोध
१३	छेल्ली लाईन	सदगुर	सद्गुरु
१५	९	हेतुरुप	हेतुरुप
२०	११	पृथक्तापुवक	पृथक्तापुर्वक
२२	प्रथम लाइन	भावाश्रय	भावाश्रव
२२	१३	दोषानुं	दोषोनुं
२३	१५	एव	एवा
२४	८	कहेता	कहेतां
३०	२३	स्व तरफथी	स्व तरफनी
३३	२०	प्रेरता	प्रेरतां
३४	२	उमरोक्त	उपरोक्त
३९	१४	एज	एज उपरोक्त
४३	५	होवथी	होवाथी
४४	४	कतापणुं	कर्तापणुं
४४	२३	कोई	कोई पण
४९	प्रथम लाइन	वह्या	वह्या
४९	२	वळे	बळे
४९	६	बीधना	बोधना
४९	९	उपलब्धिपणुं	उपलब्धपणुं
५१	२	पुरुषाथ	पुरुषार्थ
५३	छेल्ली लाईन	चोयी	चोथी
५३	"	विशेनुं	विशेषनुं
५७	७	तेने	तेनेज
६१	६	मुढतारुवक	मुढतापुर्वक
६१	गाथामां २	रु	रुपे
६५	६	पैकी	पैकी तेने
६६	५	वतंतो	वर्ततो
६७	१७	जाणतो	जांणवानो
७०	प्रथम लाईन	द्रढ करे	द्रढ करे छे ।
७०	१६	विल्परुप	विकल्परुप
७३	गाथामां२	वोघ	बोध
७५	२	त्रकाळ	त्रीकाळ
७९	गाथामां२	वरतुनो	वस्तुनो
९०	१६	असंगपणे	असंगपणे अने
९५	त्रीजी गाथामां २	तु	तुं
९६	१८	अवे छे	आवे छे
९६	छेल्ली लाईन	होताथी	होवाथी
९७	९	सम्मुख	सन्मुख
१०१		गाथा ॥५॥	गाथा ॥६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पेज	लाईन	अशुद्ध	शुद्ध
१०६	१५	अने अने	अने
१०७	२४	अशुभत्व	अशुभ
११२	२२	ते द्वारा	ते द्वारा ते
११७	२६	अठ्ठावीश	अठ्ठावीस
१२३	४	संक्रातिरुप	संक्रांतिरुप
१२३	९	वीचारमां	वीचारना
१२४	१६	एवुं ज	एवुं जे
१२९	२	बात	वात
१२९	१७	भाव	भान
१३०	१६	पुर्णतानी	पुर्णताना
१३१	५	वच्चे	वच्चे
१३६	छेल्ली लाईन	आळेखवामां	ओळखवामां
१४१	प्रथम लाईन	वाण	वाण
१४४	१३	निष्क्रीय	निष्क्रीय
१४८	२५	करुं छे	करुं छुं
१५२	२१	प्रसंगने	प्रसंगने ते
१५८	गाथामां २	सत्यासत्यानो	सत्यासत्यनो
१९१	३	बात	वात

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ ग्रंथनी ज्ञान प्रभावनामां निचे लखेला

— सज्जनो तरफथी मळेली रकमनी नोंध —

卐

१००१) शा. धनजी केसवजी कच्छ साभराइना हाल मुर्तिजापुर
२५०) सोनाबाई कच्छ चीआसरना हाल मुर्तिजापुर
१०१) पटेल गोविंदभाई त्रीकमाई बडोदरा ताबे गाम सांदरणाना
१०१) चांदमल गांधी सरद स्टोर्स उज्जैन
१५) केसरीचन्दजी जैन मुर्तिजापुर
१०) पदमाबाई पुनमचन्द खामगांव (बेरार)

१४७८)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi